कल्याणकारी शिव

आनंद पयासी

भगवान् शिव पूरब से पश्चिम तथा उत्तर से दक्षिण संपूर्ण क्षेत्र में इसीलिए पूज्य हैं, क्योंकि वे सहज उपलब्ध हैं; और उनके पूजन के लिए किसी बड़े साधन या धन या ज्ञान की आवश्यकता नहीं है। शिव प्रेम के भूखे हैं, आडंबर के नहीं। इसी कारण वे अमीर-गरीब सभी के आराध्य हैं। यदि 'शिव' का पूजन करना है तो जल सभी जगह उपलब्ध है; उनको अर्पित करने के लिए बेलपत्र, मदार का फूल, कनेर के फूल, धतूरे के फूल, धतूरे के फल भी सुगमता से मिल जाते हैं। यानी महादेव शिव का वंदन करना सर्वसुलभ है।

'शिव' का मतलब ही है—सबका कल्याण करनेवाला, पालक, नियंता और कल्याणकारी। इसी उद्देश्य को लेकर यह 'कल्याणकारी शिव' पुस्तक लिखी गई है। यह आपके अंदर की भक्ति को जाग्रत् करेगी और आप शिवमय हो उनके होने का अनुभव कर पाएँगे।

कल्याणकारी शिव

कल्याणकारी शिव

आनंद पयासी
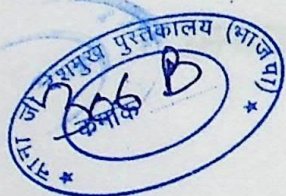
प्रकाशक • ज्ञान विज्ञान एजूकेयर
3639, प्रथम तल
नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज
नई दिल्ली-110002

संस्करण • प्रथम, 2016
मूल्य • तीन सौ रुपए
मुद्रक • आर-टेक ऑफसेट प्रिंटर्स, दिल्ली

KALYANKARI SHIV *by* Anand Payasi ₹ 300.00
Published by GYAN VIGYAN EDUCARE
3639 Netaji Subhash Marg, Darya Ganj, New Delhi-110002
ISBN 978-93-84344-57-3

लेखकीय

मनुष्य का जीवन तभी तक है, जब तक उसमें प्राण है। मनुष्य के जीवन से प्राणवायु निकल जाने पर व्यक्ति का जीवन समाप्त हो जाता है और वह मृत घोषित कर दिया जाता है। इसके बाद उसका शरीर 'शव' कहलाता है। इस प्रकार जीवन की पहचान मनुष्यों में पाए जानेवाले 'ईश तत्त्व के कारण ही होती है, अर्थात् शव में 'ई' के मिल जाने से वह शव + ई= 'शिव' बन जाता है। इसका स्पष्ट आशय यही है कि प्रत्येक जीवन में 'शिव' ईश्वर का तत्त्व अनिवार्य रूप से पाया जाता है। इसी के कारण व्यक्ति सबके हित की, कल्याण की, सुख की तथा उत्कर्ष की बात सोचता और करता है। वह पुरुष-महिला, अमीर-गरीब, ऊँच-नीच, जाति एवं धर्मों के आधार पर किसी से भी भेद नहीं करता है। हर जीव में उसे 'शिव' के स्वरूप का ही दर्शन दिखता है। यही 'ईश' तत्त्व सबमें पाया जाता है, जिसमें यह तत्त्व नहीं मिलता, वह 'शव' के समान हो जाता है। भले ही उसका जीव समाप्त न हुआ हो, लेकिन उसके कार्य मरे हुए व्यक्ति जैसे होंगे। इसलिए जीवन में 'ईश' तत्त्व जगाकर रखने की आवश्यकता है। यह सब शिव की कृपा से ही संभव हो सकता है।

'शिव' का मतलब ही है—सबका कल्याण करनेवाला, पालक, नियंता और कल्याणकारी। इसी उद्देश्य को लेकर यह 'कल्याणकारी शिव' नामक पुस्तक लिखने का प्रयास किया गया है। आशा है, इससे लोगों में शिवत्व जाग्रत् होगा, जिससे जन-जन सबके कल्याण की दिशा में कार्य कर सकेंगे (सबका हित, सबका कल्याण)। सबमें अपनत्व का भाव ही इस जीवन का लक्ष्य और इसकी सफलता है। 'शिव' का यह भाव जीवन में आवश्यक है। समाज में इसी भाव

को फैलाने की आवश्यकता है। इसी कारण 'कल्याणकारी शिव' के रूप में यह एक छोटा सा प्रयास है। जिंदा रहकर 'शव' बने रहना, निजी हित एवं स्वार्थ तक सीमित हो जाना, यह जीवन का उद्देश्य या सफलता की पहचान नहीं है। जीवन की पहचान 'शव' से 'शिव' बन जाने पर है। आशा है, यह छोटा सा प्रयास इस दिशा में आपको सोचकर कार्य करने के लिए प्रेरित करेगा। यही मनुष्य को देवत्व की ओर ले जाने का सच्चा मार्ग है। मानव जीवन अनमोल है। इसीलिए शिवत्व का कोई मोल नहीं हो सकता है।

कहा गया है—'अलंकार प्रियो विष्णु, अभिषेक प्रियः शिव।'

अर्थात्—भगवान् विष्णु को जहाँ अलंकार प्रिय हैं, वहीं भगवान् शिव को अभिषेक बहुत पसंद है।

शिव मंदिरों में ताँबे या पीतल या मिट्टी का एक बरतन (घड़ा या इसी के जैसा बड़ा या छोटा), शिवलिंग के ऊपर लटकाया जाता है। उसके नीचे एक छेद होता है, जिससे शिवलिंग पर पानी की धार अनवरत गिरती रहती है। शिवलिंग का अभिषेक जल, दूध, घी, दही, शहद, नारियल पानी, पंचामृत आदि से करते हैं। अपनी क्षमता अनुसार इसका अनुष्ठान किया जा सकता है, जिनके पास साधन सीमित हैं या निर्धन हैं, वे मात्र जल से अभिषेक करते हैं और शिव का उसी प्रकार आशीर्वाद तथा कृपा उन्हें प्राप्त होती है, जैसे कि दूसरे अभिषेक से होती है।

भगवान् शिव पूरब से पश्चिम तथा उत्तर से दक्षिण संपूर्ण क्षेत्र में इसीलिए पूज्य हैं, क्योंकि वे सहज उपलब्ध हैं तथा पूजन के लिए किसी बड़े साधन या धन या ज्ञान की आवश्यकता नहीं है। शिव प्रेम के भूखे हैं, आडंबर के नहीं। इसी कारण वे अमीर-गरीब सभी के आराध्य हैं। यदि 'शिव' का पूजन करना है तो जल सभी जगह उपलब्ध है तथा बेलपत्र, मदार का फूल, कनेर के फूल, धतूरे के फूल, धतूरे के फल उनको अर्पित किए जाते हैं, जो सहज ही उपलब्ध हैं। इसके साथ ही भगवान् शिव बहुत जल्दी प्रसन्न होकर कष्ट निवारण कर देते हैं, इसी कारण उन्हें औघड़दानी भी कहते हैं। संसार में शिव भक्त बहुतायत में हैं।

भगवान् शिव का स्वरूप कल्याणकारी है, अतः विभिन्न शब्दों-ग्रंथों की जानकारी संकलित कर भगवान् शिव के चरित्र एवं उनकी महिमा के वर्णन का

प्रयास किया गया है। यह छोटा सा प्रयास है, जो भगवान् शिव के चरणों में अर्पित किया जा रहा है। उनकी कृपा से इस दिशा में आगे भी प्रयास करने की इच्छा है, जो शिव कृपा पर निर्भर है। भगवान् शिव सबका कल्याण कर उन्हें सुख-शांति से पूरित कर दें, उनसे यही प्रार्थना है। ग्रंथों के वर्णन में यह कहा गया है कि भगवान् शिव उपासना करनेवालों पर बहुत शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं। निष्काम प्रेमभाव से भजनेवालों पर तो प्रसन्न होते ही हैं, सकाम भाव से (किसी कामना की पूर्ति की इच्छा लेकर) 'अपना मतलब गाँठने के लिए जो शिव की भक्ति और उपासना करते हैं, उन पर भी रीझ जाते हैं और मुँह माँगा वरदान दे देते हैं। इनके हृदय में सदा दया का समुद्र उमड़ता रहता है, सभी पर कृपा करते हैं। इसी करण इन्हें 'भोलेनाथ' भी कहते हैं। गोस्वामी तुलसीदास ने बहुत सुंदर कल्पना करके ब्रह्मा द्वारा माँ पार्वती से शिकायत की है—

बावरो रावरो नाह भवानी!
दानि बड़ो दिन, देत दये बिनु, बेद बड़ाई मानी।
निज घर की बरबात बिलोकहु, हो तुम परम सयानी।
शिव की दई संपदा देखत, श्री सारदा सिहानी।
जिनके भाल लिखी लिपि मेरी, सुख की नहीं निसानी।
तिन रंकन कौ नाक सँवारत, हौ, आयो नकबानी॥
दुःख, दीनता, दुःखी इनके दुःख, जाचकता अकुलानी।
यह अधिकार सौंपिए औरहि भीख भली मैं जानी।
प्रेम प्रसंसा-विनय-व्यंगयुत, सुनि विधि की बर बानी।
तुलसी, मुदित महेस मनहि मन, जगत-मातु मुसुकानी॥

ब्रह्माजी माँ पार्वती से कहते हैं कि महेश (शिव) के काम देख लीजिए। ये बावले नहीं हैं, लेकिन क्या कर रहे हैं, जिनके भाग्य में मैंने कोई संपदा नहीं लिखी थी, उनको अकूत संपदा दे दी है, जिनके सुख नहीं लिखा था, उनको वर देकर अकूत सुखों से भर दिया, जिनको दुःख-दीनता, गरीबी और कष्टों को देना मैंने लिखा था, इसके विपरीत उनको वरदान देकर सुख, अमीरी और हर प्रकार के कष्टों से देकर मुक्त कर दिया है। इसी कारण दुःख और दीनता, भिखारी भाव

इनसे बहुत दुःखी हैं, क्योंकि शिव के वरदान के कारण लोगों के घरों में इनका रहना मुश्किल हो गया है। जहाँ मैंने इनको रहने के लिए लिखा था, इन्होंने वरदान देकर मेरा लिखा ही बदल दिया है, क्योंकि मैंने जो भाग्य में लिखा है, उसका उल्टा हो रहा है। इसलिए मुझसे यह काम वापस लेकर किसी और को सौंप दीजिए, मैं यह काम न करूँगा। इससे अच्छा तो मेरा भीख माँगना है। ब्रह्माजी की प्रेम प्रशंसा तथा विनय और व्यंग्य से भरी बातें सुनकर भगवान् महेश (शिव) मन-ही-मन प्रसन्न हुए तथा जगन्माता पार्वती मुसकराने लगीं।

ऐसे कल्याणकारी शिव की आराधना, पूजन-स्मरण जीवन में सफलता, कष्टों का नाश करनेवाला, सुख-संपदा देनेवाला तथा सपरिवार निरोग रखनेवाला है। सबके लिए ये कल्याणकारी बनें, इसी को ध्यान में रखकर 'कल्याणकारी शिव' शिवचरित्र एवं उनके बारे में तथा विभिन्न ज्योतिर्लिंग के बारे में यह बताने का प्रयास किया गया है, जिससे सभी का कल्याण हो। शिव की कृपा सभी पर आए और संसार में सभी सुखी व निरोगी होकर सफलतापूर्वक अपना जीवन बिताएँ और अंत में शिवधाम को जाएँ।

एक बात और विचारणीय है कि शिव कल्याणकारी कैसे हैं तथा वे सभी ओर से हर जन के पूज्य और आराध्य क्यों हैं ? यह अपने आप में बहुत महत्त्वपूर्ण है। यदि हम 'शिव' परिवार पर ध्यान दें तो यह बात अपने आप स्पष्ट हो जाती है। शिवजी का आभूषण नाग है, सिर पर गंगा प्रवाहित होती है, शिव हिमालय में बर्फ के बीच रहते हैं, शिव का वाहन नंदी (बैल) है, वहीं माँ पार्वती का वाहन शेर है। पुत्र कार्तिकेय का वाहन मोर है तथा पुत्र गणेश का वाहन मूषक (चूहा) है। अब इन सब पर विचार करें तो पाते हैं कि मूषक (चूहा) को साँप खा जाता है, जो शिव के पास है, साँप को मोर खा जाता है, जो कि पुत्र कार्तिकेय के पास है। शिव का वाहन नंदी (बैल) है, जिसे सिंह, जो माँ पार्वती का वाहन है, को खा जाता है, लेकिन शिव परिवार में सब एक-दूसरे के साथ मिलकर रहते हैं। इससे यह शिक्षा मिलती है कि प्रतिकूलताओं और विरुद्ध विचारों के बीच जीवन में सामंजस्य रखने की आवश्यकता है। सभी को साथ में लेकर चलने में ही जीवन सफल हो सकता है। 'शिव', जो स्वयं महाकाल हैं, संपूर्ण नष्ट कर सकते हैं, इतने

शक्तिमान हैं, लेकिन वे सीख दे रहे हैं कि जिसके पास अपार शक्ति है, उसे सदा अपने जीवन में, चरित्र में 'गंगा' के समान जैसी पवित्रता रखने की आवश्यकता है, तभी उसकी शक्ति का जन-कल्याण में सच्चा उपयोग हो सकता है। इसके साथ ही उसे अपने निर्णय ठंडे दिमाग से लेने चाहिए, जैसे शिव हिमालय में हिम (बर्फ) ठंडक के बीच निवास करते हैं, जीवन में अपार शक्ति के साथ अपार शीतलता की जरूरत है।

जीवन में यदि किसी को सुख, शांति, संपन्नता, याति, पद-सम्मान की चाह है तो उसे निश्चित ही सबकुछ शिवभक्ति से प्राप्त हो सकता है, लेकिन इसके लिए उसे शिव की कृपा तथा शिव के परिवार की तरह जीवन में प्रतिकूलताओं के साथ सामंजस्य रखते हुए जीवन की कला को सीखना होगा। यदि उसने यह कला सीख ली है और शिव की भक्ति एवं भजन-पूजन में उसकी आस्था है, तो जीवन में जो भी वह चाहेगा, मिलेगा। जीवन का उद्देश्य ही सबका कल्याण और सुख है। तभी व्यक्ति का जीवन सफल कहा जा सकता है। यह वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना से ही हो सकता है। कल्याणकारी 'शिव' की कृपा के लिए प्रत्येक में हमें शिव का रूप देखने की आवश्यकता है, तभी यह हो सकेगा, इसी में जीवन की सफलता है, अपने अंदर बैठे शिवत्व को जगाने की आवश्यकता है, बिना इसके जीवन में वांछित उपलब्धियाँ नहीं मिल सकती हैं। इससे ही प्रत्येक व्यक्ति, व समाज प्रगति, विकास और सुख-शांति के पथ पर जा सकेगा, आज इसी की आवश्यकता है।

'कल्याणकारी शिव' लेखन का यह प्रयास लोगों में निजहित से हटकर शिवत्व जगाने का प्रयास है। इसके लेखन में 'शिव पुराण', कल्याण शिव से संबद्ध अन्य पुस्तकों तथा रामचरितमानस को आधार बनाया गया है। लेखक, प्रकाशक इन सभी ग्रंथों के आभारी हैं तथा उन्हें सादर प्रणाम है।

मैंने शिवभक्ति के रूप में बारह गीत लिखे हैं—

1. शिव से प्रार्थना
2. शिवभक्त हम
3. शिव वर दो

4. कृपा करो शिव
5. शिव का तीसरा नेत्र
6. शिव का जाप
7. शिव का ध्यान
8. शिव का सहारा
9. शिव से विनय
10. शिवं रूप नर
11. भज लो शिव को
12. शिव आरती

आशा है, प्रबुद्धजन इनके भावों को समझेंगे और ये सभी गीत-भजन प्रार्थना योग्य लगेंगे। इस पुस्तक को लिखने का मात्र उद्देश्य यही है कि सब में शिवत्व का भाव जगे, जिससे जन-जन में सबके हित-कल्याण की भावना जगे और सभी सुखी, संपन्न तथा परोपकारी बनें और सारे जगत् के कल्याण की भावना जाग्रत् हो। सही दिशा में लोगों के कार्य करने और सोचने की भावना जग जाए तो मैं समझूँगा कि मेरी भगवान् शिव से 'कल्याणकारी शिव' के रूप में छोटी सी प्रार्थना सफल हो गई है।

—आनंद पयासी

भोपाल
ज्येष्ठ-2073

अनुक्रम

कल्याणकारी शिव

'कल्याणकारी शिव' में भगवान् शिव के विषय में शिव पुराण ग्रंथ में जो है, उसको ही इसमें वर्णित किया गया है। 'शिव पुराण' एक प्रमुख तथा सुप्रसिद्ध पुराण है, जिसमें परात्पर, परब्रह्म परमेश्वर के 'शिव' (कल्याणकारी) स्वरूप का तात्त्विक विवेचन, रहस्य, महिमा एवं उपासना का सुविस्तृत वर्णन है। इसी भाव को आधार बनाकर विभिन्न पुस्तकों एवं शिव पुराण में जो उल्लिखित है, उसी को लेकर जन-जन में सबके कल्याण और हित का भाव बढ़े तथा भेदभाव मिटे, यही इसके लेखन का उद्देश्य है।

शिवपुराण में कहा गया है कि इस वेद कल्प पुराण का सबसे पहले भगवान् शिव ने ही प्रणयन किया था। विद्येश्वर संहिता, रुद्र संहिता, विनायक संहिता, उमा संहिता, मातृ संहिता, एकादश रुद्र संहिता, कैलास संहिता, शतरुद्र संहिता, कोटि रुद्र संहिता, सहस्रकोटि रुद्र संहिता, वायवीय संहिता तथा धर्म संहिता, इस प्रकार इस पुराण के बारह भेद या खंड हैं। ये बारह संहिताएँ अत्यंत पुण्यमयी मानी गई हैं। इनमें श्लोकों की संख्या निम्न प्रकार से है—

1. विद्येश्वर संहिता में — दस हजार श्लोक हैं।
2. रुद्र संहिता — आठ हजार श्लोक हैं।
3. विनायक संहिता — आठ हजार श्लोक हैं।
4. उमा संहिता — आठ हजार श्लोक हैं।
5. मातृ संहिता — आठ हजार श्लोक हैं।
6. एकादश रुद्र संहिता में — तेरह हजार श्लोक हैं।
7. कैलास संहिता में — छह हजार श्लोक हैं।

8. शत रुद्र संहिता में — तीन हजार श्लोक हैं।
9. कोटिरुद्र संहिता में — नौ हजार श्लोक हैं।
10. सहस्र कोटिरुद्र संहिता में — ग्यारह हजार श्लोक हैं।
11. वायवीय संहिता में — चार हजार श्लोक हैं।
12. धर्म संहिता में — बारह हजार श्लोक हैं।

इस प्रकार मूल शिवपुराण में श्लोक संख्या एक लाख है, परंतु व्यासजी ने इसे 'चौबीस हजार श्लोकों' में संक्षिप्त कर दिया है। पुराणों की क्रम संख्या के विचार से इस शिव पुराण का स्थान चौथा है, इसमें सात संहिताएँ हैं।

यह देवतुल्य पुराण सात संहिताओं में बँटा हुआ है।

1. पहली संहिता — विद्येश्वर संहिता
2. दूसरी संहिता — रुद्र संहिता
3. तीसरी संहिता — शतरुद्र संहिता
4. चौथी संहिता — कोटि रुद्र संहिता
5. पाँचवीं संहिता — उमा संहिता
6. छठी संहिता — कैलास संहिता
7. सातवीं संहिता — वायवीय संहिता है।

श्रोत्रेण श्रवणं तस्य वचसा कीर्तनं तथा।
मनसा मननं तस्य महासाधनमुच्यते॥

(शि.पु. विधे., 3/2120)

कान से भगवान् के नाम-गुण और लीलाओं का श्रवण, वाणी द्वारा उनका, कीर्तन तथा मन के द्वारा उनका मनन—इन तीनों को महान् साधन कहा गया है। तात्पर्य यह है कि महेश्वर का श्रवण, कीर्तन और मनन करना चाहिए, यह श्रुति का वाक्य हम सबके लिए प्रमाणभूत है। इसी साधन से संपूर्ण मनोरथों की सिद्धि प्राप्त होती है। लोग प्रत्यक्ष वस्तु को देखकर आँख से उसमें प्रवृत्त होते हैं, परंतु जिस वस्तु का कहीं भी प्रत्यक्ष दर्शन नहीं होता है, उसे श्रवणेंद्रिय द्वारा जान-सुनकर मनुष्य उसकी प्राप्ति के लिए चेष्टा करता है। अतः पहला साधन श्रवण ही है। गुरु के मुख से तत्त्व को सुनकर श्रेष्ठ बुद्धिवाला विद्वान् पुरुष अन्य साधन-कीर्तन एवं

मनन की सिद्धि करे, इसी साधन के माध्यम से धीरे-धीरे भगवान् शिव का संयोग प्राप्त होता है। पहले सारे अंगों के रोग नष्ट हो जाते हैं, फिर व्यक्ति को सब प्रकार का अलौकिक आनंद भी प्राप्त होकर उसमें विलीन हो जाता है।

(शि.पु. पे.नं. 25)

शिव के पाँच मुख एवं दिनों के स्वामी—

(1) शिवलिंग शिव के निराकार स्वरूप का प्रतीक है।

(2) शिव का साकार विग्रह उनके साकार स्वरूप का प्रतीक होता है।

समस्त अंग आकार—सहित साकार।
सकल अंग आकार से सर्वथा रहित निराकार॥

इस प्रकार शिव के पाँच कार्य हैं—शिव पुराण के अनुसार ब्रह्मा और विष्णु ने भगवान् शिव की स्तुति की तथा उनसे पूछा—प्रभु! सृष्टि आदि पाँच कृत्यों के लक्षण क्या हैं, यह हम दोनों को बताइए।

भगवान् शिव बोले—मेरे कर्तव्यों को समझना अत्यंत गहन है, तथापि कृपापूर्वक इस विषय में बताता हूँ—'सृष्टि,' 'पालन,' 'संहार,' 'तिरोभाव,' 'अनुग्रह', ये पाँच ही मेरे जगत् संबंधी कार्य हैं, जो नित्य सिद्ध हैं। संसार की रचना का जो आरंभ है, उसी को 'सर्ग' या सृष्टि कहते हैं। मुझसे पालित होकर सृष्टि का सुस्थिर रूप से रहना ही उसकी स्थिति है, यही पालन है। उसका विनाश संहार है। प्राणों के उत्क्रमण को 'तिरोभाव' कहते हैं। इन सबसे छुटकारा मिल जाना ही मेरा 'अनुग्रह' है। 'सृष्टि' आदि जो चार कार्य हैं, वे संसार का विस्तार करनेवाले हैं। पाँचवाँ कृत्य 'अनुग्रह' मोक्ष का हेतु है। वह सदा ही मुझमें अचल भाव से स्थिर रहता है। मेरे भक्तजन इन पाँच कृत्यों को पाँच भूतों में देखते हैं। सृष्टि भूतल में, स्थिति जल में, संहार अग्नि में, तिरोभाव वायु में और अनुग्रह आकाश में स्थित है। पृथ्वी से सबकी सृष्टि होती है। जल से सबकी वृद्धि एवं जीवन रक्षा होती है। आग सबको जला देती है। वायु सबको एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाती है और आकाश सबको अनुगृहीत करता है। इन पाँच कृत्यों का भार वहन करने के लिए ही मेरे पाँच मुख हैं। चार दिशाओं में चार मुख हैं और

इनके बीच में पाँचवाँ मुख है। इस प्रकार जीवन और शरीर में परिवर्तन आते हैं। ऋतुओं में परिवर्तन होता है, कार्यों में परिवर्तन होता है, मनुष्य इन्हीं परिवर्तनों के अनुसार अपने जीवन में परिवर्तन लाता है।

तिरोभाव—प्राणों के उत्क्रमण को तिरोभाव कहते हैं।

अनुग्रह—इन सबसे छुटकारा मिल जाना ही शिव का 'अनुग्रह' है, मोक्ष है। मेरे भक्तजन इन पाँचों कृत्यों को पाँचों भूतों में देखते हैं।

सृष्टि—भूतल में स्थिति-जल में, संहार-अग्नि में, तिरोभाव-वायु में और अनुग्रह आकाश में स्थित है। पृथ्वी सबकी सृष्टि होती है। जल से सबकी वृद्धि एवं जीवन-रक्षा होती है। आग सबको जला देती है, वायु सबको एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाती है, और आकाश सबको अनुगृहीत करता है। इन पाँच कृत्यों का भार वहन करने के लिए मेरे पाँच मुख हैं। चार दिशाओं में चार मुख हैं और इनके बीच में पाँचवाँ मुख है।

(शि.पु.)

मुक्षु ब्राह्मण को तो सदा ज्ञान का भी अभ्यास करना चाहिए। धर्म से अर्थ की प्राप्ति होती है, अर्थ से भोग सुलभ होता है। फिर उस भोग से वैराग्य की संभावना होती है। "धर्मपूर्वक उपार्जित धन से जो भोग प्राप्त होता है, उससे एक दिन अवश्य वैराग्य का उदय होता है। धर्म के विपरीत अधर्म से उपार्जित हुए धन के द्वारा जो भोग प्राप्त होता है, उससे भोगों के प्रति आसक्ति उत्पन्न होती है।" मनुष्य धर्म से धन पाता है, तपस्या से उसे दिव्य रूप की प्राप्ति होती है। कामनाओं का त्याग करनेवाले पुरुष के अंतःकरण की शुद्धि होती है। उस शुद्धि से ज्ञान का उदय होता है, इसमें संशय नहीं है।

"सत्य युग आदि में तप को ही प्रशस्त कहा गया है, किंतु कलियुग में द्रव्यसाध्य धर्म (दान आदि) अच्छा माना गया है। सत्ययुग में ध्यान से, त्रेता में तपस्या से और द्वापर में यज्ञ करने से ज्ञान की सिद्धि होती है, परंतु कलयुग में प्रतिमा (भगवद्विग्रह) की पूजा से लाभ होता है। अधर्म हिंसा (दुःख) रूप है और धर्म सुख रूप है। वह सुख एवं अभ्युदय का भागी होता है। दुराचार से दुःख

प्राप्त होता है और सदाचार से सुख। अतः योग और मोक्ष की सिद्धि के लिए धर्म का उपार्जन करना चाहिए।

(शि.पु. पे.नं. 39)

भगवान् 'शिव' ने सात ग्रहों का स्वामी निश्चित किया है। वे सब के सब ग्रह-नक्षत्रों के ज्योतिर्मय मंडल में प्रतिष्ठित हैं। शिव के वार या दिन के स्वामी सूर्य हैं। शांति संबंधी वार के स्वामी 'सोम' हैं। कुमार संबंधी (वार के स्वामी) दिन के अधिपति 'मंगल' हैं। विष्णुवार के स्वामी 'बुध' हैं। ब्रह्माजी के वार के अधिपति 'बृहस्पति' हैं। इंद्रवार के स्वामी 'शुक्र' और यमवार के स्वामी शनैश्वर हैं। अपने-अपने वार की उन देवताओं की पूजा उनके अपने-अपने फल को देनेवाली होती है।

सूर्य आरोग्य और चंद्रमा संपत्ति के दाता हैं। मंगल व्याधियों का निवारण करते हैं, बुध पुष्टि देते हैं। बृहस्पति आयु की वृद्धि करते हैं। शुक्र भोग देते हैं और शनैश्वर मृत्यु का निवारण करते हैं। अन्य देवताओं की भी पूजा का फल देनेवाले भगवान् शिव ही हैं।

(1) सप्तगंगा—गंगा, गोदावरी, कावेरी, ताम्रपणी, सिंधु, सरयू और नर्मदा को सप्तगंगा। ज्योतिष के अनुसार वह समय, जब सूर्य विषुवत् रेखा पर पहुँचता है और दिन-रात दोनों बराबर होते हैं, यह वर्ष में दो बार आता है—

1. एक तो सौर चैत्रमास की नवमी तिथि या अंग्रेजी का 21 मार्च (इक्कीस मार्च)।
2. दूसरा, सौर अश्विन की नवमी तिथि या अंग्रेजी का 22 सितंबर।

(शि.पु. पे.नं. 66)

भगवान शिव की पूजा

भगवान् शिव की पूजा कैसे की जाए, इस विधि को जानना और समझना दोनों ही बहुत आवश्यक है। बिना समुचित विधि के पूजन न कर पाने के कारण प्रयास एवं भजन, पूजन करने के बाद भी मनवांछित फल की प्राप्ति नहीं हो पाती है और जिस उद्देश्य को लेकर पूजन किया जा रहा है, वह फलित नहीं पाता है।

यह पूजन मंत्र इस प्रकार है।

पूजन मंत्र

भवाय भवनाशाय महादेवा धीमहि!
उग्राय उग्रनाशाय शर्वाय शशिमौलिने!

(शि.पु., 20/43)

शिव के आठ नाम कहे गए हैं—

1. ॐ हराय नमः (प्रथम)
2. ॐ महेश्वराय नमः (दूसरा)
3. ॐ शम्भवे नमः (तीसरा)
4. ॐ शूलपाणये नमः (चौथा)
5. ॐ पिनाकघृषे नमः (पाँचवाँ)
6. ॐ शिवाय नमः (छठवाँ)
7. ॐ पशुपतये नमः (सातवाँ)
8. ॐ महादेवाय नमः (आठवाँ)

मुखों के भेद से रुद्राक्ष के चौदह भेद बताए गए हैं। उन रुद्राक्षों को धारण करने के मंत्रों को गिरिराज कुमारी सुनो—(भगवान् शिव)

1. ॐ ह्रीं नमः
2. ॐ नमः
3. ॐ क्लीं नमः
4. ॐ ह्रीं नमः
5. ॐ ह्रीं हुँ नमः
6. ॐ हु नमः
7. ॐ हु नमः
8. ॐ हु नमः
9. ॐ ह्रीं हुँ नमः
10. ॐ ह्रीं नमः
11. ॐ ह्रीं हु नमः

12. ॐ क्रो क्षौ रौ नमः
13. ॐ ह्रीं नमः
14. ॐ नमः

भगवान् शिव ने गिरिराज कुमारी को मुखों के भेद से जो ये चौदह प्रकार के रुद्राक्ष बताए हैं, इन चौदह मंत्रों द्वारा क्रमशः एक से लेकर चौदह मुखवाले रुद्राक्ष को धारण करने का विधान है। साधक को चाहिए कि वह निंदा और आलस्य त्यागकर श्रद्धा-भक्ति से संपन्न हो संपूर्ण मनोरथों की सिद्धि के लिए उक्त मंत्रों द्वारा रुद्राक्ष धारण करें।

दुर्ज्ञेया शाम्भवी माया सर्वेषां प्राणिनामिह।
भक्तं विनार्पितात्मानं तया सम्मोह्यते जगत॥

(शि.पु. रू.सृ. पे.नं. 2/25 88)

अर्थात्—जिसने भगवान् शिव के चरणों में अपने आपको समर्पित कर दिया है, उस भक्त को छोड़कर शेष सारा जगत् उनकी माया से मोहित हो जाता है। (इंद्र के भेजने के बाद भी नारदजी पर कामदेव का प्रभाव नहीं पड़ा था।

(शि.पु.पे.नं. 116)

शिवे भक्तिः शिवे भक्तिः शिवे भक्तिभवे।
अन्यथा शरणं नास्ति वमेव शरण मम॥

अर्थात्—प्रत्येक जन्म में मेरी शिव में भक्ति हो, शिव में भक्ति हो, शिव में भक्ति हो। शिव के सिवा दूसरा कोई मुझे शरण देनेवाला नहीं। महादेव आप ही मेरे लिए शरणदाता हो। इस प्रकार प्रार्थना करके संपूर्ण सिद्धियों के दाता देवेश्वर शिव का पराभक्ति के द्वारा पूजन करें। विशेषतः गले की आवाज से भगवान् को संतुष्ट करें।

(शि.पु.पे.नं., 122)

अर्घ्य मंत्र

रूपं देहि यशो देहि, भोगं देहि च शङ्क।
युक्ति मुक्ति फलं देहि, गृही लार्घ्य नमोऽस्तुते॥

प्रभो शंकर! आपको नमस्कार है, आप इस अर्घ्य को स्वीकार करके मुझे

रूप दीजिए, यश दीजिए, भोग और मोक्ष रूपी फल प्रदान कीजिए।

इसके बाद भगवान् शिव को भाँति-भाँति के उत्तम नैवेद्य अर्पित करें। नैवेद्य के बाद प्रेमपूर्वक आचमन कराएँ। तदनंतर सांगोपांग तांबूल बनाकर शिव को अर्पित करें। फिर पाँच बत्ती की आरती बनाकर भगवान् को दिखाएँ। उसकी संख्या इस प्रकार है—पैरों में चार बार, नाभिमंडल के सामने दो बार, मुख के समक्ष एक बार तथा संपूर्ण अंगों में सात बार आरती दिखाएँ। तत्पश्चात् नाना प्रकार के स्तोत्रों द्वारा प्रेमपूर्वक भगवान् वृषभध्वज की स्तुति करें। तदनंतर धीरे-धीरे शिव की परिक्रमा करें। परिक्रमा के बाद भक्त पुरुष साष्टांग प्रणाम करें तथा भक्तिपूर्वक पुष्पांजलि दें और प्रार्थना करें—'शंकर! मैंने अज्ञान से या जान-बूझकर जो पूजन आदि किया है, वह आपकी कृपा से सफल हो। प्रभु! मैं आपका हूँ, मेरे प्राण सदा आप में लगे हुए हैं, मेरा चित्त सदा आपका चिंतन करता है, ऐसा जानकर हे गौरीनाथ, भूतनाथ! आप मुझ पर प्रसन्न होइए। प्रभो! धरती पर जिनके पैर लड़खड़ा जाते हैं, उनके लिए भूमि ही सहारा है, उसी प्रकार जिन्होंने आपके प्रति अपराध किए हैं, उनके लिए भी आप ही शरणदाता हैं।

पुष्पांजलि मंत्र

अज्ञानाद्यादि वा ज्ञानाधद्यत्पूजादिकं मया।
कृतं तदस्तु सफलं कृपया तब शङ्क॥
तावकस्त्वदरात प्रणास्त्वच्चित्तोऽहं सदा मृड।
इति विज्ञाय गौरीश भूतनाथ प्रसीद मे॥
भूमौ स्खलितपादानां भूमिरेवावलम्बनम्।
त्वार्यजाता पराधानां त्वमेव शरणं प्रभो॥

(अध्याय-13)

विसर्जन

स्वस्थानं गच्छ देवेश परिवारयुतः प्रभो।
पूजाकाले पुनर्नाथ त्वयाऽऽगन्तव्यमादरात॥

अर्थात् देवेश्वर प्रभो! अब आप परिवार सहित अपने स्थान को पधारें। नाथ,

फिर से जब पूजा का समय हो, तब पुनः आप यहाँ सादर पदार्पण करें। इस प्रकार भक्त वत्सल शंकर की बारंबार प्रार्थना करके उनका विसर्जन करें और उस जल को अपने हृदय में लगाएँ तथा मस्तक पर चढ़ाएँ।

ऋषियों तथा दक्ष कन्याओं का वर्णन—

ब्रह्माजी कहते हैं कि हे नारद! भगवान् शंकर की प्रेरणा से अपने शरीर को दो भागों में विभक्त करके मैं दो रूपवाला हो गया। नारद, आधे शरीर से मैं स्त्री और आधे से पुरुष। उस पुरुष ने उस स्त्री के गर्भ से सर्व साधन समर्थ उत्तम जोड़े को उत्पन्न किया। उस जोड़े का, जो पुरुष था, वही स्वायंभुव मनु के नाम से प्रसिद्ध हुआ। स्वायंभुव मनु उच्च कोटि के साधक हुए तथा जो स्त्री हुई, वह शतरूपा कहलाई। वह योगनी एवं तपस्विनी हुई। तात, मनु ने वैवाहिक विधि से अत्यंत सुंदरी शतरूपा का पाणिग्रहण किया और उससे मैथुन जनित सृष्टि उत्पन्न करने लगे। मनु और शतरूपा से दो पुत्र और तीन कन्याएँ उत्पन्न हुईं, उनके नाम थे—(पुत्र)—प्रियव्रत और उत्तानपाद। तीन कन्याओं के नाम थे—(1) आकृति, (2) देवहूति, (3) प्रसूति।

मनु ने इनका विवाह निम्न प्रकार से किया था—

(1) बड़ी पुत्री का विवाह प्रजापति 'रुचि' के साथ किया।

(2) मझली पुत्री देवहूति का विवाह 'कर्दम' के साथ किया।

(3) तीसरी सबसे छोटी पुत्री प्रसूति का विवाह प्रजापति 'दक्ष' के साथ किया।

उनकी संतान परंपराओं से समस्त सचराचर जगत् में व्याप्त हैं। इसके बाद इस प्रकार संतानें हुईं—

(1) रुचि और आकृति के गर्भ से यज्ञ और दक्षिणा नामक स्त्री-पुरुष का जोड़ा उत्पन्न हुआ। यज्ञ और दक्षिणा से बारह पुत्र हुए।

(2) दूसरी पुत्री कर्दम और देवहूति के गर्भ से बहुत सी पुत्रियाँ उत्पन्न हुईं।

(3) तीसरी पुत्री से दक्ष और प्रसूति से चौबीस कन्याएँ उत्पन्न हुईं। उनमें से श्रद्धा आदि तेरह कन्याओं का विवाह दक्ष ने धर्म के साथ कर दिया। जिन तेरह कन्याओं का विवाह दक्ष ने धर्म के साथ किया, उनके नाम इस प्रकार हैं—(1) श्रद्धा, (2) लक्ष्मी, (3) धृति, (4) तृष्टि, (5) पुष्टि

(6) मेघा, (7) क्रिया, (8) बुद्धि, (9) लज्जा, (10) वसु, (11) शांति, (12) सिद्धि, (13) कीर्ति

इनसे छोटी, जो शेष ग्यारह सुलोचना कन्याएँ थीं, उनका विवरण इस प्रकार है—

(1) ख्याति, (2) सती, (3) संभूति, (4) स्मृति, (5) प्रीति, (6) क्षमा, (7) सन्नति, (8) अनसूया, (9) ऊर्जा, (10) स्वाहा, (11) स्वधा।

इनका पाणिग्रहण (विवाह) मुनिश्रेष्ठ साधकों के साथ किया गया, जो इस प्रकार है—

1. ख्याति — भृगु ऋषि के साथ
2. सती — शिव के साथ
3. संभूति — मरीच के साथ
4. स्मृति — अंगिरा ऋषि के साथ
5. प्रीति — पुलस्त्य मुनि के साथ
6. क्षमा — पुलह के साथ
7. सन्नति — क्रतु मुनि के साथ
8. अनसूया — अत्रि मुनि के साथ
9. ऊर्जा — वसिष्ठ मुनि के साथ
10. स्वाहा — अग्नि के साथ
11. स्वधा — पितरों के साथ पाणिग्रहण (विवाह) किया गया।

इनकी ही संतानों से चराचर प्राणियों सहित त्रिलोकी भरी हुई है। इससे स्पष्ट है कि ऋषियों की ही संतान हैं, इनमें आपस में कोई भेद नहीं है, न ही जाति का भेद है, यह सब जाति-भेद व्यक्तियों ने स्वयं बनाया है। न तो कोई अलग उत्पन्न जाति है, न ही कोई ऊँच-नीच है, सभी समान हैं तथा सभी मुनियों की ही संतान हैं। इसीलिए यहाँ वसुधैव कुटुम्बकम् का भाव माना जाता है। यही हमारी संस्कृति की विरासत है, जिसमें सभी समान हैं।

इस प्रकार अंबिका पति महादेवजी की आज्ञा से अपने पूर्व कर्मों के अनुसार बहुत से प्राणी असंख्य श्रेष्ठ द्विजों के रूप में उत्पन्न हुए। कल्प भेद से दक्ष के साठ कन्याएँ बताई गई हैं। उनमें से दस कन्याओं का विवाह उन्होंने धर्म के साथ किया। सत्ताईस कन्याएँ चंद्रमा को ब्याह दीं और विधिपूर्वक तेरह कन्याओं के हाथ दक्ष ने कश्यप के हाथ में दे दिए। नारद, उन्होंने चार कन्याएँ श्रेष्ठ रूप वाले ताक्ष्र्य

(अरिष्टनेमि) को ब्याह दीं तथा भृगु, अंगिरा और कृशाश्व को दो-दो कन्याएँ अर्पित कीं। उन स्त्रियों से उनके पतियों द्वारा बहुसंख्यक चराचर प्राणियों की उत्पत्ति हुई। मुनिश्रेष्ठ, दक्ष ने महात्मा कश्यप को जिन तेरह कन्याओं का विधिपूर्वक दान दिया था, उनकी संतानों से सारा त्रिलोक व्याप्त है। स्थावर और जंगम कोई भी सृष्टि ऐसी नहीं है, जो कश्यप की संतानों से शून्य है। देवता, ऋषि, दैत्य, वृक्ष, पक्षी, पर्वत तथा तृण-लता आदि सभी कश्यप पत्नियों से पैदा हुए हैं। इस प्रकार दक्ष कन्याओं की संतानों से चराचर जगत् व्याप्त है। पाताल से लेकर सत्य लोकपर्यंत समस्त ब्रह्मांड निश्चय ही उनकी संतानों से सदा भरा रहता है, कभी खाली नहीं होता। इस प्रकार भगवान् शंकर की आज्ञा से ब्रह्माजी ने भलीभाँति सृष्टि की रचना की। पूर्वकाल में सर्वव्यापी शंभु ने, जिन्हें तपस्या के लिए प्रकट किया था तथा रुद्रदेव ने त्रिशूल के अग्रभाग पर रखकर जिनकी सदा रक्षा की है, वे ही सती देवी लोकहित का कार्य संपादित करने के लिए दक्ष से प्रकट हुई थीं। उन्होंने भक्तों के उद्धार के लिए अनेक लीलाएँ कीं। इस प्रकार देवी शिवा ही सती होकर भगवान् शंकर से ब्याही गईं, किंतु पिता के यज्ञ में पति का अपमान देखकर उन्होंने अपने शरीर को त्याग दिया और फिर उसे ग्रहण नहीं किया। वे अपने परम पद को प्राप्त हो गईं। फिर देवताओं की प्रार्थना पर वे ही शिवा पार्वती रूप में प्रकट हुईं और घोर तपस्या करके पुनः भगवान् शिव को उन्होंने प्राप्त कर लिया। मुनीश्वर, इस जगत् में उनके अनेक नाम प्रसिद्ध हुए। उनके कालिका, चंडिका, भद्रा, चामुंडा, विजया, जया, जयंती, भद्रकाली, दुर्गा, भगवती, कामाख्या, कामदा, अंबा, मृडानी और सर्वमंगला आदि अनेक नाम हैं, जो भोग और मोक्ष देनेवाले हैं। ये सभी नाम उनके गुण और कर्मों के अनुसार हैं।

मुनिश्रेष्ठ नारद! इस प्रकार मैंने सृष्टिक्रम का तुमसे वर्णन किया है। ब्रह्मांड का यह सारा भाग भगवान् 'शिव' की आज्ञा से मेरे द्वारा रचा गया है। भगवान् शिव को परब्रह्म कहा गया है। मैं, विष्णु तथा रुद्र—ये तीनों देवता गुण-भेद से उन्हीं के रूप बतलाए गए हैं। भगवान् शिव स्वतंत्र परमात्मा हैं, निर्गुण और सगुण भी वे ही हैं।

□

शिव का महामृत्युंजय मंत्र

शिवभक्त शिरोमणि तथा मृत्युंजय विद्या के प्रवर्तक शुक्राचार्य ने कहा कि तात दधीचि, मैं सर्वेश्वर भगवान् शिव का पूजन करके तुम्हें श्रुति प्रतिपादित महामृत्युंजय नामक श्रेष्ठ मंत्र का उपदेश देता हूँ—

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्॥

(शि.पु. पेज.नं. 208)

अर्थात् हम भगवान् त्र्यंबक का यजन (आराधन) करते हैं। त्र्यंबक का अर्थ है—तीनों लोकों के पिता, प्रभावशाली शिव। वे भगवान् सूर्य, सोम और अग्नि तीनों मंडलों के पिता हैं। सत्त्व, रज, तम-तीनों गुणों के महेश्वर हैं। आत्मतत्त्व, विद्यातत्त्व और शिवतत्त्व—इन तीनों तत्त्वों के आह्वानीय, गार्हपत्य और दक्षिणाग्नि इन तीनों अग्नियों के सर्वत्र उपलब्ध होने वाले पृथ्वी, जल एवं तेज इन तीन मूर्त भूतों के त्रिदिव (स्वर्ग) के त्रिभुज के त्रिधारभूत सबके ब्रह्मा, विष्णु और शिव तीनों देवताओं के महान् ईश्वर महादेवजी ही हैं।

सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्—जैसे फलों में उत्तम गंध होती है, उसी प्रकार से भगवान् शिव संपूर्ण भूतों में तीनों गुणों में समस्त कृत्यों में, इंद्रियाँ में, अन्य देवों में और गणों में उनके प्रकाशक सारभूत आत्मा के रूप में व्याप्त हैं, अतएव सुगंधयुक्त एवं संपूर्ण देवताओं के ईश्वर हैं। (यह सुगन्धिम् की व्याख्या है।)

पुष्टिवर्धनम्—अर्थात् उत्तम व्रत का पालन करनेवाले द्विजश्रेष्ठ महामुने नारद! उन अंतर्यामी पुरुष शिव से प्रकृति का पोषण होता है, महत्त्व से लेकर विशेष पर्यंत संपूर्ण विकल्पों की पुष्टि होती है तथा मुझ ब्रह्मा का, विष्णु का,

मुनियों का और इंद्रियों सहित देवताओं का भी पोषण होता है, इसीलिए वे ही 'पुष्टिवर्धनम्' हैं।

उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्—अर्थात् प्रभो! जैसे खरबूजा पक जाने पर लता बंधन से छूट जाता है, उसी तरह मैं मृत्यु रूपी बंधन से मुक्त हो जाऊँ। अमृत पद (मोक्ष से पृथक् न हो अंत।) वे रुद्रदेव अमृत स्वरूप है, जो पुण्यकर्म, तपस्या स्वाध्याय, योग से अथवा ध्यान से उनकी आराधना करता है, उसे नूतन जीवन प्राप्त होता है। इस सत्य के प्रभाव से भगवान् शिव स्वयं ही अपने भक्त को मृत्यु के सूक्ष्म बंधन से मुक्त कर देते हैं, क्योंकि भगवान् ही बंधन और मोक्ष को देनेवाले हैं, ठीक उसी तरह जैसे 'उर्वारुक' अर्थात् खरबूजे की बेल अपने फल को स्वयं ही अपने बंधन में बाँधे रहती है, और पक जाने पर स्वयं ही उसे बंधन से मुक्त कर देती है, यह मृत संजीवनी मंत्र है, जो मेरे मत से सर्वोत्तम है।

(शि.पु. पे.नं. 209)

नंदीश्वर द्वारा शुक्राचार्य का अपहरण और शिव द्वारा उनका निगला जाना, शुक्र का शिवलिंग के रास्ते बाहर निकलना, शिव द्वारा उनका शुक्र नाम रखा जाना, शुक्र द्वारा जपे गए मृत्युंजय मंत्र और शिवाष्टोत्तर शतनामस्तोत्र का वर्णन—

(शि.पु. पे.नं. 395)

व्यासजी ने पूछा—महाबुद्धिमान सनत कुमारजी, जब वह महान् भयंकर एवं रोमांचकारी संग्राम चल रहा था, उस समय त्रिपुरारि शंकर ने दैत्य गुरु शुक्राचार्य को निगल लिया। पिनाकधारी शिव के उदर में जाकर उन महायोगी शुक्राचार्य ने क्या किया था? शंभु की जठराग्नि ने उन्हें जलाया क्यों नहीं? भृगु नंदन बुद्धिमान शुक्र भी तो कल्पांतकालीन अग्नि के समान उग्र तेजस्वी थे। वे शंभु के जठर-पंजर से कैसे निकले? उन्होंने कैसे और कितने काल तक आराधना की थी, जो मृत्यु का शमन करनेवाली पराविद्या प्राप्त हुई थी, वह विद्या कौन सी है, जिससे मृत्यु का निवारण हो जाता है? मुने, लीला बिहारी देवाधिदेव भगवान् शंकर के त्रिशूल से छूटे हुए अंधक को गणाध्यक्षता की प्राप्ति कैसे हुई? तात, मुझे शिव

लीलामृत श्रवण करने की विशेष लालसा है, अतः आप मुझ पर कृपा करके वह सारा वृत्तांत पूर्ण रूप से वर्णन कीजिए।

ब्रह्माजी कहते हैं—अमित तेजस्वी व्यासजी के इन वचनों को सुनकर सनत कुमार शिवजी के चरण-कमलों का स्मरण करके कहने लगे—मुनिवर! भगवान् शंकर के प्रमथों की जब विजय होने लगी, तब अंधक घबराकर शुक्राचार्य की शरण में गया और उसने गिड़गिड़ाकर मृत संजीवनी विद्या के द्वारा मरे हुए असुरों को जीवित करने की प्रार्थना की।

इस पर शुक्राचार्य ने शरणागत धर्म की रक्षा करना उचित समझा। फिर व युद्धस्थल पर गए और आदरपूर्वक विद्या के स्वामी शंकर का स्मरण करके एक-एक कर दैत्यों पर मृत संजीवनी विद्या का प्रयोग करने लगे। उस विद्या का प्रयोग होते ही वे सभी दानववीर एक साथ ही हथियार लिये हुए इस प्रकार उठ खड़े हुए, मानो अभी सोकर उठे हों। शुक्राचार्य के संजीवनी प्रयोग से जब बड़े-बड़े दानव जीवित होकर प्रमथों को बुरी तरह मारने लगे, तब प्रमथों ने जाकर प्रमथेश्वरेश शिव को यह समाचार सुनाया। तब शिवजी ने कहा—नंदिन! तुम अभी तुरंत जाओ और दैत्यों के बीच से द्विजश्रेष्ठ शुक्राचार्य को उसी प्रकार उठा लाओ जैसे बाज लवा को उठा लाता है।

वृषभध्वज के यों कहने पर नंदी साँड़ के समान बड़े जोर से गरजे और तुरंत ही सेना को लाँघकर उस स्थान पर जा पहुँचे, जहाँ भृगुवंश के दीपक शुक्राचार्य विराजमान थे। वहाँ समस्त दैत्य हाथों में पाश, खड्ग, वृक्ष, पत्थर और पर्वतखंड लिये हुए उनकी रक्षा कर रहे थे। यह देखकर बलशाली नंदी ने उन दैत्यों को विक्षुब्ध करके शुक्राचार्य का उसी प्रकार अपहरण कर लिया, जैसे शरभ हाथी को उठा ले जाता है। महाबली नंदी द्वारा पकड़े जाने पर शुक्राचार्य के वस्त्र खिसक गए। उनके आभूषण गिरने लगे और केश खुल गए। तब देव शत्रु दानव उन्हें छुड़ाने के लिए सिंहनाद करते हुए नंदी के पीछे दौड़े और जैसे मेघ जल की वर्षा करते हैं, उसी तरह नंदीश्वर के ऊपर वज्र, त्रिशूल, तलवार, फरसा, बरेठी और गोकन आदि अस्त्रों की उग्र वृष्टि करने लगे। तब उस देवासुर संग्राम के विकराल रूप धारण करने पर गणाधिराज नंदी ने अपने मुख की आग से सैकड़ों शस्त्रों को भस्म कर दिया और उन भृगुनंदन शुक्राचार्य को दबोचकर शत्रुदल को व्यथित

करते हुए शिवजी के समीप आ पहुँचे तथा शीघ्र ही उनसे निवेदन करते हुए बोले, "भगवन्! शुक्राचार्य उपस्थित हैं।" तब भूतनाथ देवाधिदेव शंकर ने पवित्र पुरुष द्वारा प्रदान किए हुए उपहार की भाँति शुक्राचार्य को पकड़ लिया और बिना कुछ कहे उन्हें फल की तरह मुख में डाल लिया। उस समय समस्त असुर उच्च स्वर से हाहाकार करने लगे।

इस प्रकार जब शिव ने शुक्राचार्य को निगल लिया, तब दैत्यों की विजय की आशा जाती रही। दैत्यों का सारा उत्साह जाता रहा। तब अंधक ने महान् दुःख प्रकट करते हुए अपने शूरवीरों को बहुत उत्साहित किया और कहा—वीरो! जो रणांगण छोड़कर भाग जाते हैं, उनकी ख्याति अपयशरूपी कालिमा से मलिन हो जाती है और उन्हें इस लोक तथा परलोक में कहीं भी सुख नहीं मिलता है। दैत्यराज के वचनों को सुनकर दैत्य तथा दानव रणभेरी बजाकर रणभूमि में प्रमथगणों पर टूट पड़े और उन्हें मथने लगे तथा बाण, खड्ग, वज्र सरीखे कठोर पत्थर, भुषंडी, भिंदिपाल, शक्ति, भाले, फरसे, खट्वांग, पट्टिश, त्रिशूल, लकुट और मूसलों द्वारा परस्पर प्रहार करते हुए भयंकर मारकाट मचाने लगे। इस प्रकार अत्यंत घमासान युद्ध हुआ। इसी बीच विनायक, स्कंद, नंदी, सोमनंदी, वीर, नैगमेय और महाबली वैशाख आदि उग्रगणों ने त्रिशूल, शक्ति और बाण समूहों की धुआँधार वर्षा करके अंधक को अंधा बना दिया। इससे प्रमथों तथा असुरों की सेनाओं में कोलाहल मच गया। उस घोर शब्द को सुनकर शंभु के उदर में स्थित शुक्राचार्य आश्रय रहित वायु की भाँति निकलने का मार्ग ढूँढ़ते हुए चक्कर काटने लगे, परंतु उन्हें कोई छिद्र नहीं दिखाई पड़ा, जिससे वे बाहर निकल सकें। तब शुक्राचार्य ने शैव योग का आश्रय लेकर एक मंत्र का जप किया। उस मंत्र के प्रभाव से शंभु के जठर-पंजर से शुक्र रूप में लिंग मार्ग से बाहर निकले, तब उन्होंने शिव को प्रणाम किया। गौरी ने उन्हे पुत्र रूप में स्वीकार कर लिया और विघ्नरहित बना दिया। तदनंतर करुणासागर महेश्वर भृगुनंदन शुक्राचार्य को वीर्य के रास्ते निकला हुआ देखकर बोले—

भृगुनंदन! चूँकि तुम मेरे लिंग मार्ग से शुक्र की तरह निकले हो, इसीलिए अब तुम शुक्र कहलाओगे। जाओ, अब तुम मेरे पुत्र हो गए।

देवेश्वर शंकर के यों कहने पर सूर्य के सदृश्य कांतिमान् शुक्र ने पुनः शिवजी

को प्रणाम किया और हाथ जोड़कर स्तुति करने लगे। शुक्र ने शिवजी की स्तुति करके उन्हें नमस्कार किया और उनकी आज्ञा से पुनः दानवों की सेना में प्रविष्ट हुए।

शंभु के उदर में शुक्र ने जिस मंत्र का जप किया था, उसका वर्णन सुनो। वह मंत्र इस प्रकार है—

"नमस्ते देवेशाय सुरासुर नमस्कृताय, भूतभव्य महादेवाय हरितपिङ्ग-ल लोचनाय, वलाय बुद्धिरुपिणे वैयाघ्रवसनच्छदायारणेयाय। त्रैलोक्यप्रभवे ईश्वराय हराय हरिनेत्राय, युगान्तकरणायानलाय गणेशाय लोकपालाय, महाभुजाय महाहस्तजाय शूलिने महादृष्टिणे काला महेश्वराय अव्ययाय कालरूपिणे, नीलग्रीवाय महोदराय गणाध्यक्षाय सर्वात्मने सर्व भावनाय सर्वगाय मृत्युहन्तने पारियात्र, सुव्रताय ब्रह्मचारिणे वेदान्तगाय तपोऽन्तगाय, पशुपतये व्यङ्गाय शूलपाणये वृषकेतवे हरये जटिने शिखण्डिने लकुरिने महायशये भूतेश्वराय गुहावासिने, वीणापणवतालबते अमराय दर्शनीयाय बाल सूर्य निभाय श्मशानवासिने भगवते उमापतये अरिंदमाय भगस्याक्षिपातिने, पूष्णो दशननाशनाय क्रूरकर्तकाय पाशहस्ताय प्रलयकालाय उल्कामुखायागिकेतवे मुने दीप्ताय विशाम्पतये उन्नयते जनकाय चतुर्थकाय, लोकसत्तमाय वामदेवाय वागदक्षिणयाय वामतो भिक्षवे भिक्षुरुपिणे जटिने स्वयं जदिलाय शुक्रहस्त प्रतिस्भकाय वसूनां स्तम्भकाय क्रतवे क्रतुकराय कालाय, मेघाविने मधुकराय चलाय वानस्पत्याय वाजसनेति समाश्रम पूजिताय जगदधात्रे जगत्कत्रे, पुरुषाय शाश्वताय ध्रुवाय धर्माध्यक्षाय त्रिवर्त्मने भूतभावनाय त्रिनेत्राय बहुरूपाय, सूर्यायु समप्रभाय देवाय सर्वतर्यनिनादिने सर्वबाधा विमोचनाय बन्धनाय सर्वधारिणे धमोन्तमाय पुष्पदन्ताद्यविभागाय मुखाय सर्वहराय हिरणश्रवसे द्वारिणे भीमाय भीमपराक्रमाय ॐ नमो नमः।

अर्थात् ॐ जो देवताओं के स्वामी, सुर-असुर द्वारा वंदित, भूत और भविष्य के महान् देवता, हरे और पीले नेत्रों से युक्त, महाबली, बुद्धि-स्वरूप, बाघंबर धारण करनेवाले, अग्निस्वरूप, त्रिलोकी के उत्पत्ति स्थान, ईश्वर, हर, हरिनेत्र, प्रलयकारी, अग्निस्वरूप, गणेश, लोकपाल, महाभुज, महास्त, त्रिशूल धारण करनेवाले, बड़ी-बड़ी दाढ़ोंवाले, काल-स्वरूप महेश्वर, अविनाशी, कालरूपी, नीलकंठ, महोदर, गणाध्यक्ष, सर्वात्मा, सबको उत्पन्न करनेवाले, सर्वव्यापी, मृत्यु को हरानेवाले, पारियात्र पर्वत पर उत्तम व्रत धारण करनेवाले ब्रह्मचारी, वेदांत प्रतिपाद्य, तप की

अंतिम सीमा तक पहुँचनेवाले, पशुपति, विशिष्ट अंगोंवाले, शूलपाणि, वृषभध्वज, पापाहारी, जटाधारी, शिखंड धारण करनेवाले, दंडधारी, महायशस्वी, भूतेश्वर, गुहा में निवास करनेवाले, वीणा और पणव पर ताल लगानेवाले, अमर दर्शनीय, बाल सूर्य सरीखे रूपवाले, श्मशानवासी, ऐश्वर्यशाली, उमापति, शत्रुदमन, भग के नेत्रों को नष्ट कर देनेवाले, पूषा के दाँतों के विनाशक, क्रूरतापूर्वक संहार करनेवाले, पाशधारी, प्रलयकाल रूप, उल्कामुख, अग्निकेतु, मननशील, प्रकाशमान, प्रजापति, ऊपर उठानेवाले, जीवों को उत्पन्न करनेवाले, तुरीय तत्त्व रूप, लोकों में सर्वश्रेष्ठ, वामदेव, वाणी के चतुरतारूप, वाममाग्र में भिक्षु रूप, भिक्षुक, जटाधारी, जटिल-दुराराध्य, इंद्र के हाथ को स्तंभित करनेवाले, यज्ञ स्वरूप, यज्ञकर्ता, काल मेधावी, मधुकर, चलने-फिरने वाले, वनस्पति का आश्रय लेनेवाले, बाजसन नाम से संपूर्ण आश्रमों द्वारा पूजित, जगद्धाता, जगत्कर्ता, सर्वांतर्यामी, सनातन, ध्रुव, धर्माध्यक्ष, भूः भवः स्वः—इन तीनों लोकों में विचरनेवाले, भूतभावन, त्रिनेत्र, बहुरूप, दस हजार सूर्यों के समान प्रभावशाली महादेव, सब तरह के बाजे बजानेवाले, संपूर्ण बाधाओं से विमुक्त करनेवाले, बंधनस्वरूप, सबको धारण करनेवाले, उत्तम धर्म रूप, पुष्पदंत, विभाग रहित मुख्य रूप, सबका हरण करनेवाले, सुवर्ण के समान दीप्त कीर्तिवाले, मुक्ति के द्वारा-स्वरूप, भीम तथा भीम पराक्रमी हैं, उन्हें नमस्कार है, नमस्कार है।

इसी श्रेष्ठ मंत्र का जप करके शुक्र (शुक्राचार्य) शंभु के जठर-पंजर से लिंग के रास्ते उत्कंट वीर्य की तरह निकले थे। उस समय गौरी ने उन्हें पुत्र रूप में अपनाया और जगदीश्वर शिव ने अजर-अमर कर दिया (बना दिया), तब वे दूसरे शंकर के सदृश शोभा पाने लगे। तीन हजार वर्ष व्यतीत होने के पश्चात् वे ही वेद निधि मुनिवर शुक्र पुनः इस भूतल पर महेश्वर से उत्पन्न हुए। उस समय उन्होंने धैर्यशाली एवं तपस्वी दानवराज अंधक को देखा। उसका शरीर सूख गया था और वह त्रिशूल पर लटका हुआ, पर महेश्वर शिव का ध्यान कर रहा था। अंधक भगवान् शिव के इस प्रकार एक सौ आठ नामों का स्मरण करते हुए जाप कर रहा था। □

शिव के नामों का स्मरण

महादेवं विरुपाक्ष चन्द्रार्घकृत शेखरम्। अमृतं शाश्वतं स्थाणुं नीलकण्ठ पिनाकिनम्॥
वृषभाक्षं महाज्ञेयं पुरुषं सर्वकामदम्। कामारि कामदहन कामरूपं कपर्दिनम्॥
विरूपं गिरिशं भीमं सृक्किणं रक्तवाससम्। योगिनं काल दहनं त्रिपुरघनं कपालिनम्॥
गूढवतं गुप्तमन्त्र गम्भीर भावगोचरम्। आणि माधिगुणाधार त्रिलोकैश्वर्यदायकम्॥
वीरं वीरहणं घोरं विरूपं मासलं पटुम्। महामांसादमुन्मतं भैरवं वै महेश्वरम्॥
त्रैलोक्य द्रावणं लुब्धं लुब्धकं यज्ञसूदनम्। कृत्तिकानां सुतैयुक्त मुन्मतं कृत्तिवाससम्।
गजकृति परीधानं क्षुब्धं भुजग भूषणम्। दत्तालम्बं च वेतालं घोरं शकिनिपूजितम्॥
अघोरं घोर दैत्यघनं घोर घोषं वनस्पतिम्। भस्माङ्ग जटिलं शुद्धं मेरुण्डशतसेवितम्॥
भूतेश्वर भूतनाथं पञ्चभूताश्रितं खगम्। क्रोधितं निष्ठुरं चण्डं चण्डीशं चण्डिकाप्रियम्॥
चण्डतुण्डं गरुत्मन्तं निस्त्रिशं शवभोजनम्। लेलिहानं महारौद्रं मृत्युं मृत्योरगोचरम्॥
मृत्योर्मृत्युं महासेनं श्मशानाराण्यलासिनम्। रागं विरागं रागान्धं वीतरागं शतार्चिषम्॥
सत्वं रजस्त मोधर्ममधर्म वासवानुजम्। सत्यंत्व सत्यं सद्रूपमसद्रूपम हेतुकम्॥
अर्धनारीश्वरं भानुं भानुकोटिशतप्रभम्। यज्ञं यज्ञपति रुद्रमीशानं वरदं शिवम्॥
अष्टोत्तरशतं ह्येतन्मूर्तीनां परमात्मनः। शिवस्यदानवो ध्यायन् मुक्तस्तस्मान्यमहाभयात्॥

वह शिव के 108 नामों का इस प्रकार जप कर रहा था—

1. **महादेव** — देवताओं में महान्।
2. **विरुपाक्ष** — विकराल नेत्रवाले।
3. **चंद्रार्धकृत शेखर** — मस्तक पर अर्धचंद्र धारण करनेवाले।
4. **अमृत** — अमृत स्वरूप।

5. शाश्वत — सनातन।
6. स्थाणु — समाधिस्थ होने पर ठूँठ के समान स्थिर।
7. नीलकंठ — गले में नील चिह्न धारण।
8. पिनाकी — पिनाक नामक धनुष धारण करनेवाले।
9. वृषभाक्ष — वृभष के नेत्र सरीखे विशाल नेत्रवाले।
10. महाज्ञेय — 'महान्' रूप से जानने योग्य।
11. पुरुष — अंतर्यामी।
12. सर्वकादम — संपूर्ण कामनाओं को पूर्ण करनेवाले।
13. कामारि — कामदेव के शत्रु।
14. कामदहन — कामदेव को दग्ध करनेवाले।
15. कामरूप — इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले।
16. कपर्दी — विशाल जटाओंवाले।
17. विरूप — विकराल।
18. गिरिश — गिरिवर कैलास पर शयन करनेवाले।
19. भीम — भयंकर रूपवाले।
20. सृक्की — बड़े-बड़े जबड़ोंवाले।
21. रक्तवासा — लाल वस्त्रधारी।
22. योगी — योग के ज्ञाता।
23. काल दहन — काल को भस्म कर देनेवाले।
24. त्रिपुरघ्न — त्रिपुरों के संहारकर्ता।
25. कपाली — कपाल धारण करनेवाले।
26. गूढव्रत — जिनका व्रत प्रकट नहीं होता।
27. गुप्तमंत्र — गोपनीय मंत्रोंवाले।
28. गंभीर — गंभीर स्वभाववाले।
29. भावगोचर — भक्तों की भावना के अनुरूप प्रकट होनेवाले।
30. आणिमादिगुणाधार — अणिमा आदि सिद्धियों के अधिष्ठान।

31. **त्रिलोकेश्वर्यदायक**	—	त्रिलोकी का ऐश्वर्य प्रदान करनेवाले।
32. **वीर**	—	बलशाली।
33. **वीरहंता**	—	शत्रुवीरों को मारनेवाले।
34. **घोर**	—	दुष्टों के लिए भयंकर।
35. **विरूप**	—	विकट रूप धारण करनेवाले।
36. **मांसल**	—	मोटे-ताजे शरीरवाले।
37. **पटु**	—	निपुण।
38. **महामांसाद**	—	श्रेष्ठफल का गूदा खानेवाले।
39. **उन्मत्त**	—	मतवाले।
40. **भैरव**	—	काल भैरव स्वरूप।
41. **महेश्वर**	—	देवेश्वरों में भी श्रेष्ठ।
42. **त्रैलोक्यद्रावण**	—	त्रिलोकी का विनाश करनेवाले।
43. **लुब्ध**	—	स्वजनों के लोभी।
44. **लुब्धक**	—	महाव्याघ्र स्वरूप।
45. **यज्ञसूदन**	—	दक्ष-यज्ञ के विनाशक।
46. **कृत्तिकासुतयुक्त**	—	कृत्तिकाओं के पुत्र (स्वामी कार्तिक) से युक्त।
47. **उन्मत्त**	—	उन्मत्त का सा वेष धारण करनेवाले।
48. **कृत्तिवासा**	—	गजासुर के चमड़े को ही वस्त्र रूप धारण करनेवाले।
49. **गजकृत्तिपरिधान**	—	हाथी का चर्म लपेटनेवाले।
50. **क्षुब्ध**	—	भक्तों का कष्ट देखकर क्षुब्ध (दुःखी) हो जानेवाले।
51. **भुजंगभूषण**	—	सर्पों को भूषण रूप में धारण करनेवाले।
52. **दत्तालंब**	—	भक्तों के अवलंब दाता।
53. **बेताल**	—	वेताल स्वरूप।
54. **घोर**	—	घोर।

55. शाकिनीपूजित — शाकिनियों द्वारा समाराधित।
56. अघोर — अघोर पथ के प्रवर्तक।
57. घोर दैत्यघ्न — भयंकर दैत्यों के संहारक।
58. घोरघोष — भीषण शब्द करनेवाले।
59. वनस्पति — वनस्पति स्वरूप।
60. भस्माङ्ग — शरीर में भस्म रमानेवाले।
61. जटिल — जटाधारी।
62. शुद्ध — परम-पावन।
63. मेरुण्डशतसेवित — सैकड़ों मेरुंड नामक पक्षियों द्वारा सेवित।
64. भूतेश्वर — भूतों के अधिपति।
65. भूतनाथ — भूतगणों के स्वामी।
66. परभूताक्षित — परभूतों को आश्रय देनेवाले।
67. खग — गगन विहारी।
68. क्रोधित — क्रोधयुक्त।
69. निष्ठुर — दुष्टों पर कठोर व्यवहार करनेवाले।
70. चंड — प्रचंड पराक्रमी।
71. चंडीश — चंडी के प्राणनाथ।
72. चंडिकाप्रिय — चंडिका के प्रियतम।
73. चंड तुंड — अत्यंत कुपित मुखवाले।
74. गरुत्मान् — गरुड़ स्वरूप।
75. निस्त्रिंश — खड्ग स्वरूप।
76. शव भोजन — शव का भोग लगानेवाले।
77. लेलिहान — क्रुद्ध होने पर जीभ लपलपानेवाले।
78. महारौद्र — अत्यंत भयंकर।
79. मृत्यु — मृत्यु स्वरूप।
80. मृत्योरगोचर — मृत्यु की भी पहुँच से परे।
81. मृत्योर्मृत्यु — मृत्यु के भी काल।

82. महासेन	—	विशाल सेनावाले कार्तिकेय स्वरूप।
83. श्मशानारण्यवासी	—	श्मशान एवं अरण्य में विचरनेवाले।
84. राग	—	प्रेम स्वरूप।
85. विराग	—	आसक्ति रहित।
86. रागांध	—	प्रेम में मस्त रहनेवाले।
87. वीतराग	—	वैरागी।
88. शतार्चि	—	तेज की असंख्य चिनगारियों से युक्त।
89. सत्त्व	—	सत्त्वगुण रूप।
90. रजः	—	रजोगुणरूप।
91. तमः	—	तमोगुणरूप।
92. धर्म	—	धर्म स्वरूप।
93. अधर्म	—	अधर्म रूप।
94. वासवानुज	—	इंद्र के छोटे भाई उपेंद्र स्वरूप।
95. सत्य	—	सत्य रूप।
96. असत्य	—	सत्य से भी परे।
97. सद्रूप	—	उत्तम रूपवाले।
98. असद्रूप	—	वीभत्स रूपधारी।
99. अहेतुक	—	हेतु रहित।
100. अर्धनारीश्वर	—	आधा पुरुष और आधा स्त्री का रूप धारण करनेवाले।
101. भानु	—	सूर्य स्वरूप।
102. भानु कोटिशतप्रभ	—	कोटिशत सूर्यों के समान प्रभावशाली।
103. यज्ञ	—	यज्ञ स्वरूप।
104. यज्ञपति	—	यज्ञेश्वर।
105. रुद्र	—	संहारकर्ता।
106. ईशान	—	ईश्वर।
107. वरद	—	वरदाता।
108. शिव	—	कल्याण स्वरूप।

परमात्मा शिव की इन 108 मूर्तियों का ध्यान करने से वह दानव उस महान् भय से मुक्त हो गया। प्रसन्न हुए जटाधारी शंकर ने उसे मुक्त करके उस त्रिशूल के अग्रभाग से उतार लिया और दिव्य अमृत की वर्षा से अभिषिक्त कर दिया। इस प्रकार अंधक का कल्याण कर दिया।

(शि.पु. पे. नं. 401)

----★----

शिवजी के महाकाल आदि दस अवतारों तथा ग्यारह रुद्र अवतारों का वर्णन

शिवजी का पहला अवतार 'महाकाल' नाम से प्रसिद्ध हुआ, जो सत्पुरुषों को भोग और मोक्ष प्रदान करनेवाला है।

इस अवतार की शक्ति भक्तों की मनोवांछा पूर्ण करनेवाली महाकाली है। शिव के अवतार तथा शिव-शक्ति की देवियों का वर्णन इस प्रकार है—

अवतार		**शिवाशक्ति मनोवाच्छा पूर्ण करनेवाली देवी का नाम**
पहला महाकाल	—	महाकाली—भोग और मोक्षदाता।
दूसरा तार नामक अवतार	—	तारादेवी—भय-मुक्ति प्रदाता तथा सेवकों के लिए सुखदाता।
तीसरा बाल भुवनेश	—	बाला भुवनेश्वरी—सज्जनों को सुख देनेवाली।
चौथा षोड्ष श्री विद्येश	—	षोड्शी श्री विद्येश—भोग मोक्ष प्रदायक।
पाँचवाँ भैरव अवतार की शक्ति	—	भैरवी गिरिजा, जो उपासकों को अभीष्ट दायिनी हैं।
छठवाँ शिवावतार 'छिन्नमस्तक'	—	'छिन्नमस्तक युक्त नाम गिरिजा का है, जो भक्त कामदा प्रदाता है।
सातवाँ शिवावतार 'धूमवान्'	—	धूमावती शिव उपासकों की लालसा

पूर्ण करनेवाली हैं।

आठवाँ शिवावतार-बगलामुख — बगलामुखी शक्ति महान् आनंददायिनी।

नौवाँ शिवावतार मातङ्ग — शर्वाणी मातंग संपूर्ण अभिलाषाओं को पूर्ण करनेवाली हैं।

दसवाँ शिवावतार, कमल-कमला — भक्तों का सर्वथा पालन करनेवाली गिरिजा कमला कहलाईं।

यही शंकर के दस अवतार थे तथा उनकी शक्तियाँ थीं। ये सबके सब भक्तों तथा सत्पुरुषों के लिए सुखदायक तथा भोग मोक्ष के प्रदाता हैं। जो लोग शिव के इन दस अवतारों की निर्विकार भाव से सेवा करते हैं, उन्हें नित्य नाना प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं।

———★———

ग्यारह रुद्र अवतार

देवताओं के पिता कश्यपजी ने शिव की तपस्या की, तब महेश्वर प्रगट होकर बोले, 'वर माँगो'। उन महेश्वर को देखते ही प्रसन्न बुद्धिवाले देवताओं के पिता कश्यपजी हर्षमग्न हो गए और हाथ जोड़कर उनके चरणों में नमस्कार करके स्तुति करते हुए बोले—महेश्वर! मैं सर्वथा आपका शरणागत हूँ। स्वामिन्! देवताओं के दुःख का विनाश करके मेरी अभिलाषा पूर्ण कीजिए! देवेश मैं पुत्रों के दुःख से विशेष दुःखी हूँ, अतः ईश मुझे सुखी कीजिए; क्योंकि आप देवताओं के सहायक हैं। नाथ! महाबली दैत्यों ने देवताओं और यक्षों को पराजित कर दिया है, इसीलिए शंभो, आप मेरे पुत्र रूप में प्रकट होकर देवताओं के लिए अन्नदाता बनिए।

भगवान् शंकर उनसे 'तथेति' 'ऐसा ही होगा', कहकर अंतर्धान हो गए। तदनंतर भगवान् शंकर अपना वचन सत्य करने के लिए कश्यप द्वारा सुरभि के पेट से ग्यारह रूप धारण करके प्रकट हुए। उनके नाम रखे गए—1. कपाली, 2. पिङ्गल, 3. भीम, 4. विरुपाक्ष, 5. विलोहित, 6. शास्ता, 7. अजपाद, 8. अहिर्बुधन्य, 9. शंभु, 10. चंड, 11. भव।

(शि.पु. पे.नं. 443)

ये सभी ग्यारहों रुद्र सुरभि के पुत्र कहलाते हैं। ये सुख के आवास स्थान हैं तथा देवताओं की कार्य सिद्धि के लिए शिवरूप में उत्पन्न हुए हैं।

ये कश्यपनंदन वीरवर रुद्र महान् बल पराक्रम संपन्न थे, इन्होंने संग्राम में देवताओं की सहायता करके दैत्यों का संहार कर डाला। इन्हीं रुद्रों की कृपा से इंद्र आदि देवगण दैत्यों को जीतकर निर्भय हो गए।

(शि.पु. पे.नं. 443)

———★———

कोटिरुद्र संहिता

द्वादशज्योतिर्लिंगों तथा उनके उपलिंगों का वर्णन एवं उनके दर्शन-पूजन की महिमा

यो धत्ते निजमाययैव भुवनाकारं विकारोज्झितो।
यस्याहुः करुणाकटाक्षविभवो स्वर्गापवर्गाभिधौ॥
प्रत्यग्बोध सुखाद्वयं हृदिसदा पश्यन्ति यं योगिन।
स्तस्मै शैलसुताञ्चिताद्धिवपुषे शश्वन्नेमस्तेजसे॥

जो निर्विकार होते हुए भी अपनी माया में ही विराट् विश्व का आकार धारण कर लेते हैं, स्वर्ग और अपवर्ग (मोक्ष) जिनके कृपा कटाक्ष के ही वैभव बताए जाते हैं तथा योगीजन जिन्हें सदा अपने हृदय के भीतर अद्वितीय आत्मज्ञानानंद स्वरूप में देखते हैं, उन तेजोमय भगवान् शंकर को, जिनका आत्म-शरीर शैल राजकुमारी पार्वती से सुशोभित है, निरंतर मेरा नमस्कार है।

कृपाललित वीक्षणं स्मितमनोतवम्त्राम्बुजं।
शशा लयोज्ज्वलं शामितघोरतापत्रयम्॥
करोतु किमति स्फुरत्परमसौख्यसच्चिद्वपु।
धराधरसुताभुजोद्वलयितं महो मङ्गलम्॥

जिसकी कृपापूर्ण चितवन बड़ी ही सुंदर है, जिसका मुखारविंद मंद मुसकान की छटा से अत्यंत मनोहारी दिखाई देता है, जो चंद्रमा की कला से परम उज्ज्वल है, जो आध्यात्मिक आदि तीनों तापों को शांत कर देने में समर्थ है, जिसका स्वरूप

सच्चिन्मय एवं परमानंदरूप से प्रकाशित होता है तथा जो गिरिराजनंदिनी पार्वती के भुजपाश से आवेष्टित है, यह शिव नामक अनिर्वचनीय तेज पुंज सबका मंगल करे।

सौराष्ट्रे सोमनाथं च श्री शैले मल्लिकार्जुनम्।
उज्जनियन्यां महाकाल ओंकारे परमेश्वरम्॥
केदारं हिमवत्पृष्ठे डाकिन्यां भीम शंकरम्।
वाराण्स्यां च विश्वेशं त्र्यम्बकं गौतमीतटे॥
वैद्यनाथं चिताभूमि नागेश दारुकावने।
सेतुबन्धे च रामेशं घुश्मेशं तु शिवालये॥
द्वादशैतानि नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत।
सर्वपापैर्विनिर्मुक्तः सर्वसिद्धिफलं लभेत॥

(शि.पु. कोटि.सं. 1/21-24 पे.नं. 479)

---★---

शिवजी के द्वादश ज्योतिर्लिंगावतार

1. सौराष्ट्र में — सोमनाथ
2. श्रीशैल पर — मल्लिकार्जुन
3. उज्जयिनी में — महाकाल
4. ओंकार में — अमरेश्वर
5. हिमालय पर — केदारनाथ
6. डाकिनी में — भीमशंकर
7. काशी में — विश्वनाथ
8. गोमती के तट पर — त्र्यंबकेश्वर
9. चिताभूमि में — बैद्यनाथ
10. दारुका वन में — नागेश्वर
11. सेतुबंध पर — रामेश्वर
12. शिवालय में — घुश्मेश्वर

□

शिव के ज्योतिर्लिंगों की कथा

प्रथम ज्योतिर्लिंग सोमनाथ के प्रादुर्भाव की कथा और उसकी महिमा

ज्योतिर्लिंगों में सबसे पहले सोमनाथ का नाम आता है। प्रजापति दक्ष ने अपनी अश्विनी आदि सत्ताईस कन्याओं का विवाह चंद्रमा के साथ किया था। चंद्रमा को स्वामी के रूप में पाकर वे दक्ष कन्याएँ विशेष शोभा पाने लगीं तथा चंद्रमा भी उन्हें पत्नी के रूप में पाकर निरंतर सुशोभित होने लगे। सभी पत्नियों में रोहिणी नाम की पत्नी चंद्रमा को सबसे अधिक प्रिय थी। उतनी दूसरी पत्नियाँ कदापि प्रिय नहीं थीं, इससे दूसरी पत्नियों को बड़ा दुःख हुआ। वे अपने पिता की शरण में गईं, अपने दुःख को पिता से निवेदित किया। यह सब सुनकर दक्ष भी दुःखी हो गए और चंद्रमा के पास आकर शांतिपूर्वक बोले।

कलानिधे! तुम निर्मल कुल में उत्पन्न हुए हो। तुम्हारे आश्रय में रहनेवाली जितनी स्त्रियाँ हैं, उन सबके प्रति तुम्हारे मन में न्यूनाधिक भाव क्यों है ? तुम किसी को अधिक और किसी को कम प्यार क्यों करते हो? अब तक जो किया, सो किया, अब आगे फिर ऐसा विषमतापूर्ण बरताव तुम्हें नहीं करना चाहिए, क्योंकि उसे नरक देनेवाला बताया गया है।

अपने दामाद चंद्रमा से स्वयं ऐसी प्रार्थना करके प्रजापति दक्ष घर को चले गए। उन्हें पूर्ण निश्चय हो गया था कि अब फिर आगे ऐसा नहीं होगा, पर चंद्रमा ने प्रबल भावी से विवश होकर उनकी बात नहीं मानी। वे 'रोहिणी' पर इतने आसक्त हो गए थे कि दूसरी किसी पत्नी का कभी आदर नहीं करते थे। इस बात को सुनकर दक्ष फिर स्वयं आकर चंद्रमा को उत्तम नीति से समझाने तथा न्यायोचित बरताव के लिए प्रार्थना करने लगे। चंद्रमा! सुनो, मैं पहले अनेक बार तुमसे प्रार्थना कर चुका हूँ, फिर भी तुमने मेरी बात नहीं मानी। इसलिए आज शाप देता हूँ कि

तुम्हें 'क्षय' का रोग हो जाए।

दक्ष के इतना कहते ही क्षण भर में चंद्रमा क्षय रोग से ग्रस्त हो गए। उनके क्षीण होते ही उस समय सब ओर महान् हाहाकार मच गया। सब देवता और ऋषि कहने लगे कि हाय-हाय! अब क्या करना चाहिए, चंद्रमा कैसे ठीक होंगे? इस प्रकार दुःख में पड़कर वे सब लोग विह्वल हो गए। चंद्रमा ने इंद्र आदि सब देवताओं तथा ऋषियों को अपनी अवस्था बताई की। तब इंद्र आदि देवता तथा वसिष्ठ आदि ऋषि ब्रह्माजी की शरण में गए।

उनकी बात सुनकर ब्रह्माजी ने कहा—देवताओ! जो हुआ, सो हुआ। अब वह निश्चय ही बदल नहीं सकता। अतः उसके निवारण के लिए तुम्हें एक उपाय बताता हूँ। आदरपूर्वक सुनो, चंद्रमा देवताओं के साथ प्रभास नामक शुभ क्षेत्र में जाएँ और वहाँ मृत्युंजय मंत्र का विधिपूर्वक अनुष्ठान करते हुए भगवान् शिव की आराधना करें। अपने सामने शिवलिंग की स्थापना करके वहाँ चंद्रदेव नित्य तपस्या करें। इससे प्रसन्न होकर शिव उन्हें क्षयरहित कर देंगे।

तब देवताओं तथा ऋषियों के कहने पर ब्रह्माजी की आज्ञा के अनुसार चंद्रमा ने वहाँ छह महीने तक निरंतर तपस्या की, मृत्युंजय मंत्र से भगवान् वृषभध्वज का पूजन किया। दस करोड़ मंत्र का जप और मृत्युंजय का ध्यान करते हुए चंद्रमा वहाँ स्थिर चित्त होकर लगातार खड़े रहे। उन्हें तपस्या करते देख भक्त वत्सल भगवान् शंकर प्रसन्न हो, उनके सामने प्रकट हो गए और अपने भक्त चंद्रमा से बोले।

चंद्रदेव! तुम्हारा कल्याण हो, तुम्हारे मन में जो अभीष्ट हो, वह वर माँगो! मैं प्रसन्न हूँ। तुम्हें संपूर्ण उत्तम वर प्रदान करूँगा।

देवेश्वर! यदि आप प्रसन्न हैं, तो मेरे लिए क्या असाध्य हो सकता है, तथापि प्रभो! आप मेरे शरीर के इस क्षय रोग का निवारण कीजिए। मुझसे जो अपराध हो गया हो, उसे क्षमा कीजिए।

चंद्रदेव! एक पक्ष में प्रतिदिन तुम्हारी कला क्षीण हो और दूसरे पक्ष में फिर वह निरंतर बढ़ती रहे।

तदनंतर चंद्रमा ने भक्तिभाव से भगवान् शंकर की स्तुति की। इससे पहले निराकार होते हुए भी वे भगवान् शिव फिर साकार हो गए। देवताओं पर प्रसन्न हो उस क्षेत्र के माहात्म्य को बढ़ाने तथा चंद्रमा के यश का विस्तार करने के लिए

भगवान् शंकर उन्हीं के नाम पर वहाँ 'सोमेश्वर' कहलाए और 'सोमनाथ' के नाम से तीनों लोकों में विख्यात हुए। सोमनाथ का पूजन करने से वे उपासक के क्षय तथा कोढ़ आदि रोगों का नाश कर देते हैं। यह चंद्रमा धन्य है, कृत-कृत्य है, जिनके नाम से तीनों लोकों के स्वामी साक्षात् भगवान् शंकर भूतल को पवित्र करते हुए प्रभास क्षेत्र में विद्यमान हैं। वहीं संपूर्ण देवताओं ने सोमकुंड की भी स्थापना की है, जिसमें शिव और ब्रह्मा का सदा निवास माना जाता है। चंद्रकुंड इस भूतल पर पापनाशन तीर्थ के रूप में प्रसिद्ध है। जो मनुष्य इसमें स्नान करता है, वह सब पापों से मुक्त हो जाता है। क्षय आदि असाध्य रोग होते हैं, वे सब उस कुंड में छह मास तक स्नान करने मात्र से नष्ट हो जाते हैं। मनुष्य जिस फल के उद्देश्य से इस उत्तम तीर्थ का सेवन करता है, उस फल को सर्वथा प्राप्त कर लेता है, इसमें संशय नहीं है।

चंद्रमा निरोग हो अपना काम करने लगे। इस प्रकार 'सोमनाथ' की उत्पत्ति का यह प्रसंग है। इस तरह सोमेश्वरलिंग का प्रादुर्भाव हुआ है। जो मनुष्य सोमनाथ के प्रादुर्भाव की इस कथा को सुनता अथवा दूसरों को सुनाता है, वह संपूर्ण अभीष्ट को पाता और सब पापों से मुक्त हो जाता है।

———★———

मल्लिकार्जुन और महाकाल ज्योतिर्लिंग के आविर्भाव की कथा तथा उनकी महिमा

जब महाबली तारक शत्रु शिवापुत्र कार्तिकेय सारी पृथ्वी की परिक्रमा करके फिर कैलास पर्वत पर आए और गणेश के विवाह की बात सुनकर क्रौंच पर्वत पर चले गए, पार्वती और शिवजी के वहाँ जाकर अनुरोध करने पर भी वे नहीं लौटे तथा वहाँ से भी बारह कोस दूर चले गए, तब शिव और पार्वती ज्योतिर्मय स्वरूप धारण करके वहाँ प्रतिष्ठित हो गए। वे दोनों पुत्र स्नेह से आतुर हो पर्व के दिन अपने पुत्र कुमार को देखने के लिए उनके पास जाया करते थे। अमावस्या के दिन भगवान् शंकर स्वयं वहाँ जाते हैं और पूर्णमासी के दिन पार्वतीजी निश्चय ही वहाँ पदार्पण करती हैं। उसी दिन से लेकर भगवान् शिव का मल्लिकार्जुन नामक एक लिंग तीनों लोकों में प्रसिद्ध हुआ। (उसमें पार्वती और शिव दोनों की ज्योतियाँ

प्रतिष्ठित हैं। 'मल्लिका' का अर्थ 'पार्वती' है और अर्जुन शब्द 'शिव' का वाचक है।) उस लिंग का जो दर्शन करता है, वह समस्त पापों से मुक्त हो जाता है और संपूर्ण अभीष्ट को प्राप्त कर लेता है। इसमें संशय नहीं है।

अवंति नाम से प्रसिद्ध एक रमणीय नगरी है, जो समस्त देहधारियों को मोक्ष प्रदान करनेवाली है। वह भगवान् शिव को बहुत ही प्रिय, परम पुण्यमयी और लोक पावनी है। उस नगरी में एक श्रेष्ठ ब्राह्मण रहते थे, जो शुभ कर्म परायण, वेदों के स्वाध्याय में संलग्न तथा वैदिक कर्मों के अनुष्ठान में सदा तत्पर रहनेवाले थे। वे घर में अग्नि की स्थापना करके प्रतिदिन अग्निहोत्र करते और शिव की पूजा में सदा तत्पर रहते थे। वे ब्राह्मण देवता प्रतिदिन पार्थिव शिवलिंग बनाकर उसकी पूजा करते थे। वेद प्रिय नामक वे ब्राह्मण सम्यक् ज्ञानार्जन में लगे रहते थे। इसलिए उन्होंने संपूर्ण कर्मों के फल पाकर वे सद्गति प्राप्त कर ली, जो संतों को ही सुलभ होती है। उनके शिव पूजा परायण चार तेजस्वी पुत्र थे—(1) देवप्रिय, (2) प्रिय मेधा, (3) सुकृत, (4) सुव्रत। उनके सुखदायक गुण वहाँ सदा बढ़ने लगे। उनके कारण अवंति नगरी ब्रह्म तेज से परिपूर्ण हो गई थी।

उसी समय रत्नमाला पर्वत पर दूषण नामक एक धर्मद्वेषी असुर ने ब्रह्माजी से वर पाकर वेद, धर्म तथा धर्मात्माओं पर आक्रमण किया। अंत में उसने सेना लेकर अवंति (उज्जैन) के ब्राह्मणों पर भी चढ़ाई कर दी। उसकी आज्ञा से चार भयानक दैत्य चारों दिशाओं में प्रलयाग्नि के समान प्रकट हो गए, परंतु वे शिव विश्वासी ब्राह्मण-बंधु उनसे डरे नहीं। जब नगर के समस्त ब्राह्मण बहुत घबरा गए, तब उनको आश्वासन देते हुए उन्होंने कहा, "आप लोग भक्त वत्सल भगवान् शंकर पर भरोसा रखें।" यह कह शिवलिंग का पूजन करके वे भगवान् शिव का ध्यान करने लगे। इतने में ही सेना सहित दूषण ने आकर उन ब्राह्मणों को देखा और कहा, "इन्हें मार डालो, बाँध लो।" वेद प्रिय के पुत्र और ब्राह्मणों ने उस समय उस दैत्य की कही हुई वह बात नहीं सुनी, क्योंकि वे भगवान् शंभु के ध्यान-मार्ग में स्थित थे। उस दुष्टात्मा दैत्य ने ज्यों ही उन ब्राह्मणों को मारने की इच्छा की, त्यों ही उनके द्वारा पूजित पार्थिव शिवलिंग के स्थान पर बड़ी भारी आवाज के साथ एक गड्ढा प्रकट हो गया। उस गड्ढे से तत्काल विकट रूपधारी भगवान् शिव प्रकट हो गए, जो 'महाकाल' नाम से विख्यात हुए। वे दुष्टों के विनाशक तथा

सत्पुरुषों के आश्रयदाता हैं। उन्होंने उन दैत्यों से कहा—अरे खल! मैं तुझ जैसे दुष्टों के लिए 'महाकाल' प्रकट हुआ हूँ। तुम इन ब्राह्मणों के निकट से दूर भाग जाओ। ऐसा कहकर महाकाल शंकर ने सेना सहित दूषण को अपनी हुंकार मात्र से तत्काल भस्म कर दिया। कुछ सेना उनके द्वारा मारी गई और भाग खड़ी हुई। परमात्मा शिव ने दूषण का वध कर डाला। जैसे सूर्य को देखकर संपूर्ण अंधकार नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार भगवान् शिव को देखकर सारी सेना अदृश्य हो गई। देवताओं की दुंदुभियाँ बज उठीं और आकाश से फूलों की वर्षा होने लगी। उन ब्राह्मणों को आश्वासन दे सुप्रसन्न हुए महाकाल महेश्वर शिव ने उनसे कहा, "तुम लोग वर माँगो।" उनकी बात सुनकर वे सब ब्राह्मण हाथ जोड़कर भक्तिभाव से भलीभाँति नतमस्तक हो बोले।

हे महाकाल! हे महादेव! दुष्टों को दंड देनेवाले प्रभो! शंभो! आप हमें संसार सागर से मोक्ष प्रदान करें। शिव, आप जन साधारण की रक्षा के लिए सदा यहीं रहें। प्रभो, शंभो! आपका दर्शन करनेवाले मनुष्यों का आप सदा ही उद्धार करें।

उनके ऐसा कहने पर उन्हें सद्गति दे भगवान् शिव अपने भक्तों की रक्षा के लिए उस परम सुंदर गड्ढे में स्थित हो गए और वे ब्राह्मण मोक्ष पा गए तथा वहाँ चारों ओर की एक-एक कोस भूमि लिंग रूपी भगवान् शिव का स्थल बन गई। वे शिव भूतल पर 'महाकालेश्वर' के नाम से विख्यात हुए। उनका दर्शन करने से स्वप्न में भी कोई दुःख नहीं होता है। जिन-जिन कामनाओं को लेकर कोई उस लिंग की उपासना करता है, उसका अपना मनोरथ प्राप्त हो जाता है तथा परलोक में मोक्ष भी मिल जाता है।

———★———

विंध्य की तपस्या, ओंकार में परमेश्वर लिंग के प्रादुर्भाव और उसका माहात्म्य

एक समय की बात है, भगवान् नारद मुनि गोकर्ण नामक शिव के समीप जा बड़ी भक्ति के साथ उनकी सेवा करने लगे। कुछ काल बाद वे मुनिश्रेष्ठ वहाँ से गिरिराज विंध्य पर आए और विंध्य ने वहाँ बड़े आदर से उनका पूजन किया। मेरे पास यहाँ सबकुछ है, कभी किसी बात की कमी नहीं होती, इस भाव को मन

में लेकर विंध्याचल नारदजी के सामने खड़ा हो गया। उसकी यह अभिमान भरी बात सुनकर अहंकारनाशक नारद मुनि लंबा साँस खींचकर चुपचाप खड़े रह गए। यह देख विंध्य पर्वत ने पूछा—आपने मेरे यहाँ कौन सी कमी देखी है ? आपके इस तरह लंबा साँस खींचने का क्या कारण है ?

भैया ! तुम्हारे यहाँ सबकुछ है, फिर भी मेरू पर्वत तुमसे बहुत ऊँचा है। उसके शिखरों का विभाग देवताओं के लोकों में पहुँचा हुआ है, किंतु तुम्हारे शिखर का भाग वहाँ कभी नहीं पहुँच सका है।

ऐसा कहकर नारदजी वहाँ से जिस तरह आए थे, उसी तरह चल दिए, परंतु विंध्य पर्वत 'मेरे जीवन को धिक्कार है,' ऐसा सोचता हुआ मन-ही-मन संतप्त हो उठा। 'अच्छा अब मैं विश्वनाथ भगवान् शंभु की आराधनापूर्वक तपस्या करूँगा।' ऐसा हार्दिक निश्चय करके वह भगवान् शंकर की शरण में गया। तदनंतर जहाँ साक्षात् ओंकार की स्थिति है, वहाँ प्रसन्तापूर्वक जाकर उसने शिव की पार्थिव मूर्ति बनाई और छह मास तक निरंतर शंभु की आराधना करके शिव के ध्यान में तत्पर हो गया; वह अपनी तपस्या के स्थान से हिला तक नहीं। विंध्याचल की ऐसी तपस्या देखकर पार्वती पति प्रसन्न हो गए और उन्होंने विंध्याचल को अपना वह स्वरूप दिखलाया, जो योगियों के लिए भी दुर्लभ है। वे प्रसन्न हो उस समय उससे बोले, "विंध्य ! तुम मनोवांछित वर माँगो। मैं भक्तों को अभीष्ट वर देनेवाला हूँ और तुम्हारी तपस्या से प्रसन्न हूँ।"

देवेश्वर शंभो ! आप सदा ही भक्त वत्सल हैं। यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे वह अभीष्ट बुद्धि प्रदान कीजिए, जो अपने कार्य को सिद्ध करनेवाली हो।

भगवान् शंभु ने उसे वह उत्तम वर दे दिया और कहा, "पर्वतराज विंध्य ! तुम जैसा चाहो, वैसा करो।" उसी समय देवता तथा निर्मल अंतःकरणवाले ऋषि वहाँ आए और शंकरजी की पूजा करके बोले—प्रभो ! आप यहाँ स्थिर रूप से निवास करें। देवताओं की बात सुनकर परमेश्वर शिव प्रसन्न हो गए और लोगों को सुख देने के लिए उन्होंने सहर्ष वैसा ही किया। वहाँ जो एक ही ओंकार लिंग था, वह दो स्वरूपों में विभक्त हो गया। प्रणव में जो सदाशिव थे, वे ओंकार नाम से विख्यात हुए और पार्थिव मूर्ति में जो शिव ज्योति प्रतिष्ठित हुई, उसकी परमेश्वर संज्ञा हुई (परमेश्वर को ही अमलेश्वर भी कहते हैं), इस प्रकार ओंकार और

परमेश्वर, ये दो शिवलिंग भक्तों को अभीष्ट फल प्रदान करनेवाले हैं। उस समय देवताओं और ऋषियों ने उन दोनों लिंगों की पूजा की और भगवान् वृषभध्वज को संतुष्ट करके अनेक वर प्राप्त किए। तत्पश्चात् देवता अपने-अपने स्थान को गए और विंध्याचल भी अधिक प्रसन्नता का अनुभव करने लगा। उसने अपने अभीष्ट कार्य को सिद्ध किया और मानसिक परिताप को त्याग दिया। जो पुरुष इस प्रकार भगवान् शंकर का पूजन करता है, वह माता के गर्भ में फिर नहीं आता और अपने अभीष्ट फल को प्राप्त कर लेता है।

———★———

केदारेश्वर तथा भीमशंकर ज्योतिर्लिंगों के आविर्भाव की कथा तथा उनका माहात्म्य

ब्राह्मणो! भगवान् विष्णु के जो नर-नारायण नामक दो अवतार हैं और भारत वर्ष के बदरिकाश्रम तीर्थ में तपस्या करते हैं, उन दोनों ने पार्थिव शिवलिंग बनाकर उसमें स्थित हो, पूजा ग्रहण करने के लिए भगवान् शंभु से प्रार्थना की। शिवजी भक्तों के अधीन होने के कारण प्रतिदिन उनके बनाए हुए पार्थिव लिंग में पूजित होने के लिए आया करते थे। जब उन दोनों को पार्थिव-पूजन करते बहुत दिन बीत गए, तब एक समय परमेश्वर शिव ने प्रसन्न होकर कहा, ''मैं तुम्हारी आराधना से संतुष्ट हूँ। तुम दोनों मुझसे वर माँगो।'' उस समय उनके ऐसा कहने पर नर और नारायण ने लोगों के हित की कामना से कहा, ''देवेश्वर! यदि आप प्रसन्न हैं और यदि हमें वर देना चाहते हैं तो अपने स्वरूप से पूजा ग्रहण करने के लिए यहीं स्थित हो जाइए।''

उन दोनों बंधुओं के इस प्रकार अनुरोध करने पर कल्याणकारी महेश्वर हिमालय के उस केदार तीर्थ में स्वयं ज्योतिर्लिंग के रूप में स्थित हो गए। उन दोनों से पूजित होकर संपूर्ण दुःख और भय का नाश करनेवाले शंभु लोगों का उपकार करने और भक्तों को दर्शन देने के लिए स्वयं 'केदारेश्वर' के नाम से प्रसिद्ध होकर उसमें रहते हैं। वे दर्शन और पूजन करनेवाले भक्तों को सदा अभीष्ट वस्तु प्रदान करते हैं। उसी दिन से लेकर जिसने भी भक्तिभाव से केदारेश्वर का पूजन किया, उसके लिए स्वप्न में भी दुःख दुर्लभ हो गया। जो भगवान् शिव का प्रिय भक्त

वहाँ शिवलिंग के निकट शिव के रूप में अंकित वलय (ककण या कड़ा) चढ़ाता है, वह उस वलय युक्त स्वरूप का दर्शन करके समस्त पापों से मुक्त हो जाता है। जो बदरीनाथ की यात्रा करता है, उसे भी जीवनमुक्ति प्राप्त होती है। नर और नारायण के तथा केदारेश्वर शिव के रूप का दर्शन करके मनुष्य मोक्ष का भागी होता है, इसमें संशय नहीं है। केदारेश्वर में भक्ति रखनेवाला, जो पुरुष वहाँ की यात्रा प्रारंभ करके उनके पास तक पहुँचने के पहले यात्रा में ही मर जाता है, वह भी मोक्ष पा जाता है। इसमें विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

केदारशस्य भक्ता ये मार्गस्थास्तस्य वैमृताः।
तैऽपि मुक्ता अवन्त्येव नात्र कार्या विचारणा॥

(शि.पु. कोटिरुद्र संहिता, 19/22, पे.नं. 494)

केदारनाथ तीर्थ में पहुँचकर वहाँ प्रेमपूर्वक केदारेश्वर की पूजा करके वहाँ का जल पी लेने के पश्चात् मनुष्य का फिर जन्म नहीं होता। इस भारतवर्ष में संपूर्ण जीवों को भक्तिभाव से भगवान् नर-नारायण तथा केदारेश्वर शंभु की पूजा करनी चाहिए।

कामरूप देश में लोकहित की कामना से साक्षात् भगवान् शंकर ज्योतिर्लिंग के रूप में अवतीर्ण हुए थे। उनका यह स्वरूप कल्याण और सुख का आश्रय है। ब्राह्मणो! पूर्व काल में एक महापराक्रमी राक्षस हुआ था, जिसका नाम 'भीमा' था। वह सदा धर्म का विध्वंस करता और समस्त प्राणियों को दुःख देता था। वह महाबली राक्षस 'कुंभकर्ण' के वीर्य और कर्कटी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था तथा अपनी माता के साथ सह्य पर्वत पर निवास करता था। एक दिन समस्त लोकों को दुःख देनेवाले भयानक पराक्रमी दुष्ट भीमा ने अपनी माता से पूछा, "माँ! मेरे पिताजी कहाँ हैं, तुम अकेली क्यों रहती हो? मैं यह सब जानना चाहता हूँ। अतः यथार्थ बात बताओ।"

बेटा! रावण के छोटे भाई कुंभकर्ण तेरे पिता थे। भाई सहित उस महाबली वीर को श्रीराम ने मार डाला। मेरे पिता का नाम कर्कट और माता का नाम पुस्कसी था। विराध मेरे पति थे, जिन्हें पूर्वकाल में राम ने मार डाला था। अपने प्रिय स्वामी के मारे जाने पर मैं अपने माता-पिता के पास रहती थी। एक दिन मेरे माता-पिता

अगस्त्य मुनि के शिष्य सुतीक्ष्ण को अपना आहार बनाने के लिए गए। वे बड़े तपस्वी और महात्मा थे। उन्होंने कुपित होकर मेरे माता-पिता को भस्म कर डाला, वे दोनों मर गए। तब से मैं अकेली होकर बड़े दुःख के साथ इस पर्वत पर रहने लगी। मेरा कोई अवलंब नहीं रह गया। मैं असहाय और दुःख से आतुर होकर यहाँ निवास करती थी। उसी समय महान्, बल पराक्रम से संपन्न राक्षस कुंभकर्ण, जो रावण के छोटे भाई थे, यहाँ आए, उन्होंने बलात् मेरे साथ समागम किया। फिर वे मुझे छोड़कर लंका चले गए। तत्पश्चात् तुम्हारा जन्म हुआ। तुम भी अपने पिता के समान ही महान् बलवान और पराक्रमी हो। अब मैं तुम्हारा ही सहारा लेकर यहाँ कालक्षेप करती हूँ।

ब्राह्मणो! कर्कटी की बात सुनकर भयानक पराक्रमी भीम कुपित हो यह विचार करने लगा, ''मैं विष्णु के साथ कैसा बरताव करूँ। उन्होंने मेरे पिता को मार डाला, मेरे नाना-नानी भी उनके भक्त के हाथ से मारे गए। विराध को भी इन्होंने ही मार डाला और इस प्रकार मुझे बहुत दुःख दिया। यदि मैं अपने पिता का पुत्र हूँ तो हरि को अवश्य पीड़ा दूँगा।''

ऐसा निश्चय करके भीमा महान् तप करने के लिए चला गया। उसने ब्रह्माजी की प्रसन्नता के लिए एक हजार वर्षों तक महान् तप किया। तपस्या के साथ-साथ वह मन-ही-मन इष्टदेव का ध्यान किया करता था। तब लोक पितामह ब्रह्मा उसे वर देने के लिए गए और इस प्रकार बोले।

ब्रह्माजी ने कहा—भीम! मैं तुम पर प्रसन्न हूँ, तुम्हारी जो इच्छा हो, उसके अनुसार वर माँगो।

भीमा बोला—देवेश्वर! कमलासन! यदि आप प्रसन्न हैं, और मुझे वर देना चाहते हैं तो आज मुझे ऐसा बल दीजिए, जिसकी कहीं तुलना न हो।

ऐसा कहकर उस राक्षस ने ब्रह्माजी को नमस्कार किया और ब्रह्मा जी भी उसे अभीष्ट वर देकर अपने धाम को चले गए। ब्रह्माजी से अत्यंत बल पाकर राक्षस अपने घर आया और माता को प्रणाम करके शीघ्रतापूर्वक बड़े गर्व से बोला, ''माँ! अब तुम मेरा बल देखो। मैं इंद्र आदि देवताओं तथा इनकी सहायता करनेवाले श्रीहरि का महान् संहार कर डालूँगा।'' ऐसा कहकर भयानक पराक्रमी भीमा ने पहले इंद्र आदि देवताओं को जीता और उन सबको अपने-अपने स्थान से निकाल

बाहर किया। तदनंतर देवताओं की प्रार्थना से उनका पक्ष लेनेवाले श्रीहरि को भी उसने युद्ध में हराया। फिर प्रसन्नतापूर्वक पृथ्वी को जीतना प्रारंभ किया। सबसे पहले वह कामरूप देश के राजा सुदक्षिण को जीतने के लिए गया। वहाँ राजा के साथ उसका भयंकर युद्ध हुआ। दुष्ट असुर भीम ने ब्रह्माजी के दिए हुए वर के प्रभाव से शिव के आश्रित रहनेवाले महावीर महाराज सुदक्षिण को परास्त कर दिया और समस्त पदार्थों सहित उनका राज्य तथा सर्वस्व अपने अधिकार में कर लिया। भगवान् शिव के प्रिय भक्त धर्मप्रेमी परम धर्मात्मा राजा को भी उसने कैद कर लिया और उनके पैरों में बेड़ी डालकर उन्हें एकांत स्थान में बंद कर दिया। वहाँ उन्होंने भगवान् की प्रीति के लिए शिव की उत्तम पार्थिव मूर्ति बनाकर उन्हीं का भजन-पूजन प्रारंभ कर दिया। उन्होंने बारंबार गंगाजी की स्तुति की और मानसिक स्नान आदि करके पार्थिव पूजन विधि से शंकरजी की पूजा संपन्न की। विधिपूर्वक भगवान् शिव का ध्यान करके वे प्रणवयुक्त पंचाक्षरमंत्र (ॐ नमः शिवाय) का जप करने लगे। अब उन्हें कोई दूसरा काम करने के लिए अवकाश नहीं मिलता था। उन दिनों उनकी साध्वी पत्नी राजवल्लभा दक्षिणा प्रेमपूर्वक पार्थिव पूजन किया करती थी। वे दंपती अनन्य भाव से भक्तों का कल्याण करनेवाले भगवान् शंकर का भजन करते और प्रतिदिन उन्हीं की आराधना में तत्पर रहते थे। इधर वह राक्षस वर के अभिमान से मोहित हो यज्ञकर्म आदि सब धर्मों का लोप करने लगा और सबसे कहने लगा, ''तुम लोग सबकुछ मुझे ही दो।'' दुरात्मा राक्षसों की बहुत बड़ी सेना साथ ले उसने सारी पृथ्वी को अपने वश में कर लिया। वह वेदों, शास्त्रों, स्मृतियों और पुराणों में बताए हुए धर्म का लोप करके शक्तिशाली होने के कारण सबका स्वयं ही उपभोग करने लगा।

तब सब देवता तथा ऋषि अत्यंत पीड़ित हो महाकोशी के तट पर गए और शिव की आराधना कर स्तवन करने लगे। उनके इस प्रकार स्तुति करने पर भगवान् शिव अत्यंत प्रसन्न हो देवताओं से बोले, ''देवगण तथा महर्षियो! मैं प्रसन्न हूँ। वर माँगो, तुम्हारा कौन सा कार्य सिद्ध करूँ?''

देवता बोले—देवेश्वर! आप अंतर्यामी हैं, अतः सबके मन की सारी बातें जानते हैं, आप से कुछ भी अज्ञात नहीं है। प्रभो, महेश्वर! कुंभकर्ण से उत्पन्न कर्कटी का बलवान पुत्र राक्षस भीमा ब्रह्माजी के दिए हुए वर से शक्तिशाली हो

देवताओं को निरंतर पीड़ा दे रहा है। अतः आप इस दु:खदायी राक्षस का अंत कर दीजिए। हम पर कृपा कीजिए, विलंब न कीजिए।

शंभु ने कहा—देवताओ! कामरूप देश के राजा सुदक्षिण मेरे श्रेष्ठ भक्त हैं। उनसे मेरा यह संदेश कह दो। फिर तुम्हारा सारा कार्य शीघ्र पूरा हो जाएगा। उनसे कहना, ''कामरूप देश के अधिपति महाराज सुदक्षिण, प्रभो! तुम मेरे विशेष भक्त हो। अतः प्रेमपूर्वक मेरा भजन करो। दुष्ट राक्षस भीमा ब्रह्माजी का वर पाकर प्रबल हो गया है। इसीलिए उसने तुम्हारा तिरस्कार किया है, परंतु अब मैं उस दुष्ट को मार डालूँगा, इसमें संदेह नहीं है।''

तब उन सब देवताओं ने प्रसन्नतापूर्वक वहाँ जाकर उन महाराज से शंभु की कही सारी बाते कह सुनाईं। उनसे यह संदेश कहकर देवताओं और महर्षियों को बड़ा आनंद प्राप्त हुआ और वे सब के सब शीघ्र अपने-अपने आश्रम को चले गए।

इधर भगवान् शिव भी अपने गणों के साथ लोकहित की कामना से अपने भक्त की रक्षा करने के लिए सादर उसके निकट गए और गुप्त रूप से वहीं ठहर गए। इसी समय कामरूप नरेश ने पार्थिव शिव के सामने गहन ध्यान लगाना आरंभ किया। इतने में ही किसी ने राक्षस से जाकर कह दिया कि राजा तुम्हारे नाश के लिए कोई मनुष्य पुश्वरण कर रहे हैं।

यह समाचार सुनते ही वह राक्षस कुपित हो उठा और उनको मार डालने की इच्छा से नंगी तलवार हाथ में लिये राजा के पास गया। वहाँ पार्थिव आदि जो सामग्री स्थित थी, उसे देखकर तथा उसके प्रयोजन और स्वरूप को समझकर राक्षस ने यही माना कि राजा मेरे लिए कुछ कर रहा है। अतः समस्त सामग्री सहित उस नरेश को बलपूर्वक अभी नष्ट कर देता हूँ, ऐसा विचार कर उस महाक्रोधी राक्षस ने राजा को बहुत डाँटा और पूछा, 'क्या कर रहे हो?' राजा ने भगवान् शंकर पर रक्षा का भार सौंपकर कहा, ''मैं चराचर जगत् के स्वामी भगवान् शिव का पूजन करता हूँ।'' तब राक्षस भीम ने भगवान् शंकर के प्रति बहुत तिरस्कारयुक्त दुर्वचन कहकर राजा को धमकाया और भगवान् शंकर के पार्थिव लिंग पर तलवार चलाई। वह तलवार पार्थिव लिंग का स्पर्श भी नहीं कर पाई कि उससे साक्षात् भगवान् शिव वहाँ प्रकट हो गए और बोले, ''देखो! मैं भीमेश्वर हूँ और अपने भक्त की रक्षा के लिए प्रकट हुआ हूँ। मेरा पहले से ही यह व्रत है कि मैं सदा अपने भक्त की

रक्षा करूँ। इसीलिए भक्तों को सुख देनेवाले मेरे बल की ओर दृष्टिपात करो।''

ऐसा कहकर भगवान् शिव ने पिनाक से उसकी तलवार के दो टुकड़े कर दिए। तब राक्षस ने फिर अपना त्रिशूल चलाया, परंतु शंभु ने उस दुष्ट के त्रिशूल के भी सैकड़ों टुकड़े कर डाले। तदनंतर शंकरजी के साथ उसका घोर युद्ध हुआ, जिससे सारा जगत् क्षुब्ध हो उठा। तब नारदजी ने आकर भगवान् शंकर से प्रार्थना की।

नारदजी बोले—लोगों को भ्रम में डालनेवाले महेश्वर, मेरे नाथ! आप क्षमा करें, क्षमा करें! तिनके को काटने के लिए कुल्हाड़ा चलाने की क्या आवश्यकता है। शीघ्र ही इसका संहार कर डालिए।

नारद के इस प्रकार प्रार्थना करने पर भगवान् शंभु ने हुंकार मात्र से उस समय समस्त राक्षसों को भस्म कर डाला। सब देवताओं के देखते-देखते शिवजी ने उन सारे राक्षसों को दग्ध कर दिया। तदनंतर भगवान् शंकर की कृपा से इंद्र आदि समस्त देवताओं और मुनीश्वरों को शांति मिली तथा संपूर्ण जगत् स्वस्थ हुआ। उस समय देवताओं और मुनियों ने भगवान् शंकर से प्रार्थना की, ''प्रभो! आप यहाँ लोगों को सुख देने के लिए सदा निवास करें। यह देश निंदित माना गया है, यहाँ आनेवाले लोगों को प्राय: दु:ख ही प्राप्त होता है, परंतु आपका दर्शन करने से सबका कल्याण होगा। आप 'भीमशंकर' के नाम से विख्यात होंगे और सबके संपूर्ण मनोरथों को सिद्ध करेंगे। आपका यह ज्योतिर्लिंग सदा पूजयनीय और समस्त दु:खों का निवारण करनेवाला होगा।'' प्रार्थना करने पर लोक हितकारी एवं भक्त-वत्सल शिव प्रसन्नतापूर्वक वहीं स्थित हो गए।

———★———

विश्वेश्वर ज्योतिर्लिंग की महिमा तथा पंचकोशी की महत्ता का

इस भूतल पर जो कोई भी वस्तु दृष्टिगोचर होती है, वह सच्चिदानंदन स्वरूप, निर्विकार एवं सनातन ब्रह्म रूप है। अपने कैवल्य (अद्वैत) भाव में ही रमनेवाले उन अद्वितीय परमात्मा में कभी एक से दो हो जाने की इच्छा जाग्रत् हुई। फिर वे ही परमात्मा सगुण रूप में प्रकट हो शिव कहलाए। वे शिव ही पुरुष और स्त्री दो रूपों में प्रकट हो गए। उनमें जो पुरुष था, उसका 'शिव' नाम हुआ और जो स्त्री

हुई, उसे 'शक्ति' कहते हैं। उन चिदानंद स्वरूप शिव और शक्ति ने स्वयं अदृश्य रहकर स्वभाव से ही दो चेतनों (प्रकृति और पुरुष) की सृष्टि की। मुनिवरो! उन दोनों माता-पिता को उस समय सामने न देखकर वे दोनों प्रकृति और पुरुष महान् संशय में पड़ गए। उस समय निर्गुण परमात्मा से आकाशवाणी प्रकट हुई, 'तुम दोनों को तपस्या करनी चाहिए। फिर तुमसे परम उत्तम सृष्टि का विस्तार होगा।'

वे प्रकृति और पुरुष बोले, प्रभो! तपस्या के लिए तो कोई स्थान है ही नहीं, फिर हम दोनों इस समय कहाँ तप करें।''

तब निर्गुण शिव ने तेज के सारभूत पाँच कोस लंबे-चौड़े शुभ एवं सुंदर नगर का निर्माण किया, उनका अपना ही स्वरूप था। वह सभी आवश्यक उपकरणों से युक्त था। उस नगर का निर्माण करके उन्होंने उसे उन दोनों के लिए भेजा। वह नगर आकाश में पुरुष के समीप आकर स्थित हो गया। तब पुरुष श्रीहरि ने उस नगर में स्थित हो, सृष्टि की कामना से शिव का ध्यान करते हुए बहुत वर्षों तक तप किया। उस समय परिश्रम के कारण उनके शरीर से श्वेत जल की धाराएँ (अनेक) प्रकट हुईं, शून्य आकाश व्याप्त हो गया। वहाँ कुछ भी दिखाई नहीं देता था। उसे देखकर भगवान् विष्णु मन-ही-मन बोल उठे, 'यह कैसी अद्भुत वस्तु दिखाई देती है?' उस समय इस आश्चर्य को देखकर उन्होंने अपना सिर हिलाया, जिसमें उस प्रभु के सामने ही उनके एक कान से मणि गिर पड़ी। जहाँ वह मणि गिरी, वह स्थान 'मणिकार्णिका' नामक महान् तीर्थ हो गया।

जब पूर्वोक्त जलराशि में वह सारी पंचकोशी डूबने और बहने लगी, तब निर्गुण शिव ने शीघ्र ही उसे अपने 'त्रिशूल' पर धारण कर लिया। फिर विष्णु अपनी पत्नी प्रकृति के साथ नहीं सोए। तब उनकी नाभि से एक कमल प्रकट हुआ और उस कमल से 'ब्रह्मा' उत्पन्न हुए। उनकी उत्पत्ति में भी शंकर का आदेश ही कारण था। तदनंतर उन्होंने शिव की आज्ञा पाकर अद्भुत सृष्टि आरंभ की। ब्रह्माजी ने ब्रह्मांड में चौदह भुवन बनाए। ब्रह्मांड का विस्तार महर्षियों ने पचास करोड़ योजन का बताया है। फिर भगवान् शिव ने यह सोचा कि 'ब्रह्मांड के भीतर कर्मपाश से बँधे हुए प्राणी मुझे कैसे प्राप्त करेंगे?' उन्होंने मुक्तिदायिनी पंचकोशी को इस जगत् में छोड़ दिया। ''यह पंचकोशी काशी लोक में कल्याण-दायिनी, कर्म बंधन का नाश करनेवाली ज्ञानदात्री तथा मोक्ष को प्रकाशित करनेवाली मानी

गई है। अतएव मुझे यह परम प्रिय है। यहाँ स्वयं परमात्मा ने 'अविमुक्त' लिंग की स्थापना की है। अत: मेरे अंशभूत हो! तुम्हें कभी इस क्षेत्र का त्याग नहीं करना चाहिए।'' ऐसा कहकर भगवान् हर ने काशीपुरी को स्वयं अपने त्रिशूल से उतारकर मृत्युलोक के जगत् में छोड़ दिया। ब्रह्माजी का एक दिन पूरा होने पर जब सारे जगत् का प्रलय हो जाता है, तब भी निश्चय ही इस काशीपुरी का नाश नहीं होता है। उस समय भगवान् शिव इसे त्रिशूल पर धारण कर लेते हैं और जब ब्रह्मा द्वारा पुन: नई सृष्टि की उत्पत्ति की जाती है, तब इसे फिर से भूतल पर स्थापित कर देते हैं। कर्मों का कर्षण करने के कारण ही इस पुरी को 'काशी' कहते हैं। काशी में अविमुक्तेश्वर लिंग सदा मोक्ष प्रदान करनेवाला है। मुनीश्वरो! अन्य मोक्षदायक धामों में सारूप्य आदि मुक्ति प्राप्त होती है। केवल इस काशी में ही जीवों को सायुज्य नामक सर्वोत्तम मुक्ति सुलभ होती है। जिनको कहीं भी गति नहीं है, उनके लिए वाराणसीपुरी ही गति है। शंकर की प्रिय नगरी काशी सदा भोग और मोक्ष प्रदान करनेवाली है। यहाँ समस्त अमरगण भी मरण की इच्छा करते हैं।

कैलास के पति, जो भीतर से सतयुगी और बाहर से तमोगुणी कहे गए हैं, कालाग्नि रुद्र के नाम से विख्यात हैं। उन्होंने शिव से इस प्रकार कहा, महेश्वर! मैं आपका ही हूँ, इसमें संशय नहीं है। सांब महादेव! मुझ पर आत्मज कृपा कीजिए। जगत्पते, लोकहित की कामना से आपको सदा यहीं रहना चाहिए। जगन्नाथ, मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ। आप यहाँ रहकर जीवों का उद्धार करें।

अविमुक्त बोले—कालरूपी रोग के सुंदर औषध देवाधिदेव महादेव! आप वास्तव में तीनों लोकों के स्वामी तथा ब्रह्मा और विष्णु आदि के द्वारा भी सेवनीय हैं। देव, काशीपुरी को आप अपनी राजधानी स्वीकार करें। मैं अचिंत्य सुख की प्राप्ति के लिए यहाँ सदा आपका ध्यान लगाए स्थिर भाव से बैठा रहूँगा। आप ही मुक्ति देनेवाले तथा संपूर्ण कामनाओं के पूरक हैं, दूसरा कोई नहीं। अत: आप परोपकार के लिए उमा सहित सदा यहाँ विराजमान रहें। सदाशिव! आप समस्त जीवों को संसार सागर से पार करें। बारंबार प्रार्थना करता हूँ कि आप अपने भक्तों का कार्य सिद्ध करें।

जब विश्वनाथ ने शंकर भगवान् से इस प्रकार प्रार्थना की, तब सर्वेश्वर शिव समस्त लोकों का उपकार करने के लिए वहाँ विराजमान हो गए। जिस दिन से

भगवान् काशी में आ गए, उसी दिन से काशी सर्वश्रेष्ठ पुरी हो गई।

———★———

वाराणसी तथा विश्वेश्वर का माहात्म्य

एक समय की बात है कि पार्वती देवी ने लोक-हित की कामना से बड़ी प्रसन्नता के साथ भगवान् शिव से अविमुक्त क्षेत्र और अविमुक्त लिंग का माहात्म्य पूछा।

तब परमेश्वर शिव ने कहा—यह वाराणसी पुरी सदा के लिए मेरा गुह्यतम क्षेत्र है और सभी जीवों की मुक्ति का सर्वथा हेतु है। इस क्षेत्र में सिद्धगण सदा मेरे व्रत का आशय ले नाना प्रकार के वेश धारण किए मेरे लोक को पाने की इच्छा रखकर जितात्मा और जितेंद्रिय हो, नित्य महायोग का अभ्यास करते हैं। उस उत्तम महायोग का नाम है—पशुपत योग। उसका श्रुतियों द्वारा प्रतिपादन हुआ है। वह भोग और मोक्षरूप फल प्रदान करनेवाला है। महेश्वरी वाराणसी पुरी में निवास करके मुझे सदा ही अच्छा लगता है। जिस कारण मैं सबकुछ छोड़कर काशी में रहता हूँ, उसे बताता हूँ, सुनो। जो मेरा भक्त तथा मेरे तत्त्व का ज्ञानी है, अवश्य ही मोक्ष के भागी होते हैं। उनके लिए तीर्थ की अपेक्षा नहीं है। विहित और अविहित दोनों प्रकार के कर्म उनके लिए समान हैं। उन्हें जीवनमुक्त ही समझना चाहिए। वे दोनों कहीं भी मरें, तुरंत ही मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं। यह मैंने निश्चित बात कही है।

सर्वोत्तम शक्ति देवी उमे! इस परम उत्तम अविमुक्त तीर्थ में जो विशेष बात है, उसे तुम मन लगाकर सुनो। सभी वर्ण और समस्त आश्रमों के लोग; चाहे वे बालक, जवान या बूढ़े हों, कोई भी क्यों न हों, इस पुरी में मर जाएँ तो मुक्त हो जाते हैं, इसमें संशय नहीं है। स्त्री पवित्र हो या अपवित्र, कुमारी हो या विवाहित, विधवा हो या बंध्या, रजस्वला, प्रसूता, संस्कारहीन अथवा जैसी, वैसी, कैसी ही क्यों न हो, यदि इस क्षेत्र में मरी हो तो अवश्य ही मोक्ष की भागी होती है, इसमें संदेह नहीं है। स्वेदज, अंडज, उद्भिज अथवा जरा जरायुज प्राणी जैसे यहाँ मरने पर मोक्ष पाता है, वैसे और कहीं नहीं पाता। यहाँ मरने वाले के लिए न ज्ञान की अपेक्षा है, न भक्ति की, न कर्म की आवश्यकता है, न दान की, न कभी संस्कृति की अपेक्षा है और न धर्म की ही, यहाँ नाम कीर्तन, पूजन तथा उत्तम जाति की भी

अपेक्षा नहीं होती। जो मनुष्य मेरे इस मोक्षदायक क्षेत्र में निवास करता है, वह चाहे जैसे मरे, उसके लिए मोक्ष की प्राप्ति सुनिश्चित है। प्रिये! मेरा यह दिव्यपुर गुह्य से भी गुह्यतर है। ब्रह्मा आदि देवता भी इसके माहात्म्य को नहीं जानते। इसीलिए यह मान क्षेत्र 'अविमुक्त' नाम से प्रसिद्ध है, क्योंकि नैमिष आदि सभी तीर्थों से यह श्रेष्ठ है। यह मरने पर अवश्य मोक्ष देनेवाला है। धर्म का सार सत्य है, मोक्ष का सार समता है तथा समस्त क्षेत्रों एवं तीर्थों का सार समता है और समस्त क्षेत्रों एवं तीर्थों का सार यह अविमुक्त तीर्थ (काशी) है, ऐसी विद्वानों की मान्यता है।

इस काशीपुरी में शिव भक्तों द्वारा अनेक शिवलिंग स्थापित किए गए हैं। हे पार्वती, वे संपूर्ण अभीष्टों को देनेवाले और मोक्षदायक हैं। चारों दिशाओं में पाँच-पाँच कोस फैला हुआ यह क्षेत्र 'अविमुक्त' कहा गया है, वह सब ओर से मोक्षदायक है। जीव को मृत्युकाल में यह क्षेत्र उपलब्ध हो जाए तो उसे अवश्य मोक्ष की प्राप्ति होती है।

यदि निष्पाप मनुष्य काशी में मरे तो उसका तत्काल मोक्ष हो जाता है और जो पापी मनुष्य मरता है, वह कायव्यूह को प्राप्त होता है। उसे पहले यातना का अनुभव करके ही पीछे मोक्ष की प्राप्ति होती है। केवल शुभ कर्म स्वर्ग की प्राप्ति करानेवाला होता है, शुभ और अशुभ दोनों कर्मों से मनुष्य योनि की प्राप्ति बताई गई है। अशुभ कर्म की कमी और शुभ-कर्म की अधिकता होने पर यहाँ जन्म की प्राप्ति होती है। पार्वती! जब शुभ और अशुभ दोनों ही कर्मों का क्षय हो जाता है, तभी जीव को सच्चा मोक्ष प्राप्त होता है। यदि किसी ने पूर्व जन्म में आदरपूर्वक काशी का दर्शन किया है, तभी उसे इस जन्म में काशी में पहुँचकर मृत्यु की प्राप्ति होती है।

———★———

त्र्यंबक ज्योतिर्लिंग और महर्षि गौतम के परोपकार

पूर्वकाल की बात है, गौतम नाम से विख्यात एक श्रेष्ठ ऋषि रहते थे, जिनकी परम धार्मिक पत्नी का नाम अहल्या था। दक्षिण दिशा में जो ब्रह्मगिरि है, वहीं उन्होंने दस हजार वर्षों तक तपस्या की थी। एक समय वहाँ पर सौ वर्षों तक बड़ा

भयानक पड़ गया। सब लोग महान् दुःख में पड़ गए। इस भूतल पर कहीं गीला पत्ता भी नहीं दिखाई देता था। फिर जीवों का आधारभूत जल कहाँ दिखाई देता। उस समय मुनि, मनुष्य, पशु, पक्षी और मृग, सब वहाँ से दसों दिशाओं में चले गए। तब गौतम ऋषि ने छह महीने तक तप करके वरुण को प्रसन्न किया। वरुण ने प्रकट होकर वर माँगने को कहा—ऋषि ने वृष्टि के लिए प्रार्थना की। वरुण ने कहा—देवताओं के विधान के विरुद्ध वृष्टि न करके मैं तुम्हारी इच्छा के अनुसार तुम्हें सदा अक्षय रहनेवाला जल देता हूँ। तुम एक गड्ढा तैयार करो। उनके ऐसा कहने पर गौतम ने एक हाथ गहरा गड्ढा खोदा और वरुण देव ने उसे दिव्य जल से भर दिया, फिर कहा कि परोपकार से सुशोभित होने वाला यह जल तुम्हारे लिए तीर्थ रूप होगा और पृथ्वी पर तुम्हारे ही नाम से इसकी ख्याति होगी। यहाँ किए हुए दान, होम, तप, देव पूजन तथा पितरों का श्राद्ध सभी अक्षय होंगे।

ऐसा कहकर उन महर्षि से प्रशंसित हो वरुण देव अंतर्धान हो गए। उस जल के द्वारा दूसरों का उपकार कर महर्षि गौतम को भी बड़ा सुख मिला। महात्मा पुरुष का आश्रय मनुष्यों के लिए महत्त्व की ही प्राप्ति करानेवाला होता है। महान् पुरुष ही महात्मा के उस स्वरूप को देखते और समझते हैं, दूसरे अधम मनुष्य नहीं। मनुष्य जैसे पुरुष का सेवन करता है, वैसा ही फल पाता है। महान् पुरुष की सेवा से शुद्धता। उनके तप के प्रभाव से अक्षय जल प्राप्त करके ऋषियों की अनावृष्टि के कष्ट से रक्षा करना, ऋषियों का छलपूर्वक उन्हें गौहत्या में फँसाकर आश्रम से निकालना और शुद्धि का उपाय बताना।

उत्तमानां स्वभावोऽयं परदुःखासहिष्णुता।
स्वयं दुःख च सम्प्राप्तं मन्यतेऽन्यस्य वार्यते॥
दयालुरमदस्पर्श उपकारी जितेन्द्रियः।
एतैश्च पुण्यस्तम्भैस्तु य चतुर्भिर्धार्यते मही॥

(शि. पु. पेज. नं. 503)

उत्तम पुरुषों का यह स्वभाव ही है कि वे दूसरों के दुःख को सहन नहीं कर पाते। अपने को दुःख हो जाए, इसे स्वीकार कर लेते हैं, किंतु दूसरों के दुःख का निवारण ही करते हैं। दयालु, अभिमानशून्य, उपकारी और जितेंद्रिए पुण्य के चार

खंभे हैं, जिनके आधार पर यह पृथ्वी टिकी हुई है।

तदनंतर गौतमजी वहाँ उस परम दुर्लभ जल को पाकर विधिपूर्वक नित्य नैमित्तिक कर्म करने लगे। उन मुनीश्वर ने वहाँ नित्य होम की सिद्धि के लिए धान, जौ और अनेक प्रकार के नीवार बो दिए। तरह-तरह के धान्य, भाँति-भाँति के वृक्ष और अनेक प्रकार के फल-फूल वहाँ लहलहा उठे। यह समाचार सुनकर वहाँ दूसरे-दूसरे सहस्रों ऋषि मुनि, पशु-पक्षी तथा बहुसंख्यक जीव जाकर रहने लगे। वह वन भू-मंडल में बड़ा सुंदर हो गया। इस अक्षय जल के संयोग से अनावृष्टि वहाँ के लिए दुःखदायिनी नहीं रह गई। उस वन में अनेक शुभ कर्म परायण ऋषि अपने शिष्य, भार्या और पुत्र आदि के साथ वास करने लगे। उन्होंने कालक्षेप करने के लिए वहाँ धान बोया। गौतमजी के प्रभाव से उस वन में सब ओर आनंद छा गया।

एक बार वहाँ गौतम के आश्रम में जाकर बसे हुए ब्राह्मणों की स्त्रियाँ जल के प्रसंग को लेकर अहल्या पर नाराज हो गईं। उन्होंने अपने पतियों को उकसाया। उन्होंने गौतम का अनिष्ट करने के लिए गणेशजी की आराधना की। भक्त पराधीन गणेशजी ने प्रकट होकर वर माँगने के लिए कहा, तब ये बोले—भगवन्! यदि आप हमें वर देना चाहते हैं, तो ऐसा कोई उपाय कीजिए, जिससे समस्त ऋषि डाँट-फटकारकर गौतम को आश्रम से बाहर निकाल दें।

गणेशजी ने कहा—ऋषियो! तुम सब लोग सुनो। इस समय तुम उचित कार्य नहीं कर रहे हो। बिना किसी अपराध के उन पर क्रोध करने के कारण तुम्हारी हानि ही होगी। जिन्होंने पहले उपकार किया हो, उन्हें यदि दुःख दिया जाए तो वह अपने लिए हितकारक नहीं होता है। जब उपकारी को दुःख दिया जाता है, तब उससे इस जगत् में अपना ही नाश होता है।

अपराधं बिना तस्मै क्रुध्यतां हानिरेव च।
उपस्कृतं पुरांयैस्तु तेम्यो दुःख हितं नहि॥
यदा च दीयते दुःखं तदा नाशो भवेदिह।

(शि.पु. को रु.सं. 25/14-15)

ऐसी तपस्या करके उत्तम फल की सिद्धि की जाती है। स्वयं ही शुभ फल

का परित्याग करके अहितकारक फल को नहीं ग्रहण किया जाता। ब्रह्माजी ने जो यह कहा है कि असाधु कभी साधुता को और साधु कभी असाधुता को नहीं ग्रहण करता, यह बात ठीक ही जान पड़ती है, निश्चय ही पहले उपवास के करण जब तुम लोगों को दुःख भोगना पड़ा था, तब महर्षि गौतम ने जल की व्यवस्था करके तुम्हें सुख दिया, परंतु इस समय तुम सब लोग उन्हें दुःख दे रहे हो। संसार में ऐसा कार्य करना कदापि उचित नहीं है। इस बात पर तुम लोग सर्वथा विचार कर लो। स्त्रियों की शक्ति से मोहित तुम लोग यदि मेरी बात नहीं मानोगे तो तुम्हारा यह बरताव गौतम के लिए अत्यंत हितकारक ही होगा, इसमें संशय नहीं है। ये मुनिश्रेष्ठ! गौतम तुम्हें पुनः निश्चय ही सुख देंगे। अतः उनके साथ छल करना कदापि उचित नहीं। इसलिए तुम लोग कोई दूसरा वर माँगो।

गणेशजी ने ऋषियों से जो यह बात कही, वह यद्यपि उनके लिए हितकर थी, तो भी उन्होंने इसे नहीं स्वीकार किया। तब भक्तों के अधीन होने के कारण उन शिवकुमार ने कहा, "तुम लोगों ने जिस वस्तु के लिए प्रार्थना की है, उसे मैं अवश्य करूँगा। पीछे जो होना होगा, वह होकर ही रहेगा।" ऐसा कहकर वे अंतर्धान हो गए। उसके बाद उन दुष्ट ऋषियों के प्रभाव से तथा उन्हें प्राप्त हुए वर के कारण जो घटना हुई, वह ध्यान देने योग्य है। वहाँ गौतम के खेत में जो धान और जौ थे, उसके पास गणेशजी एक दुर्बल गाय बनकर गए। दिए हुए वर के कारण वह गो काँपती हुई वहाँ जाकर धान और जौ चरने लगी। इसी समय देववश गौतमजी वहाँ आ गए। वे दयालु ठहरे, इसलिए मुट्ठी भर तिनके लेकर उन्हीं से उस गो को हाँकने लगे। उन तिनकों का स्पर्श होते ही गौ पृथ्वी पर गिर पड़ी और ऋषि के देखते ही देखते उसी क्षण मर गई। वे दूसरे-दूसरे (द्वेषी) ब्राह्मणों और उनकी दुष्ट स्त्रियाँ वहाँ छिपे हुए सबकुछ देख रहे थे। उस गो के गिरते ही वे सब के सब बोल उठे, 'गौतम ने यह क्या कर डाला?' गौतम भी आश्चर्यचकित हो अहल्या को बुलाकर व्यथित हृदय से दुःख पूर्वक बोले—देवी! यह क्या हुआ, कैसे हुआ? जान पड़ता है परमेश्वर मुझ पर कुपित हो गए हैं। अब क्या करें, मुझे तो गो हत्या लग गई।

उसी समय ब्राह्मण और उनकी पत्नियाँ गौतम को डाँटने और दुर्वचनों द्वारा

अहल्या को पीड़ित करने लगीं। उनके दुर्बुद्धि शिष्य और पुत्र भी गौतम को बारंबार फटकारने और धिक्कारने लगे।

ब्राह्मण बोले—अब तुम्हें अपना मुँह नहीं दिखाना चाहिए। यहाँ से चले जाओ। गो हत्यारे का मुँह देखने पर तत्काल वस्त्र सहित स्नान करना चाहिए। जब तक तुम इस आश्रम में रहोगे, तब तक अग्निदेव और पितर हमारे दिए हुए किसी भी द्रव्य-कव्य को ग्रहण नहीं करेंगे। इसीलिए पापी गो-हत्यारे! तुम परिवार सहित यहाँ से अन्यत्र चले जाओ, विलंब न करो। ऐसा कहकर उन सबने उन्हें पत्थरों से मारना आरंभ किया। वे गालियाँ दे-देकर गौतम और अहल्या को सताने लगे। उन दुष्टों के मारने और धमकाने पर गौतम बोले, ''मुनियो! मैं यहाँ से अन्यत्र जाकर रहूँगा।'' ऐसा कहकर गौतम उस स्थान से तत्काल निकल गए और उन सब की आज्ञा से एक कोस दूर जाकर उन्होंने अपने लिए आश्रम बनाया। वहाँ जाकर भी ब्राह्मणों ने कहा, ''जब तक तुम्हारे ऊपर हत्या लगी है, तब तक तुम्हें कोई यज्ञ-यागादि कर्म नहीं करना चाहिए। किसी भी वैदिक देवयज्ञ या पितृयज्ञ के अनुष्ठान का तुम्हें अधिकार नहीं रह गया है।''

मुनिवर गौतम उनके कथनानुसार किसी तरह एक पक्ष बिताकर उस दुःख से दुःखी हो बारंबार उन मुनियों से अपनी शुद्धि के लिए प्रार्थना करने लगे। उनके दीन भाव से प्रार्थना करने पर ब्राह्मणों ने कहा—गौतम, तुम अपने पाप को प्रकट करते हुए तीन बार सारी पृथ्वी की परिक्रमा करो। फिर लौटकर यहाँ एक महीने तक व्रत करो। उसके बाद उस ब्रह्मगिरि की एक सौ एक परिक्रमा करने के पश्चात् तुम्हारी शुद्धि होगी अथवा यहाँ गंगाजी का जल लाकर उन्हीं के जल से स्नान करो तथा एक करोड़ पार्थिव शिवलिंग बनाकर महादेवजी की आराधना करो। फिर गंगा में स्नान करके इस पर्वत की ग्यारह बार परिक्रमा करो। तत्पश्चात् सौ घड़ों के जल से पार्थिव शिवलिंग को स्नान कराने पर तुम्हारा उद्धार होगा।'' ऋषियों के इस प्रकार कहने पर गौतम ने बहुत अच्छा कहकर उनकी बात मान ली। वे बोले, ''मुनिवरो! मैं आप श्रीमानों की आज्ञा से यहाँ पार्थिव पूजन तथा ब्रह्मगिरि की परिक्रमा करूँगा।'' ऐसा कहकर मुनिश्रेष्ठ गौतम ने उस पर्वत की परिक्रमा करने के पश्चात् पार्थिव लिंगों का निर्माण करके उनका पूजन किया। साध्वी अहल्या ने भी साथ रहकर वह सबकुछ किया। उस समय शिष्य-प्राशिष्य

उन दोनों की सेवा करते थे।

———★———

पत्नी सहित गौतम की आराधना से संतुष्ट हो भगवान् शिव का उन्हें दर्शन देना, गंगा का वहाँ स्थापित होकर स्वयं भी स्थिर होना, गंगा का गौतमी (या गोदावरी) नाम से और शिव का त्र्यंबक ज्योतिर्लिंग नाम से विख्यात होना तथा इन दोनों की महिमा

पत्नी सहित गौतम ऋषि के इस प्रकार आराधना करने पर संतुष्ट हुए भगवान् शिव वहाँ शिवा और प्रथम गणों के साथ प्रकट हो गए। तदनंतर प्रसन्न हुए कृपानिधान शंकरजी ने कहा—महामुने! मैं तुम्हारी उत्तम भक्ति से बहुत प्रसन्न हूँ। तुम कोई वर माँगो। उस समय महात्मा शंभु के सुंदर रूप को देखकर आनंदित हुए गौतम ने भक्तिभाव से शंकर को प्रणाम करके उनकी स्तुति की तथा हाथ जोड़कर वे उनके सामने खड़े हो गए और बोले, ''देव! मुझे निष्पाप कर दीजिए।''

भगवान् शिव ने कहा—मुने! तुम धन्य हो, कृतकृत्य हो, और सदा ही निष्पाप हो। इन दुष्टों ने तुम्हारे साथ छल किया है। जगत् के लोग तुम्हारे दर्शन से पापरहित हो जाते हैं। फिर सदा मेरी भक्ति में तत्पर रहनेवाले तुम क्या पापी हो? मुने, जिन दुरात्माओं ने तुम पर अत्याचार किया है, वे ही पापी, दुराचारी और हत्यारे हैं। उनके दर्शन से दूसरे लोग पापिष्ट हो जाएँगे। वे सब के सब कृतघ्न हैं। उनका कभी भी उद्धार नहीं हो सकता है।

महादेवजी की यह बात सुनकर महर्षि गौतम मन-ही-मन बड़े विस्मित हुए। उन्होंने भक्तिपूर्वक शिव को प्रणाम करके हाथ जोड़कर पुनः इस प्रकार कहा—महेश्वर! उन ऋषियों ने तो मेरा बहुत बड़ा उपकार किया। यदि उन्होंने यह बरताव न किया होता तो मुझे आपका दर्शन कैसे होता? धन्य हैं वे महर्षि, जिन्होंने मेरे लिए परम कल्याणकारी कार्य किया है। उनके इस दुराचार से ही मेरा महान् स्वार्थ सिद्ध हुआ है। गौतम की यह बात सुनकर महेश्वर बड़े प्रसन्न हुए।

शिवजी बोले—विप्रवर! तुम धन्य हो, सभी ऋषियों में श्रेष्ठतर हो, मैं तुम

पर बहुत प्रसन्न हूँ, ऐसा जानकर तुम मुझ से वर माँगो।

गौतम बोले—नाथ! आप सच कहते हैं, तथापि पाँच आदमियों ने जो कह दिया या कर दिया, वह अन्यथा नहीं हो सकता है। अतः जो हो गया, सो हो गया, हे देवेश! यदि आप प्रसन्न हैं तो मुझे गंगा प्रदान कीजिए और ऐसा करके लोक का महान् उपकार कीजिए, आपको मेरा नमस्कार है। यह कहकर गौतम ने देवेश्वर भगवान् शिव के दोनों चरणारबिंद पकड़ लिये और लोकहित की कामना से नमस्कार किया। तब शंकर देव ने पृथ्वी और स्वर्ग के सारभूत जल को निकालकर, जिसे उन्होंने पहले से ही रख छोड़ा था और विवाह में ब्रह्माजी को दिए हुए जल से जो कुछ शेष रह गया था, वह सब भक्त वत्सल शंभु ने उन गौतम मुनि को दे दिया। उस समय गंगाजी परम सुंदर स्त्री का रूप धारण करके वहाँ खड़ी हुईं। तब मुनिवर गौतम ने उन गंगाजी की स्तुति करके उन्हें नमस्कार किया।

गौतम बोले—गंगे! तुम धन्य हो, कृतकृत्य हो! तुमने संपूर्ण भुवन को पवित्र किया है। इसलिए निश्चित रूप से नरक में गिरते हुए मुझ गौतम को पवित्र करो।

तदनंतर शिवजी ने गंगा से कहा—देवी! तुम मुनि को पवित्र करो और तुरंत वापस न जाकर वैवस्तव मनु के अट्ठाईसवें कलियुग तक यहीं रहो। गंगा ने कहा—महेश्वर यदि मेरा माहात्म्य सब नदियों से अधिक हो और अंबिका तथा गणों के साथ आप भी यहाँ रहें, तभी मैं इस धरातल पर रहूँगी।

गंगा की बात सुनकर भगवान् शिव बोले—गंगे! तुम धन्य हो! मेरी बात सुनो! मैं तुमसे अलग नहीं, तथापि मैं तुम्हारे कथनानुसार यहाँ सदा स्थित रहूँगा। तुम भी स्थित हो जाओ। अपने स्वामी परमेश्वर शिव की यह बात सुनकर गंगा ने मन-ही-मन प्रसन्न हो उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की। इसी समय देवता, प्राचीन ऋषि, अनेक उत्तम तीर्थ और नाना प्रकार के क्षेत्र वहाँ आ पहुँचे। उन सबने बड़े आदर से जय-जयकार करते हुए गौतम, गंगा तथा गिरिशायी शिव का पूजन किया। तदनंतर उन सब देवताओं ने मस्तक झुका हाथ जोड़कर दोनों की प्रसन्नतापूर्वक स्तुति की। उस समय प्रसन्न हुई गंगा और गिरीश ने उनसे कहा—श्रेष्ठ देवताओ! वर माँगो, तुम्हारा प्रिय करने की इच्छा से वह वर हम तुम्हें देंगे।

देवता बोले—देवेश्वर! यदि आप संतुष्ट हैं और सरिताओं में श्रेष्ठ गंगे! यदि

आप भी प्रसन्न हैं, तो हमारा तथा मनुष्यों का प्रिय करने के लिए आप कृपापूर्वक यहाँ निवास करें।

गंगा बोली—देवताओ! फिर तो सबका प्रिय करने के लिए आप लोग स्वयं यहाँ क्यों नहीं रहते? मैं तो गौतमजी के पाप का प्रक्षालन करने जैसे आई हूँ, उसी तरह लौट जाऊँगी। आपके समाज में यहाँ मेरी कोई विशेषता समझी जाती है, इस बात का पता कैसे लगे? यदि आप यहाँ मेरी विशेषता सिद्ध कर सकें तो मैं अवश्य यहाँ रहूँगी, इसमें संशय नहीं है।

सब देवताओं ने कहा—सरिताओं में श्रेष्ठ गंगे! सबके परम सुहृदय बृहस्पतिजी जब-जब सिंह राशि पर स्थित होंगे, तब-तब हम सब लोग यहाँ आया करेंगे, इसमें संशय नहीं है। ग्यारह वर्षों तक लोगों का जो पातक यहाँ प्रक्षालित होगा, उससे मलिन हो जाने पर हम उसी पापराशि को धोने के लिए आदरपूर्वक तुम्हारे पास आएँगे। सरिद्वरे! महादेवि! अतः तुमको और भगवान् शंकर को समस्त लोकों पर अनुग्रह तथा हमारा प्रिय करने के लिए यहाँ नित्य निवास करना चाहिए। गुरु जब तक सिंह राशि में रहेंगे, तभी तक हम यहाँ निवास करेंगे। उस समय तुम्हारे जल में त्रिकाल स्नान और भगवान् शंकर का दर्शन करके हम शुद्ध होंगे। फिर तुम्हारी आज्ञा लेकर अपने स्थान को लौटेंगे।

इस प्रकार उन समस्त देवताओं तथा महर्षि गौतम के प्रार्थना करने पर भगवान् शंकर और सरिताओं में श्रेष्ठ गंगा दोनों वहाँ स्थित हो गए। वहाँ की गंगा गौतमी (गोदावरी) नाम से विख्यात हुई और भगवान् शिव का ज्योतिर्लिंग 'त्र्यंबक' कहलाया। यह ज्योतिर्लिंग महान् पातकों का नाश करनेवाला है। इसी दिन से लेकर जब-जब बृहस्पति सिंह राशि में स्थित होते हैं, तब-तब सब तीर्थ क्षेत्र, देवता, पुष्कर आदि सरोवर, गंगा आदि नदियाँ तथा श्री विष्णु आदि देवगण अवश्य ही गौतमी के तट पर पधारते और वास करते हैं। यह त्र्यंबक नामक प्रसिद्ध ज्योतिर्लिंग गौतमी के तट पर स्थित है और बड़े-बड़े पातकों का नाश करनेवाला है। जो भक्तिभाव से इस त्र्यंबक लिंग का दर्शन, पूजन, स्तवन एवं वंदन करता है, वह समस्त पापों से मुक्त हो जाता है।

———★———

बैद्यनाथेश्वर ज्योतिर्लिंग के प्राकट्य की कथा तथा महिमा

राक्षसराज रावण, जो बड़ा अभिमानी और अपने अहंकार को प्रकट करनेवाला था, उत्तम पर्वत कैलास पर भक्तिभाव से भगवान् शिव की आराधना कर रहा था। कुछ काल तक आराधना करने पर जब महादेव प्रसन्न हुए, तब वह शिव की प्रसन्नता के लिए दूसरा तप करने लगा। पुलस्त्य कुलनंदन रावण ने सिद्धि के स्थान हिमालय पर्वत से दक्षिण वृक्षों से भरे हुए वन में पृथ्वी पर एक बहुत बड़ा गड्ढा खोदकर उसमें अग्नि की स्थापना की और उसके पास ही भगवान् शिव को स्थापित करके हवन आरंभ किया। ग्रीष्म ऋतु में वह पाँच अग्नियों के बीच बैठता, वर्षा ऋतु में खुले मैदान में चबूतरे पर सोता और शीतकाल में जल के भीतर खड़ा रहता। इस प्रकार तीन प्रकार से उसकी तपस्या चलती थी। इस रीति से रावण ने बहुत तप किया तो भी दुरात्माओं के लिए जिनको रिझाना कठिन है, वे परमात्मा महेश्वर उस पर प्रसन्न नहीं हुए। तब महामनस्वी दैत्यराज रावण ने अपना मस्तक काटकर शंकरजी का पूजन आरंभ किया। विधिपूर्वक शिव की पूजा करके वह अपना एक-एक सिर काटता और भगवान् को समर्पित कर देता था। इस तरह उसने क्रमश: अपने नौ सिर काट डाले। जब एक ही सिर बाकी रह गया, तब भक्त वत्सल भगवान् शंकर संतुष्ट एवं प्रसन्न हो वहीं उसके सामने प्रकट हो गए। भगवान् शिव ने उसके सभी मस्तकों को पूर्ववत् नीरोग करके, उसे उसकी इच्छा के अनुसार अनुपम बल प्रदान किया। भगवान् शिव का कृपा प्रसाद पाकर राक्षसराज रावण ने नतमस्तक हो, हाथ जोड़कर उनसे कहा, देवेश्वर! प्रसन्न होइए! मैं आपको लंका में ले चलता हूँ। आप मेरे इस मनोरथ को सफल कीजिए, मैं आपकी शरण में आया हूँ।

रावण के ऐसा कहने पर भगवान् शंकर बड़े संकट में पड़ गए और अनमने होकर बोले—राक्षसराज! मेरी सारगर्भित बात सुनो! तुम मेरे इस उत्तम लिंग को भक्तिभाव से अपने घर ले जाओ, परंतु जब तुम इसे कहीं भूमि पर रख दोगे, तब यह वहीं सुस्थिर हो जाएगा, इसमे संदेह नहीं है। अब तुम्हारी जैसी इच्छा हो, वैसा करो।

भगवान् शंकर के ऐसा कहने पर राक्षसराज रावण 'बहुत अच्छा' कहकर शिवलिंग साथ लेकर अपने घर की ओर चला, परंतु मार्ग में भगवान् शिव की

माया से उसे मूत्रोत्सर्ग की इच्छा हुई। पुलस्त्य नंदन रावण सामर्थ्यशाली होने पर भी मूत्र के वेग को रोक न सका। इसी समय वहाँ आसपास एक ग्वाले को देखकर उसने प्रार्थनापूर्वक वह शिवलिंग उसके हाथ में थमा दिया और स्वयं मूत्र त्याग के लिए बैठ गया। एक मुहूर्त बीतते-बीतते वह ग्वाल उस शिवलिंग के भार से अत्यंत पीड़ित हो व्याकुल हो गया, तब उसने उसे पृथ्वी पर रख दिया। फिर तो वह हीरकमय शिवलिंग वहीं स्थित हो गया। वह दर्शन करने मात्र से संपूर्ण अभीष्टों को देनेवाला और पाप राशि को हर लेनेवाला है। वही शिवलिंग तीनों लोकों में वैद्यनाथेश्वर नाम से प्रसिद्ध हुआ, जो सत्पुरुषों को भोग और मोक्ष देनेवाला है। यह दिव्य उत्तम एवं श्रेष्ठ ज्योतिर्लिंग दर्शन और पूजन से समस्त पापों को हर लेता है और मोक्ष की प्राप्ति कराता है। वह शिवलिंग जब संपूर्ण लोकों के हित के लिए वहीं स्थित हो गया, तब रावण भगवान् शिव का परम उत्तम वर पाकर अपने घर को चला गया। वहाँ जाकर उस महान् असुर ने बड़े हर्ष के साथ अपनी प्रिया मंदोदरी को सारी बातें कह सुनाईं। इंद्र आदि संपूर्ण देवताओं और निर्मल मुनियों ने जब यह समाचार सुना, तब वे परस्पर सलाह करने आए। उन सब देवताओं ने वहाँ बड़ी प्रसन्नता के साथ शिव का विशेष पूजन किया। वहाँ भगवान् शंकर का प्रत्यक्ष दर्शन करके देवताओं ने उस शिवलिंग की विधिवत् स्थापना की और उसका 'वैद्यनाथ' नाम रखकर उसकी वंदना और स्तवन करके वे स्वर्गलोक को चले गए।

भगवान् शिव का परम उत्तम वर पाकर महान् असुर रावण अपने घर को चल पड़ा। वहाँ उसने अपनी प्रिया से सब बातें कहीं और वह अत्यंत आनंद का अनुभव करने लगा। इधर इस समाचार को सुनकर देवता घबरा गए कि पता नहीं वह देवद्रोही महादुष्ट रावण भगवान् शिव के वरदान से बल पाकर क्या करेगा। उन्होंने नारदजी को भेजा। नारदजी ने जाकर रावण से कहा—तुम कैलास पर्वत को उठाओ, तब पता लगेगा कि शिवजी का दिया हुआ वरदान कहाँ तक सफल हुआ। रावण को यह बात जँच गई। उसने जाकर कैलास को उखाड़ लिया। इससे सारा कैलास हिल उठा। तब गिरिजा के कहने पर महादेवजी ने रावण को घमंडी समझकर इस प्रकार का श्राप दिया। रे दुष्ट भक्त दुर्बुद्धि रावण! तू अपने बल पर इतना घमंड न कर। तेरी इन भुजाओं का घमंड चूर करनेवाला वीर पुरुष शीघ्र ही इस जगत् में अवतीर्ण होगा।

इस प्रकार वहाँ जो घटना हुई, उसे नारदजी ने सुना। रावण भी प्रसन्नचित्त हो जैसे आया था, उसी तरह अपने घर को लौट गया। भगवान् शंकर ने उसे कोई वरदान नहीं दिया और विवश होकर श्राप लेकर ही उसे लौटना पड़ा।

———★———

नागेश्वर ज्योतिर्लिंग का प्रादुर्भाव और उसकी महिमा

'दारुका' नाम से प्रसिद्ध 'राक्षसी' थी, जो पार्वती के वरदान से सदा घमंड में भरी रहती थी। अत्यंत बलवान राक्षस 'दारुक' उसका पति था। उसने बहुत से राक्षसों को साथ लेकर वहाँ सत्पुरुषों का संहार मचा रखा था। वह लोगों के यज्ञ धर्म का नाश करता फिरता था। पश्चिम समुद्र के तट पर उसका एक वन था, जो संपूर्ण समृद्धि से भरा रहता था। उस वन का विस्तार सब ओर से सोलह योजन था। दारुका अपने विलास के लिए जहाँ जाती थी, वहीं भूमि, वृक्ष तथा अन्य सब उपकरणों से युक्त वह वन भी चला जाता था। देवी पार्वती ने ऐसे वन की देख-रेख का भार दारुका को सौंप दिया था। दारुका अपने पति दारुक के साथ वहाँ रहती थी, वहाँ दारुक सबको डराता था। उससे पीड़ित हुई प्रजा ने महर्षि और्वकी की शरण में जाकर उनको अपना दुःख सुनाया। और्वकी ने शरणागतों की रक्षा के लिए राक्षसों को यह शाप दे दिया, ''ये राक्षस यदि पृथ्वी पर प्राणियों की हिंसा या यज्ञों का विध्वंस करेंगे तो उसी समय अपने प्राणों से हाथ धो बैठेंगे।'' देवताओं ने जब यह बात सुनी, तब उन्होंने दुराचारी राक्षसों पर चढ़ाई कर दी। राक्षस घबराए। यदि वे लड़ाई में देवताओं को मारते हैं तो मुनि के श्राप से स्वयं मर जाते, यदि नहीं मारते तो पराजित होकर भूखों मर जाते।

उस अवस्था में राक्षसी 'दारुका' ने कहा, ''भवानी के वरदान से मैं इस सारे वन को, जहाँ चाहे ले जा सकती हूँ।'' यह कहकर वह समस्त वन को ज्यों-का-त्यों लेकर समुद्र में जा बसी। राक्षस लोग पृथ्वी पर न रहकर जल में निर्भय रहने लगे और वहाँ प्राणियों को पीड़ा देने लगे। एक बार बहुत सी नावें उधर से निकलीं, जो मनुष्यों से भरी थीं। राक्षसों ने उनमें बैठे हुए सब लोगों को पकड़ लिया और बेड़ियों से बाँधकर धमकियाँ देने लगे। उनमें 'सुप्रिय' नाम से प्रसिद्ध एक वैश्य था, जो उस दल का सरदार था। वह बड़ा सदाचारी, भस्म-रुद्राक्षधारी

तथा भगवान् शिव का परम भक्त था। सुप्रिय शिव की पूजा किए बिना भोजन नहीं करता था। वह स्वयं तो शंकर का पूजन करता ही था, बहुत से अपने साथियों को भी उसने शिव की पूजा सिखा दी थी। फिर सब लोग 'ॐ नमः शिवायः' मंत्र का जप और शंकरजी का ध्यान करने लगे। सुप्रिय को भगवान् शिव का दर्शन भी होता था। दारुक राक्षस को जब इस बात का पता लंगा, तब उसने आकर सुप्रिय को धमकाया। उसके साथी राक्षस सुप्रिय को मारने दौड़े, उन राक्षसों को आया देख सुप्रिय के नेत्र भय से कातर हो गए, वह बड़े प्रेम से शिव का चिंतन और उनके नामों का जप करने लगा—देवेश्वर शंकर! मेरी रक्षा कीजिए। कल्याणकारी त्रिलोकीनाथ! दुष्टहंता भक्त वत्सल शिव! हमें इस दुष्ट से बचाइए। देव! अब आप ही मेरे सर्वस्व हैं, प्रभो! मैं आपका हूँ, आपके अधीन हूँ और आप ही सदा मेरे जीवन एवं प्राण हैं।

सुप्रिय के इस प्रकार प्रार्थना करने पर भगवान् शंकर एक विवर से निकल पड़े। उनके साथ ही चार दरवाजों का एक मंदिर भी प्रकट हो गया। उसके मध्य भाग में अद्भुत ज्योतिर्मय शिवलिंग प्रकाशित हो रहा था। उसके साथ शिव परिवार के सब लोग विद्यमान थे। सुप्रिय ने उनका दर्शन करके पूजन किया, पूजित होने पर भगवान् शंभु ने प्रसन्न हो स्वयं पाशुपतास्त्र लेकर प्रधान-प्रधान राक्षसों, उनके सारे उपकरणों तथा सेवकों को भी तत्काल ही नष्ट कर दिया और उन दुष्टों से शंकर ने अपने भक्त सुप्रिय की रक्षा की। तत्पश्चात् अद्भुत लीला करनेवाले और लीला से ही शरीर धारण करनेवाले शंभु ने उस वन को यह वरदान दिया, "आज से इस वन में सदा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चारों वर्णों के धर्म का पालन हो। यहाँ श्रेष्ठ मुनि निवास करें और तमोगुणी राक्षस इसमें कभी न रहें। शिव धर्म के उपदेशक, प्रचारक और प्रवर्तक लोग इसमें निवास करें।"

इसी समय राक्षसी दारुका ने दीन चित्त से देवी पार्वती की स्तुति की। देवी पार्वती प्रसन्न हो गईं और बोलीं, "बताओ, तेरा क्या कार्य करूँ?" उसने कहा, "मेरे वंश की रक्षा कीजिए।"

देवी बोलीं, "मैं सच कहती हूँ, तेरे कुल की रक्षा करूँगी।" ऐसा कहकर देवी भगवान् शिव से बोलीं—नाथ! आपकी यह बात युग के अंत में सच्ची होगी। तब तक तामसी सृष्टि भी रहे, ऐसा मेरा विचार है। मैं आपकी ही हूँ और आपके

ही आश्रय में रहती हूँ। अतः मेरी बात को भी प्रमाणित (सत्य) कीजिए। यह राक्षसी दारुका देवी है, मेरी ही शक्ति है और राक्षसियों में बलिष्ठ है। अतः यही राक्षसों के राज्य का शासन करे। ये राक्षस पत्नियाँ, जिन पुरुषों को पैदा करेंगी, वे सब मिलकर इस वन में निवास करें, ऐसी मेरी इच्छा है।

शिव बोले—प्रिये! यदि तुम ऐसी बात कहती हो तो मेरा यह वचन सुनो, मैं भक्तों का पालन करने के लिए प्रसन्नतापूर्वक इस वन में रहूँगा। जो पुरुष यहाँ वर्ण-धर्म के पालन में तत्पर हो प्रेमपूर्वक मेरा दर्शन करेगा, वह चक्रवर्ती राजा होगा। कलयुग के अंत और सतयुग के आरंभ में महासेन का पुत्र वीरसेन राजाओं का भी राजा होगा। वह मेरा भक्त और अत्यंत पराक्रमी होगा और यहाँ आकर मेरा दर्शन करेगा। दर्शन करते ही वह चक्रवर्ती सम्राट् हो जाएगा।

सूतजी बोले—ब्राह्मणो! इस प्रकार बड़ी-बड़ी लीलाएँ करनेवाले वे दंपती परस्पर हास्ययुक्त वार्त्तालाप करके स्वयं वहाँ स्थित हो गए। ज्योतिर्लिंग स्वरूप महादेवजी वहाँ 'नागेश्वर' कहलाए और शिवा देवी 'नागेश्वरी' नाम से विख्यात हुईं। वे दोनों ही सत्पुरुषों को प्रिय हैं। इस प्रकार ज्योतिषियों के स्वामी नागेश्वर नामक महादेवजी ज्योतिर्लिंग के रूप में प्रकट हुए। वे तीनों लोकों की संपूर्ण कामनाओं को सदा पूर्ण करनेवाले हैं।

———★———

रामेश्वर ज्योतिर्लिंग का आविर्भाव तथा माहात्म्य

भगवान् विष्णु के रामावतार में जब रावण सीता को हरकर लंका ले गया, तब सुग्रीव के साथ अठारह पद्म वानर सेना लेकर श्रीराम समुद्र तट पर आए। वहाँ वे विचार करने लगे कि कैसे हम समुद्र को पार करेंगे और कैसे रावण को जीतेंगे। इतने में ही श्रीराम को प्यास लगी। उन्होंने जल माँगा और वानर मीठा जल ले आए। श्रीराम ने प्रसन्न होकर वह जल ले लिया। तब तक उन्हें स्मरण हो आया, 'मैंने अपने स्वामी भगवान् शंकर का दर्शन तो किया ही नहीं, फिर यह जल कैसे ग्रहण कर सकता हूँ।' ऐसा कहकर उन्होंने उस जल को नहीं पिया। जल रख देने के पश्चात् रघुनंदन ने पार्थिव पूजन किया। आह्वान आदि सोलह उपचारों को प्रस्तुत करके विधिपूर्वक बड़े प्रेम से शंकरजी की अर्चना की। प्रणाम

तथा दिव्य स्तोत्रों द्वारा यत्नपूर्वक शंकरजी को संतुष्ट करके श्रीराम ने भक्तिभाव से उनसे प्रार्थना की।

श्रीराम बोले—उत्तम व्रत का पालन करनेवाले मेरे स्वामी देव महेश्वर! आपको मेरी सहायता करनी चाहिए। आपके सहयोग के बिना मेरे कार्य की सिद्धि अत्यंत कठिन है। रावण भी आपका ही भक्त है, परंतु आपके दिए हुए वरदान से वह सदा दर्प में भरा रहता है। वह त्रिभुवन विजयी महावीर है। इधर मैं भी आपका दास हूँ, सर्वथा आपके अधीन रहनेवाला हूँ। सदाशिव! यह विचार कर आपको मेरे प्रति पक्षपात करना चाहिए।

इस प्रकार प्रार्थना और बारंबार नमस्कार करके उन्होंने उच्च स्वर से 'जयशंकर,' 'जय शिव' इत्यादि का उद्घोष करते हुए शिव का स्तवन किया। फिर उनके मंत्र के जप और ध्यान में तत्पर हो गए। तत्पश्चात् पुनः पूजन किया तथा आराधना की, उस समय भगवान् शंकर उन पर बहुत प्रसन्न हुए और वे ज योतिर्मय महेश्वर वामांगभूता पार्वती तथा पार्षदगणों के साथ तत्काल वहाँ प्रकट हो गए। श्रीराम की भक्ति से संतुष्ट होकर महेश्वर ने कहा, "श्रीराम! तुम्हारा कल्याण हो, वर माँगो!" उस समय उनका रूप देखकर वहाँ उपस्थित हुए सब लोग पवित्र हो गए। शिव धर्म परायण श्रीरामजी ने स्वयं उनका पूजन किया। फिर भाँति-भाँति स्तुति एवं प्रणाम करके उन्होंने भगवान् शिव से लंका में रावण के साथ होने वाले युद्ध में अपने लिए विजय की प्रार्थना की। तब रामभक्ति से प्रसन्न हो महेश्वर ने कहा, "महाराज तुम्हारी जय हो!" भगवान् शिव के दिए हुए विजयसूचक वर एवं युद्ध की आज्ञा पाकर श्रीराम ने नतमस्तक हो हाथ जोड़कर उनसे पुनः प्रार्थना की—

मेरे स्वामी शंकर! यदि आप संतुष्ट हैं, तो जगत् के लोगों को पवित्र करने तथा दूसरों की भलाई करने के लिए सदा यहाँ निवास करें।

श्रीराम के ऐसा कहने पर भगवान् शिव वहाँ ज्योतिर्लिंग के रूप में स्थित हो गए। तीनों लोकों में रामेश्वर के नाम से उनकी प्रसिद्धि हुई। उनके प्रभाव से ही अपार समुद्र को अनायास पार करके श्रीराम ने रावण आदि राक्षसों का शीघ्र ही संहार किया और अपनी प्रिया सीता को प्राप्त किया। तब से इस भूतल पर 'रामेश्वर' की अद्भुत महिमा का प्रसार हुआ। भगवान् रामेश्वर सदा भोग और

मोक्ष देनेवाले तथा भक्तों की इच्छा पूर्ण करनेवाले हैं।

जो दिव्य गंगाजल से रामेश्वर शिव को भक्तिपूर्वक स्नान कराता है, वह जीवन्मुक्त हो जाता है। इस संसार में देव दुर्लभ समस्त भोगों का उपभोग करके अंत में उत्तम ज्ञान पाकर वह निश्चय ही कैवल्य मोक्ष को प्राप्त कर लेता है।

———★———

घुष्मेश्वर शिव का प्रादुर्भाव तथा उनकी महिमा

दक्षिण दिशा में एक श्रेष्ठ पर्वत है, जिसका नाम देवगिरि है। वह देखने में अद्‌भुत तथा नित्य परम शोभा से संपन्न है। उसी के निकट भरद्वाज कुल में उत्पन्न 'सुधर्मा' नामक ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मण रहते थे। उनकी प्रिय पत्नी का नाम 'सुदेहा' था, वे सदा शिवधर्म के पालन में तत्पर रहती थीं, घर के कामकाज में कुशल थीं और सदा पति की सेवा में लगी रहती थीं। द्विज श्रेष्ठ सुधर्मा भी देवताओं और अतिथियों के पूजक थे। वे वेदवर्णित मार्ग पर चलते और नित्य अग्निहोत्र किया करते थे। तीनों काल की संध्या करने से उनकी कांति सूर्य के समान उद्‌दीप्त थी। वे वेद-शास्त्र के मर्मज्ञ थे और शिष्यों को पढ़ाया करते थे। धनवान होने के साथ ही बड़े दाता थे। सौजन्य आदि सद्‌गुणों के भाजन थे। शिव संबंधी पूजनादि कार्य में ही सदा लगे रहते थे। वे स्वयं तो शिवभक्त थे ही, शिवभक्तों से बड़ा प्रेम भी रखते थे। शिव भक्तों को भी वे बहुत प्रिय थे।

यह सबकुछ होने पर भी उनके पुत्र नहीं था। इससे ब्राह्मण को तो दुःख नहीं था, परंतु उनकी पत्नी बहुत दुःखी रहती थीं। पड़ोसी और दूसरे लोग भी उसे ताना मारा करते थे। वे पति से बार-बार पुत्र के लिए प्रार्थना करती थीं। पति उनको ज्ञानोपदेश देकर समझाते थे, परंतु उसका मन नहीं मानता था। अंत में ब्राह्मण ने कुछ उपाय भी किया, परंतु वह सफल नहीं हुआ। तब ब्राह्मणी ने अत्यंत दुःखी हो बहुत हठ करके अपनी बहन 'घुष्मा' से पति का दूसरा विवाह करा दिया। विवाह से पहले सुधर्मा ने उसको समझाया कि 'इस समय तो तुम बहन से प्यार कर रही हो, परंतु जब इसके पुत्र हो जाएगा, तब इससे घृणा करने लगोगी।' उसने वचन दिया कि मैं बहन से कभी डाह नहीं करूँगी।' विवाह हो जाने पर 'घुष्मा' दासी की भाँति बड़ी बहन की सेवा करने लगी। 'सुदेहा' भी भी उसे बहुत प्यार

करती रही। घुष्मा अपनी शिवभक्त बहन की आज्ञा से नित्य एक सौ एक पार्थिव शिवलिंग बनाकर विधिपूर्वक पूजा करने लगी। पूजा करके वह निकटवर्ती तालाब में उनका विसर्जन करती थी। शंकरजी की कृपा से उसके एक सुंदर, सौभाग्यवान् और सद्गुण-संपन्न पुत्र हुआ। घुष्मा का कुछ मान बढ़ा। इससे सुदेहा के मन में डाह पैदा हो गई। समय पर उस पुत्र का विवाह हुआ। पुत्रवधू घर में आ गई। अब तो वह और जलने लगी। उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई और एक दिन उसने रात में सोते हुए पुत्र को छुरे से उसके शरीर के टुकड़े-टुकड़े करके मार डाला और कटे हुए अंगों को उसी तालाब में ले जाकर डाल दिया, जहाँ घुष्मा प्रतिदिन पार्थिव लिंगों का विसर्जन करती थी। पुत्र के अंगों को उस तालाब में फेंककर वह लौट आई और घर में सुखपूर्वक सो गई।

घुष्मा सवेरे उठकर प्रतिदिन का पूजनादि कर्म करने लगी। श्रेष्ठ ब्राह्मण सुधर्मा स्वयं भी नित्यकर्म में लग गए। इसी समय उनकी ज्येष्ठ पत्नी सुदेहा भी उठी और बड़े आनंद से घर के कामकाज करने लगी, क्योंकि उसके हृदय में पहले जो ईर्ष्या की आग जलती थी, वह अब बुझ गई थी। प्रात:काल जब बहू ने उठकर पति की शैया को देखा तो वह खून से भीगी दिखाई दी और उस पर शरीर के कुछ टुकड़े दृष्टिगोचर हुए, इससे उसको बड़ा दुःख हुआ। उसने सास (घुष्मा) के पास जाकर निवेदन किया—उत्तम व्रत का पालन करनेवाले आर्य आपके पुत्र कहाँ गए? उनकी शैया रक्त से भीगी हुई है और उस पर शरीर के कुछ टुकड़े दिखाई देते हैं। हाय! मैं मारी गई। किसने यह दुष्ट कर्म किया है? ऐसा कहकर वह बेटे की प्रिय पत्नी भाँति-भाँति से करुण विलाप करती हुई रोने लगी। सुधर्मा की बड़ी पत्नी सुदेहा भी उस समय 'हाय! मैं मारी गई' ऐसा कहकर दुःख में डूब गई। उसने ऊपर से तो दुःख व्यक्त किया, परंतु मन-ही-मन हर्ष से भरी हुई थी। घुश्मा भी उस समय उस वधू के दुःख को सुनकर अपने नित्य पार्थिव पूजन के व्रत से विचलित नहीं हुई। उसका मन बेटे को देखने के लिए तनिक भी उत्सुक नहीं हुआ। उसके पति की भी ऐसी ही अवस्था थी। जब तक नित्य नियम पूरा नहीं हुआ, तब तक उन्हें दूसरी किसी बात की चिंता नहीं हुई।

दोपहर को पूजन समाप्त होने पर घुष्मा ने अपने पुत्र की भयंकर शैया पर दृष्टिपात किया, तथापि उसने मन में किंचित्मात्र भी दुःख नहीं माना। वह सोचने

लगी—जिन्होंने यह बेटा दिया था, वे ही इसकी रक्षा करेंगे। वे भक्त-प्रिय कहलाते हैं, काल के भी काल हैं और सत्पुरुषों के आश्रय हैं। एकमात्र वे प्रभु सर्वेश्वर शंभु ही हमारे रक्षक हैं। वे माला गूँथनेवाले पुरुष की भाँति जिंदगी जोड़ते हैं, उनको अलग भी करते हैं। अतः अब मेरे चिंता करने से क्या होगा? इस तरह का विचार कर उसने शिव के भरोसे धैर्य धारण किया और उस समय दुःख का अनुभव नहीं किया। वह पूर्ववत् पार्थिव शिवलिंगों को लेकर स्वस्थ चित्त से शिव के नामों का उच्चारण करती हुई उस तालाब के किनारे गई। उन पार्थिव लिंगों को तालाब में डालकर जब वह लौटने लगी तो उसे अपना पुत्र उसी तालाब के किनारे खड़ा दिखाई दिया।

उस समय वहाँ अपने पुत्र को जीवित देखकर उसकी माता घुष्मा को न तो हर्ष हुआ, न विषाद। वह पूर्ववत् स्वस्थ बनी रही। इस समय उस पर संतुष्ट हुए ज्योतिस्वरूप महेश्वर शिव शीघ्र उसके सामने प्रकट हो गए।

शिव बोले—सुमुखि! मैं तुम पर प्रसन्न हूँ। वर माँगो! तेरी दुष्ट सौत ने इस बच्चे को मार डाला था। अतः मैं उसे त्रिशूल से मारूँगा।

तब घुष्मा ने शिव को प्रणाम करके उस समय यह वर माँगा—"नाथ! यह सुदेहा मेरी बड़ी बहन है, अतः आपको इसकी रक्षा करनी चाहिए।"

शिव बोले—उसने तो बड़ा भारी अपकार किया है, तुम उस पर उपकार क्यों करती हो? दुष्ट कर्म करनेवाली सुदेहा तो मार डालने के ही योग्य है।

घुष्मा ने कहा—देव! आपके दर्शन मात्र से पातक नहीं ठहरता। इस समय आपका दर्शन करके उसका पाप भस्म हो जाए। जो अपकार करनेवालों पर भी उपकार करता है, उसके दर्शन मात्र से पाप बहुत दूर भाग जाता है।

अपकारेषु यश्चैव ह्युपकारं करोति वै।
तस्य दर्शनामात्रेण पापं दूरतरं ब्रजते॥

प्रभो! यह अद्भुत भगवद्वाम्य मैंने सुन रखा है। इसीलिए सदा शिव! जिसने ऐसा कुकर्म किया है, वही करे, मैं ऐसा क्यों करूँ? (मुझे तो बुरा करनेवाले का भी भला ही करना है।)

घुष्मा के ऐसा कहने पर दयासिंधु भक्त वत्सल महेश्वर और भी प्रसन्न हुए तथा इस प्रकार बोले, "घुष्मे! तुम कोई और भी वर माँगो! मैं तुम्हारे लिए

हितकर वर अवश्य दूँगा, क्योंकि तुम्हारी इस भक्ति से और विकारशून्य स्वभाव से मैं बहुत प्रसन्न हूँ।''

भगवान् शिव की बात सुनकर घुष्मा बोली, ''प्रभो! यदि आप वर देना चाहते हैं तो लोगों की रक्षा के लिए सदा यहाँ निवास कीजिए और मेरे नाम से ही आपकी ख्याति हो।'' तब महेश्वर शिव ने अत्यंत प्रसन्न होकर कहा, ''मैं तुम्हारे ही नाम से 'घुष्मेश्वर' कहलाता हुआ सदा यहाँ निवास करूँगा और सबके लिए सुखदायक होऊँगा। मेरा शुभ ज्योतिर्लिंग 'घुष्मेश' नाम से प्रसिद्ध हो। यह सरोवर शिवलिंगों का आलय हो जाए और इसीलिए इसका तीनों लोकों में 'शिवालय' नाम प्रसिद्ध हो। यह सरोवर सदा दर्शन मात्र से संपूर्ण अभीष्टों का देनेवाला हो। सुव्रते! तुम्हारे वश में होनेवाली एक सौ एक पीढ़ियों तक ऐसे ही श्रेष्ठ पुत्र उत्पन्न होंगे, इसमें संशय नहीं है। वे सबके सब सुंदर स्त्री, उत्तम धन और पूर्ण आयु से संपन्न होंगे, चतुर और विद्वान् होंगे, उदार तथा भोग और मोक्ष रूपी फल पाने के अधिकारी होंगे। एक सौ पीढ़ियों तक सभी पुत्रगणों में बढ़े-चढ़े होंगे। तुम्हारे वंश का ऐसा विस्तार बड़ा शोभादायक होगा।''

ऐसा कहकर भगवान् शिव वहाँ ज्योतिर्लिंग के रूप में स्थित हो गए। उनकी 'घुष्मेश' नाम से प्रसिद्धि हुई और सरोवर का नाम 'शिवालय' हो गया। सुधर्मा, घुष्मा और सुदेहा—तीनों ने आकर तत्काल ही उस शिवलिंग की एक सौ एक दक्षिणावर्त परिक्रमा की। पूजा करके परस्पर मिलकर मन का मैल दूर करके वे सब बड़े सुख का अनुभव करने लगे। पुत्र को जीवित देखकर सुदेहा बहुत लज्जित हुई और पति तथा घुष्मा से क्षमा प्रार्थना करके उसने अपने पाप का प्रायश्चित्त किया।

इस प्रकार वह घुश्मेश्वर लिंग प्रकट हुआ, उसका दर्शन और पूजन करने से सदा सुख की वृद्धि होती है।

———★———

शिवजी की आराधना से विष्णु को सुदर्शन चक्र की प्राप्ति तथा उससे दैत्यों का संहार

हरिश्वर-लिंग की शुभ कथा सुनो! भगवान् विष्णु ने पूर्वकाल में हरिश्वर शिव से ही सुदर्शन चक्र प्राप्त किया था। एक समय की बात है, दैत्य अत्यंत

प्रबल होकर लोगों को पीड़ा देने और धर्म का लोप करने लगे। उन महाबली और पराक्रमी दैत्यों से पीड़ित हो, देवताओं ने देवरक्षक भगवान् विष्णु से अपना सारा दुःख कहा। तब श्री हरि कैलास पर जाकर भगवान् शिव की विधिपूर्वक आराधना करने लगे। वे हजार नामों से शिव की स्तुति करते तथा प्रत्येक नाम पर एक कमल चढ़ाते थे। तब भगवान् शंकर ने विष्णु को भक्तिभाव की परीक्षा करने के लिए लाए हुए एक हजार कमलों में से एक कमल को छिपा दिया। शिव की माया के कारण घटित हुई इस अद्भुत घटना का भगवान् विष्णु को पता नहीं लगा। उन्होंने एक फूल कम जानकर उसकी खोज आरंभ की। दृढतापूर्वक उत्तम व्रत का पालन करनेवाले श्रीहरि ने भगवान् शिव की प्रसन्नता के उद्देश्य से सारी पृथ्वी पर भ्रमण किया, परंतु कहीं भी उन्हें वह फूल नहीं मिला। तब विशुद्धचेता विष्णु ने एक फूल की पूर्ति के लिए अपने कमल सदृश एक नेत्र को ही निकालकर चढ़ा दिया। यह देख सबका दुःख दूर करनेवाले भगवान् शंकर बड़े प्रसन्न हुए और वहीं उनके सामने प्रकट हो गए। प्रकट होकर, वे श्रीहरि से बोले—हरे! मैं तुम पर बहुत प्रसन्न हूँ। तुम इच्छानुसार वर माँगो! मैं तुम्हें मनोवांच्छित वस्तु दूँगा। तुम्हारे लिए मुझे कुछ भी अदेय नहीं है।

विष्णु बोले—नाथ! आपके सामने मुझे क्या कहना है। आप अंतर्यामी हैं, अतः सबकुछ जानते हैं, तथापि आपके आदेश का गौरव रखने के लिए कहता हूँ। दैत्यों ने सारे जगत् को पीड़ित कर रखा है। सदाशिव! दैत्यों के वध में मेरा अपना अस्त्र-शस्त्र काम नहीं देता। हे परमेश्वर! इसीलिए मैं आपकी शरण में आया हूँ।

श्री विष्णु का यह वचन सुनकर देवाधिदेव महादेव ने तेजोराशिमय अपना सुदर्शन चक्र उन्हें दे दिया। भगवान् विष्णु ने उन समस्त प्रबल दैत्यों का उस चक्र द्वारा बिना परिश्रम के ही संहार कर डाला। इससे सारा जगत् स्वस्थ हो गया। देवताओं को भी सुख मिला और अपने लिए ऐसे आयुध को पाकर भगवान् विष्णु भी अत्यंत प्रसन्न एवं सुखी हो गए।

□

भगवान् शिव के सहस्रनाम

(भगवान् विष्णु द्वारा पठित शिव सहस्रनाम स्तोत्र)

श्रुयतां मो ऋषिश्रेष्ठा येन तुष्टो महेश्वरः।
तदहं कथयाम्यद्य शैवं नाम सहस्रकम्॥1॥

जिससे महेश्वर संतुष्ट होते हैं, वह शिव सहस्रनाम स्तोत्र तुम सबको सुनाता हूँ।

विष्णुरुवाच

शिवो हरो मृडो रुद्रः पुष्करः पुष्पलोचनः।
आर्थिगम्यः सदाचारः शर्वः शम्भुमहेश्वरः॥2॥

भगवान् विष्णु ने कहा—

1. **शिवः** — कल्याण स्वरूप।
2. **हरः** — भक्तों के पाप-ताप को हर लेनेवाले।
3. **मृडः** — सुखदाता।
4. **रुद्रः** — दुःख दूर करनेवाले।
5. **पुष्करः** — आकाश स्वरूप।
6. **पुष्पलोचन** — पुष्प के समान खिले हुए नेत्रवाले।
7. **अर्थिगम्य** — प्राणियों को प्राप्त होनेवाले।
8. **सदाचारः** — श्रेष्ठ आचरणवाले।

9. **शर्वः** — संहारकारी।
10. **शम्भुः** — कल्याण निकेतन।
11. **महेश्वरः** — महान् ईश्वर ॥1॥

चन्द्रापीऽश्चन्द्रमौलिर्विश्वं विश्वम्भरेश्वरः।
वेदान्त सारसदोहः कपाली नीललोहितः ॥3॥

12. **चन्द्रापीडः** — चंद्रमा को शिरोभूषण के रूप में धारण करनेवाले।
13. **चन्द्रमौलिः** — सिर पर चंद्रमा का मुकुट धारण करनेवाले।
14. **विश्वम्** — सर्वस्वरूप।
15. **विश्वम्भरेश्वरः** — विश्व का भरण-पोषण करनेवाले विष्णु के भी ईश्वर।
16. **वेदान्तसारसंदोह** — वेदांत के सारतत्त्व सच्चिदानंदमय ब्रह्म की साकार मूर्ति।
17. **कपाली** — हाथ में कपाल धारण करनेवाले।
18. **नीललोहित** — (गले में) नील और (शेष अंगों में) लोहितवर्ण वाले।

ध्याना धारोऽपरिच्छेद्यो गौरीर्भतागणेश्वरः।
अष्टमूर्तिविश्वमूर्तिस्त्रिवर्गस्वर्गसाधनः ॥

19. **ध्यानाचारः** — ध्यान के आधार।
20. **अपरिच्छेद्यः** — देशकाल और वस्तु की सीमा से अविभाज्य।
21. **गौरीभर्ताः** — पार्वतीजी के पति।
22. **गणेश्वरः** — प्रथम गणों के स्वामी।
23. **अष्टमूर्तिः** — जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चंद्रमा, पृथ्वी और यजमान—इन आठ रूपोंवाले।
24. **विश्वमूर्तिः** — अखिल ब्रह्मांडमय विराट् पुरुष।

25. **त्रिवर्गस्वर्ग साधनः** — धर्म, अर्थ, काम तथा स्वर्ग की प्राप्ति करानेवाले।

ज्ञानगम्यो दृढप्रज्ञो देवदेवस्त्रिलोचनः।
वाम देवो महादेवः पटुः परिवृढो दृढः ॥5॥

26. **ज्ञानगम्य** — ज्ञान से ही अनुभव में आने के योग्य।
27. **दृढप्रज्ञ** — सुस्थिर बुद्धिवाले।
28. **देव देव** — देवताओं के भी आराध्य।
29. **त्रिलोचन** — सूर्य, चंद्रमा और अग्नि रूप तीन नेत्रोंवाले।
30. **वामदेव** — लोक के विपरीत स्वभाववाले देवता।
31. **महादेव** — महान् देवता ब्रह्मादिकों के भी पूजनीय।
32. **पटु** — सबकुछ करने में समर्थ एवं कुशल।
33. **परिवृढ** — स्वामी।
34. **दृढ** — कभी विचलित न होने वाले।

विश्वरूपो विरुपाक्षो वागीशः शुचिसत्तमः।
सर्वप्रमाणसम्वादी वृषाङ्को वृषवाहनः ॥6॥

35. **विश्वरूप** — जगत् स्वरूप।
36. **विरुपाक्ष** — विकट नेत्रवाले।
37. **वागीश** — वाणी के अधिपति।
38. **शुचिसत्तम्** — पवित्र पुरुषों में भी सबसे श्रेष्ठ।
39. **सर्वप्रमाण सम्वादी** — संपूर्ण प्रमाणों में सामंजस्य स्थापित करनेवाले।
40. **वृषांक** — अपनी ध्वजा में वृषभ का चिह्न धारण करनेवाले।
41. **वृषवाहन** — वृषभ या धर्म को वाहन बनानेवाले ॥6॥

ईशः पिनाकी खट्वाङ्गी चित्रवेषश्चिरूतनः।
तमोहरो महायोगी गोप्ता ब्रह्मा च धूर्जटिः॥

42. ईश — स्वामी या शासक।
43. पिनाकी — पिनाक नामक धनुष धारण करनेवाले।
44. खट्वांगी — खाट के पाए की आकृति का एक आरुध धारण करनेवाले।
45. चित्रवेषः — विचित्र वेषधारी।
46. चिरूतनः — पुराण (अनादि) पुरुषोत्तम।
47. तमोहरः — अज्ञान का अंधकार दूर करनेवाले।
48. महायोगी — महान् योग से संपन्न
49. गोप्ता — रक्षक।
50. ब्रह्मा — सृष्टिकर्ता।
51. धूर्जटिः — जटा के भार से युक्त।

कालकालः कृत्तिवासाः सुभगः प्रणवात्मकः।
उन्नघः पुरुषों जुस्यो दुर्वासाः पुरशासनः॥

52. काल कालः — काल के भी काल।
53. कृत्तिवासाः — गजासुर के चर्म को वस्त्र के रूप में धारण करनेवाले।
54. सुभगः — सौभाग्यशाली।
55. प्रणवात्मकः — ओंकार स्वरूप अथवा प्रणव के वाच्यार्थ।
56. उन्नघः — बंधनरहित।
57. पुरुषः — अंतर्यामी आत्मा।
58. जुस्यः — सेवन करने योग्य।
59. दुर्वासाः — दुर्वासा नामक मुनि के रूप में अवतीर्ण।
60. पुरशासनः — तीन मायामय असुर-पुरों का दमन करनेवाले।

दिव्यायुधः स्कन्दगुरुः परमेष्ठी परात्परः।
अनादिमध्यनिधनो गिरीशो गिरिजाधवः॥

61. दिव्यायुधः — पाशुपत आदि दिव्य अस्त्र धारण करनेवाले।
62. स्कन्दगुरुः — कार्तिकेयजी के पिता।
63. परमेष्ठीः — अपनी प्रकृष्ट महिमा में स्थिर रहनेवाले।
64. परात्परः — कारण के भी कारण।
65. अनादिमध्यनिधानः — आदि, मध्य और अंत से रहित।
66. गिरीशः — कैलास के अधिपति।
67. गिरिजाधवः — पार्वती के पति।

कुबेरबन्धुः श्रीकण्ठो लोकवर्णोत्तमो मृदुः।
समाधिवेद्यः कोदण्डी नीलकण्ठः परश्वधीः॥

68. कुबेरबन्धुः — कुबेर को अपना बंधु (मित्र) माननेवाले।
69. श्रीकण्ठ — श्याम सुषमा से सुशोभित कंठवाले।
70. लोकवर्णोत्तमः — समस्त लोकों ओर वर्णों से श्रेष्ठ।
71. मृदुः — कोमल स्वभाववाले।
72. समाधिवेद्यः — समाधि अथवा चित्त वृत्तियों के निरोध से अनुभव योग्य।
73. को दण्डी — धनुर्धर।
74. नीलकण्ठः — कंठ में हलाहल विष का नील चिह्न धारण करनेवाले।
75. परश्वधी — परशुधारी।

विशालाक्षो मृगव्याघ्रः सुरेशः सुर्यतापनः।
धर्मधाम क्षमाक्षेत्रं भगवान् भगनेत्रभित॥

76. विशालाक्षः — बड़े-बड़े नेत्रवाले।
77. मृगव्याधः — वन में व्याघ्र या किरात के रूप में प्रकट होकर

शूकर के ऊपर बाण चलानेवाले।

78. **सुरेशः** — देवताओं के स्वामी।
79. **सूर्यतापनः** — सूर्य को भी दंड देनेवाले।
80. **धर्मधाम** — धर्म के आशय।
81. **क्षमाक्षेत्रम** — क्षमा के उत्पत्ति स्थान।
82. **भगवान्** — संपूर्ण ऐश्वर्य, धर्म, यश, श्री, ज्ञान तथा वैराग्य।
83. **भगनेत्रभित्** — भगदेवता के नेत्र का भेदन करनेवाले।

उग्रः पशुपतिस्ताक्ष्र्यः प्रियभक्तः परंतपः।
दाता दया करो दक्षः कपर्दी कामशासनः ॥12॥

84. **उग्रः** — संहारकाल में भयंकर रूप धारण करनेवाले।
85. **पशुपतिः** — मायारूप में बँधे हुए पाशबद्ध (जीवों) के तत्त्वज्ञान द्वारा मुक्त करके यथार्थ रूप में उनका पालन करनेवाले।
86. **ताक्ष्र्यः** — मुरुडरूप।
87. **प्रियभक्तः** — भक्तों से प्रेम रखनेवाले।
88. **परंतपः** — शत्रुता रखनेवालों को संताप देनेवाले।
89. **दाता** — दानी।
90. **दयाकरः** — दयानिधान अथवा कृपा करनेवाले।
91. **दक्षः** — कुशल।
92. **कपर्दी** — जटाजूटधारी।
93. **कामशासनः** — कामदेव का दमन करनेवाले।

श्मशाननिलयः सूक्ष्मः श्मशानस्यो महेश्वरः।
लोककर्त्ता मृगपतिर्णमहाकर्ता महौषधि॥13॥

94. **श्मशाननिलयः** — श्मशानवासी।
95. **सूक्ष्मः** — इंद्रियातीत।

96. **श्मशानस्थः** — श्मशान भूमि में विश्राम करनेवाले।
97. **महेश्वरः** — महान् ईश्वर या परमेश्वर।
98. **लोककर्ता** — जगत् की सृष्टि करनेवाले।
99. **मृगपतिः** — मृग के पालक या पशुपति।
100. **महाकर्ता** — विराट् ब्रह्मांड की सृष्टि करते समय महान् कर्तव्य से संपन्न।
101. **महोसधिः** — भवरोग का निवारण करने के लिए महान् ओषधि रूप।

उत्तरो गोपति गोप्ता ज्ञानगम्यः पुरातनः।
नीतिः सुनीतिः शुद्धात्मा सोमः सोमरतः सुखी ॥14॥

102. **उत्तरः** — संसार-सागर से पार उतारनेवाले।
103. **गोपतिः** — स्वर्ग, पृथ्वी, पशु, वाणी, किरण, इंद्रिय और जल के स्वामी।
104. **गोप्ता** — रक्षक।
105. **ज्ञानगम्यः** — तत्त्व ज्ञान के द्वारा ज्ञान स्वरूप से ही जानने योग्य।
106. **पुरातनः** — सबसे पुराने।
107. **नीतिः** — न्याय स्वरूप।
108. **सुनीतिः** — उत्तम नीतिवाले।
109. **शुद्धात्मा** — विशुद्ध आत्म-स्वरूप।
110. **सोमः** — उमा सहित।
111. **सोमरतः** — चंद्रमा पर प्रेम रखनेवाले।
112. **सुखी** — आत्मानंद से परिपूर्ण।

सोमपोऽमृतपः सौम्यो महातेजा महाद्युतिः।
तेजोमयोऽमृतयोऽन्नमश्च सुधापतिः ॥15॥

113. **सोमपः** — सोमपान करनेवाले अथवा सोमनाथ रूप में चंद्रमा के पालक।

114. **अमृतपः** — समाधि द्वारा स्वरूप भूत पालक। अमृत का आस्वादन करनेवाले।

115. **सौम्यः** — भक्तों के लिए सौम्यरूपधारी।

116. **महातेजाः** — महान् तेज से संपन्न।

117. **महाद्युतिः** — परमाकांतिमान्।

118. **तेजोमयः** — प्रकाश स्वरूप।

119. **अमृतमयः** — अमृत रूप।

120. **अन्नमयः** — अन्न रूप।

121. **सुधापतिः** — अमृत के पालक।

अजातशत्रु आलोकः सम्भाव्यो हव्यवाहनः।
लोककरो वेदकरः सूत्रकारः सनातनः॥16॥

122. **अजातशत्रुः** — जिनके मन में कभी किसी के प्रति शत्रुभाव नहीं पैदा हुआ, ऐसे समदर्शी।

123. **आलोकः** — प्रकाश स्वरूप।

124. **सम्भाव्यः** — सम्भावनीय।

125. **हव्य वाहनः** — अग्नि स्वरूप।

126. **लोककरः** — जगत् के स्रष्टा।

127. **वेदकरः** — वेदों को प्रकट करनेवाले।

128. **सूत्रकारः** — ढक्कानाद के रूप में चतुर्दश माहेश्वर सूत्रों के प्रणेता।

129. **सनातनः** — नित्य स्वरूप।

महर्षिकपिलाचार्यो विश्वदीप्तिस्त्रिलोचनः।
पिनाकपाणिर्भूदेवः स्वास्तिदः स्वस्तिकृत्सुधीः॥17॥

130. **महर्षिकपिलाचार्यः** — सांख्यशास्त्र के प्रणेता भगवान् कपिलाचार्य।

131. **विश्वदीप्तिः** — अपनी प्रभा से सबको प्रकाशित करनेवाले।

132. त्रिलोचनः — तीनों लोकों के दृष्टा।
133. पिनाकपाणिः — हाथ में पिनाक नामक धनुष धारण करनेवाले।
134. भूदेवः — पृथ्वी के देवता-ब्राह्मण अथवा पार्थिव लिंग रूप।
135. स्वस्तिदः — कल्याणदाता।
136. स्वास्तिकृतः — कल्याणकारी।
137. सुधीः — विशुद्ध बुद्धिवाले।

धातृधामा धामकरः सर्वगः सर्वगोचरः।
ब्रह्मसृग्विश्वसृक्सर्गः कर्णिकारप्रियः कविः ॥18॥

138. धातृधामाः — विश्व का धारण-पोषण करने में समर्थ तेजवाले।
139. धामकरः — तेज की सृष्टि करनेवाले।
140. सर्वगः — सर्वव्यापी।
141. सर्वगोचरः — सबमें व्याप्त।
142. ब्रह्मसृक् — ब्रह्माजी के उत्पादक।
143. विश्वसृक् — जगत् के स्रष्टा।
144. सर्गः — सृष्टि स्वरूप।
145. कणिकारप्रियः — कनेर के फूल को पसंद करनेवाले।
146. कविः — त्रिकालदर्शी।

शाखो विशाखो गोशाखः शिवो भिषगनुत्तमः।
गङ्गाप्लवोदको भव्यः पुस्कलः स्थपतिः स्थिरः ॥19॥

147. शाखः — कार्तिकेय के छोटे भाई शाख स्वरूप।
148. विशाखः — स्कंद के छोटे भाई विशाख स्वरूप अथवा विशाख नामक ऋषि।
149. गोशाखः — वेदवाणी की शाखाओं का विस्तार करनेवाले।
150. शिवः — मंगलमय।

151. **भिषगनुत्तमः** — भगरोग का निवारण करनेवाले वैद्यों (ज्ञानियों) में सर्वश्रेष्ठ।

152. **गङ्गप्लोवोदकः** — गंगा के प्रवाह रूप जल को सिर पर धारण करनेवाले।

153. **भव्यः** — कल्याण स्वरूप।

154. **पुस्कलाः** — पूर्णतम अथवा व्यापक।

155. **स्थपतिः** — ब्रह्मांडरूपी भवन के निर्माता (थवई)।

156. **स्थिरः** — अचश्चल अथवा स्थाणुरूप।

विनितात्मा विधेयात्मा भूतवाहन सारथिः।
सगणो गणकायश्च सुकीर्तिशछन्नसंशयः ॥20॥

157. **विजितात्मा** — मन को वश में रखनेवाले।

158. **विधेयात्मा** — शरीर, मन और इंद्रियों से अपनी इच्छा के अनुसार काम लेने वाले।

159. **भूतवाहनसारथिः** — पांचभौतिक रथ (शरीर) का संचालन करनेवाले बुद्धि रूप सारथि।

160. **सगणः** — प्रमथ गणों के साथ रहनेवाले।

161. **गणकायः** — गण स्वरूप।

162. **सुकीर्तिः** — उत्तम कीर्तिवाले।

163. **छिन्नसंशयः** — संशयों को काट देनेवाले।

कामदेवः कामपालो भस्मोद्धूलितविग्रहः।
भस्मप्रियो भस्मशायी कामी कान्तः कृतागमः ॥

164. **कामदेवः** — मनुष्यों द्वारा अभिलाषित समस्त कामनाओं के अधिष्ठाता परम देव।

165. **कामपालः** — सकल भक्तों की कामनाओं को पूर्ण करनेवाले।

166. **भस्मोद्धूलितविग्रहः** — अपने श्रीअंगों में भस्म रमानेवाले।
167. **भस्म प्रियः** — भस्म के प्रेमी।
168. **भस्मशायी** — भस्म पर शयन करनेवाले।
169. **कामी** — अपने प्रिय भक्तों को चाहनेवाले।
170. **कान्तः** — परम कामनीय प्राणवल्लभ रूप।
171. **कृतागमः** — समस्त तंत्र शास्त्रों के रचयिता ॥21॥

समावर्तोऽनिवृत्तात्मा धर्मपुञ्जजः सदाशिवः।
अकल्मषश्चतुर्बाहुर्दरावासो दुरासदः ॥22॥

172. **समावर्तः** — संसारचक्र को भलीभाँति घुमानेवाले।
173. **आनिवृत्तात्माः** — सर्वत्र विद्यमान होने के कारण जिनकी आत्मा कहीं से हटी नहीं है।
174. **धर्मपुञ्जः** — धर्म या पुण्य की राशि।
175. **सदाशिवः** — निरंतर कल्याणकारी।
176. **अकल्मषः** — पापरहित।
177. **चतुर्बाहुः** — चार भुजाधारी।
178. **दुरावासः** — जिन्हें योगीजन भी बड़ी कठिनाई से अपने हृदय में बसा पाते हैं।
179. **दुरासदः** — परम दुर्जय।

दुर्लभो दुर्गमो दुर्गः सर्वायुधविशारदः।
अध्यात्मयोगनिलयः सुतन्तुस्तन्तुवर्धनः ॥23॥

180. **दुर्लभः** — भक्तिहीन पुरुषों को कठिनाई से प्राप्त होनेवाले।
181. **दुर्गमः** — जिनके निकट पहुँचना किसी के लिए कठिन है।
182. **दुर्गः** — पापताप से रक्षा करने के लिए दुर्गरूप अथवा दुर्ज्ञेय।

183. सर्वायुधविशारदः — संपूर्ण अस्त्रों के प्रयोग की कला में कुशल।
184. अध्यात्मयोगनिलयः — अध्यात्म योग में स्थित।
185. सुतन्तुः — सुंदर विस्तृत जगत् रूप तंतुवाले।
186. तन्तुवर्धनः — जगत् रूप तंतु को बढ़ानेवाले।

शुभाङ्ग लोकसारङ्गो जगदीशो जनार्दनः।
भस्मशुद्धिकरो मेरुरोजस्वी शुद्धविग्रहः ॥24॥

187. शुभाङ्गः — सुंदर अंगोंवाले।
188. लोकसारङ्गः — लोकसारग्राही।
189. जगदीशः — जगत् के स्वामी।
190. जनार्दनः — भक्तजनों की याचना के आलंबन।
191. भस्मशुद्धिकरः — भस्म से शुद्धि का संपादन करनेवाले।
192. मेरुः — सुमेरु पर्वत के समान केंद्ररूप।
193. ओजस्वी — तेज और बल से संपन्न।
194. शुद्र विग्रहः — निर्मल शरीरवाला।

असाध्य साधुसाध्यश्चा भृत्यकर्मटरुपधृक।
हिरणयरेताः पौराणो रिपुजीवहरो बली॥25॥

195. असाध्यः — साधन-भजन से दूर रहनेवाले लोगों के लिए अलभ्य।
196. साधुसाध्यः — साधन भजनपरायण सत्पुरुषों के लिए सुलभ।
197. भृत्यमर्कटरुपधृकः — श्रीराम के सेवक वानर हनुमान का रूप धारण करनेवाले।
198. हिरणयरेताः — अग्नि स्वरूप अथवा सुवर्णमय वीर्यवाले।
199. पौराणः — पुराणों द्वारा प्रतिपादित।
200. रिपुजीवहरः — शत्रुओं के प्राण हर लेनेवाले।
201. बली — बलशाली।

महाह्रदो महागर्तः सिद्धवृन्दारवन्दितः।
व्याघ्रचर्माम्बरो व्याली महाभूतो महानिधिः ॥26॥

202. **महाह्रदः**	—	परमानंद के महान् सरोवर।
203. **महागर्तः**	—	महान् आकाशरूप।
204. **सिद्धवृन्दारवन्दितः**	—	सिद्धों और देवताओं द्वारा वंदित।
205. **व्याघ्रचर्माम्बरः**	—	व्याघ्र चर्म को वस्त्र के समान धारण करनेवाले।
206. **व्यालीः**	—	सर्पों को आभूषण की भाँति धारण करनेवाले।
207. **महाभूतः**	—	त्रिकाल में भी कभी नष्ट न होने वाले महाभूतस्वरूप।
208. **महानिधिः**	—	धन का महान् निवास स्थान ॥26॥

अमृताशोऽमृतवपुः पाञ्चजन्यः प्रभञ्जनः।
पञ्चविंशतितत्त्वस्थः पारिजातः परावरः ॥27॥

209. **अमृताशः**	—	जिनकी आशा कभी विफल न हो, ऐसे अमोघ संकल्प।
210. **अमृतवपुः**	—	जिनका कलेवर कभी नष्ट न हो, ऐसे नित्य विग्रह।
211. **पाञ्चजन्यः**	—	पाञ्चजन्य नामक शंख स्वरूप।
212. **प्रभञ्जनः**	—	वायु स्वरूप अथवा संहारकारी।
213. **पञ्चविंशतितत्वस्थ**	—	प्रकृति, महातत्त्व (बुद्धि) अहंकार, चक्षु, श्रोत, घ्राण, रसना, त्वक्, वाक्, पाणि, पायुपाद, उपस्थ, मन, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश—इन चौबीस जड़ तत्त्वों सहित पच्चीसवें चेतन तत्त्व पुरुष में व्याप्त।
214. **पारिजात**	—	याचकों की इच्छा पूर्ण करने में कल्पवृक्ष रूप।

215. परावर — कारण कार्यरूप।

सुलभः सुव्रतः शुरो ब्रह्मवेदनिधिर्निधिः।
वर्णाश्रम गुरुवर्णी शत्रुजिच्छत्रत्तुतापनः ॥28॥

216. **सुलभः** — नित्य निरंतर चिंतन करनेवाले एक निष्ठ श्रद्धालु भक्त को सुगमता से प्राप्त होनेवाले।
217. **सुव्रतः** — उत्तम व्रतधारी।
218. **शूरः** — शौर्य-संपन्न।
219. **ब्रह्मवेदनिधिः** — ब्रह्मा और वेद के प्रादुर्भाव के स्थान।
220. **निधिः** — जगत् रूपी रत्न के उत्पत्ति स्थान।
221. **वर्णाश्रमगुरुः** — वर्णों और आश्रमों के गुरु (उपदेष्टा)।
222. **वर्णीः** — ब्रह्मचारी।
223. **शत्रुजितः** — अंधकासुर आदि शत्रुओं को जीतनेवाले।
224. **शत्रुतापनः** — शत्रुओं को संताप देनेवाले ॥28॥

आश्रमः क्षपणः क्षामो ज्ञानवानचलेश्वरः।
प्रमाणभूतो दुर्ज्ञेयः सुपर्णो वायुवाहनः ॥29॥

225. **आश्रमः** — सबके विश्राम स्थान।
226. **क्षपणः** — जन्म-मरण के कष्ट का मूलोच्छेद करनेवाले।
227. **क्षामः** — प्रलयकाल में प्रजा को क्षीण करनेवाले।
228. **ज्ञानवानः** — ज्ञानी।
229. **अचलेश्वरः** — पर्वतों अथवा स्थावर पदार्थों के स्वामी।
230. **प्रमाणभूतः** — नित्य सिद्ध प्रमाण रूप।
231. **दुर्ज्ञेयः** — कठिनता से जानने योग्य।
232. **सुपर्णः** — वेदमय सुंदर पंख वाले गरुड रूप।
233. **वायुवाहनः** — अपने भय से वायु को प्रवाहित करनेवाले।

धनुर्धरो धनुवेदो गुणराशिगुर्णाकारः।
सत्यः सत्यपरोऽदीनो धर्माङ्गो धर्म साधनः ॥30॥

234. धनुर्धरः — पिनाकधारी।
235. धनुर्वेदः — धनुर्वेद के ज्ञाता।
236. गुणराशिः — अनंत कल्याणमय गुणों की राशि।
237. गुणाकारः — सद्गुणों की खान।
238. सत्यः — सत्य स्वरूप।
239. सत्यपरः — सत्य परायण
240. अदीनः — दीनता से रहित उदार।
241. धर्माङ्गः — धर्ममय विग्रहवाले।
242. धर्म साधनः — धर्म का अनुष्ठान करनेवाले।

अनन्तदृष्टिरानन्दो दण्डो दमयिता दमः।
अभिवाद्यो महामायो विश्वकर्मविशारदः ॥31॥

243. अनन्तदृष्टिः — असीमित दृष्टिवाले।
244. आनन्दः — परमानंदमय।
245. दण्डः — दुष्टों को दंड देनेवाले अथवा दंड स्वरूप।
246. दमयिताः — दुर्दांत दानवों का दमन करनेवाले।
247. दमः — दमन स्वरूप।
248. अभिवाद्यः — प्रणाम करने योग्य।
249. महामायः — मायावियों को भी मोहनेवाले महामायावी।
250. विश्वकर्म विशारदः — संसार की सृष्टि करने में कुशल।

●

वीतरागो विनीतात्मा तपस्वी भूतभावनः।
उन्मत्तवेषः प्रच्छन्नो जितकामोऽजित प्रियः ॥32॥

251. वीतरागः — पूर्णतया विरक्त।
252. विनीतात्मा — मन से विनयशील अथवा मन को वश में रखनेवाले।

253. **तपस्वी** — तपस्या परायण।
254. **भूतभावनः** — संपूर्ण भूतों के उत्पादक एवं रक्षक।
255. **उन्मत्तवेषः** — पागलों के समान वेष धारण करनेवाले।
256. **प्रच्छन्नः** — माया के परदे में छिपे हुए।
257. **जितकामः** — काम विजयी।
258. **अजितप्रियः** — भगवान् विष्णु के प्रेमी।

कल्याणप्रकृति कल्पः सर्वलोकप्रजापतिः।
तरस्वी तारकोधीमान् प्रधानः प्रभुरव्ययः ॥33॥

259. **कल्याण प्रकृतिः** — कल्याणकारी स्वभाववाले।
260. **कल्पः** — समर्थ।
261. **सर्वलोक प्रजापति** — संपूर्ण लोकों की प्रजा के पालक।
262. **तरस्वी** — वेगशाली।
263. **तारक** — उद्धारक।
264. **धीमान** — विशुद्ध बुद्धि से युक्त।
265. **प्रधानः** — सबसे श्रेष्ठ।
266. **प्रभुः** — सर्व समर्थ।
267. **अव्ययः** — अविनाशी।

लोकपालोऽन्तर्हितात्माकल्पादिः कमलेक्षणः।
वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञोऽनियमोः नियताश्रयः ॥34॥

268. **लोकपालः** — समस्त लोकों की रक्षा करनेवाले।
269. **अन्तर्हितात्मा** — अंतर्यामी आत्मा अथवा अदृश्य स्वरूपवाले।
270. **कल्पादिः** — कल्प के आदिकारण।
271. **कमलेक्षणः** — कमल के समान नेत्रवाले।
272. **वेदशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः** — वेदों और शास्त्रों के अर्थ एवं तत्त्व को जाननेवाले।

273. **अनियमः** — नियंत्रण रहित।

274. **नियताश्रयः** — सबके सुनिश्चित आश्रय स्थान।

चन्द्रः सूर्यः शनिः केतुर्वराङ्गो विद्रुमच्छविः।
भक्तिवश्यः परब्रह्म मृगबाणार्पणोऽनघः ॥35॥

275. **चंद्रः** — चंद्रमा रूप से आह्लादकारी।

276. **सूर्यः** — सबकी उत्पत्ति के हेतु भूत सूर्य।

277. **शनिः** — शनैश्चर रूप।

278. **केतुः** — केतु नाम ग्रह स्वरूप।

279. **वराङ्गः** — सुंदर शरीरवाले।

280. **विद्रुमच्छविः** — मूँगे की सी लाल कांतिवाले।

281. **भक्तिवश्यः** — भक्ति के द्वारा भक्त के वश में होनेवाले।

282. **परब्रह्मः** — परमात्मा।

283. **मृगवाणर्पणः** — मृग रूपधारी यक्ष पर बाण चलानेवाले।

284. **अनघः** — पाप रहित।

अद्रिरयालयः कान्तः परमात्मा जगदगुरुः।
सर्व कर्मालयस्तुष्टो मङ्गल्यो मङ्गलावृतः ॥36॥

285. **अद्रिः** — कैलास आदि पर्वत रूप।

286. **अद्रयालयः** — कैलास और मंदार आदि पर्वतों पर निवास करनेवाले।

287. **कान्तः** — सबके प्रियतम।

288. **परमात्माः** — परब्रह्म परमेश्वर।

289. **जगद्गुरुः** — समस्त संसार के गुरु।

290. **सर्व कर्मालयः** — संपूर्ण कर्मों के आश्रय स्थान।

291. **तुष्टः** — सदा प्रसन्न।

292. **मङ्गल्यः** — मंगलकारी।

293. **मङ्गलावृतः** — मंगलकारिणी शक्ति से संयुक्त।

महातपाः दीर्घतपाः स्थविष्ठः स्थविरो ध्रुवः।
अहः संवत्सरो व्याप्तिः प्रमाणं परमं तपः ॥37॥

294. **महातपाः** — महान् तपस्वी।
295. **दीर्घतपाः** — दीर्घकाल तक तप करनेवाले।
296. **स्थविष्ठः** — अत्यंत स्थूल।
297. **स्थाविरो ध्रुवः** — अति प्राचीन एवं अत्यंत स्थिर।
298. **अहः संवत्सरः** — दिन एवं संवत्सर आदि काल रूप में स्थित, अंशकाल स्वरूप।
299. **व्याप्तिः** — व्यापकता स्वरूप।
300. **प्रमाणमः** — प्रत्यक्षादि, प्रमाणस्वरूप।
301. **परमतपः** — उत्कृष्ट तपस्या स्वरूप।

संवत्सरकरो मन्त्रप्रयत्यः सर्वदर्शनः।
अजः सर्वेश्वरः सिद्धो महारेता महाबलः ॥38॥

302. **संवत्सरकरः** — संवत्सर आदि काल विभाग के उत्पादक।
303. **मन्त्रप्रत्ययः** — वेद आदि यंत्रों से प्रतीत (प्रत्यक्ष) होने योग्य।
304. **सर्वदर्शनः** — सबके साक्षी।
305. **अजः** — अजन्मा।
306. **सर्वेश्वरः** — सबके शासक।
307. **सिद्धः** — सिद्धियों के आश्रय।
308. **महारेताः** — श्रेष्ठ वीर्यवाले।
309. **महाबलः** — प्रमथ गणों की महती सेना से संपन्न।

योगी योग्यो महातेजाः सिद्धिः सर्वादिरग्रहः।
वसुर्वसुमनाः सत्यः सर्वपापहरो हरः ॥39॥

310. **योगी योग्यः** — सुयोग्य योगी।
311. **महातेजाः** — महान् तेज से संपन्न।

312. सिद्धिः — समस्त साधनों के फल।
313. सर्वादिः — सब भूतों के आदि कारण।
314. अग्रहः — इंद्रियों की ग्रहण शक्ति के विषय।
315. वसुः — सब भूतों के वास स्थान।
316. वसुमनाः — उदार मनवाले।
317. सत्यः — सत्य स्वरूप।
318. सर्वपापहरो हरः — समस्त पापों का अपहरण करने के कारण हर नाम से प्रसिद्ध।

सुकीर्तिशोभनः श्रीमान् वेदाङ्गो वेदविन्मुनिः।
भ्राजिष्णुभोजनं, भोक्ता लोकनाथो दुराधरः ॥40॥

319. सुकीर्तिशोभनः — उत्तम कीर्ति से सुशोभित होनेवाले।
320. श्रीमानः — विभूति स्वरूपा उमा से संपन्न।
321. वेदाङ्गः — वेद रूप अंगोंवाले।
322. वेद विन्मुनिः — वेदों का विचार करनेवाले मननशील मुनि।
323. भ्राजिष्णुः — एक रस प्रकाश स्वरूप।
324. भोजनमः — ज्ञानियों द्वारा भोगने योग्य अमृत स्वरूप।
325. भोक्ताः — पुरुष रूप में उपभोग करनेवाले।
326. लोकनाथः — भगवान् विश्वनाथ।
327. दुराधरः — अजितेंद्रिय पुरुषों द्वारा जिनकी आराधना अत्यंत कठिन है।

अमृतः शाश्वतः शान्तो वाणहस्तः प्रतापवान्।
कमण्डलुधरो धन्वी अवाङ्मनसगोचरः ॥41॥

328. अमृत शाश्वतः — सनातन अमृत स्वरूप।
329. शान्तः — शांतिमय।
330. वाणहस्तः — प्रतापवान हाथ में बाण धारण करनेवाले प्रतापी वीर।

331. **कमण्डलुधरः** — कमंडलु धारण करनेवाले।
332. **धन्वी** — पिनाकधारी।
333. **अवाङ्मनसगोचर** — मन और वाणी के अविषय।

अतीन्द्रियो महामायः सर्वावाससश्चतुस्पथः।
कालयोगी महानादो महोत्साहो महाबलः ॥42॥

334. **अतीन्द्रियो महामायः** — इंद्रियातीत एवं महामायावी।
335. **सर्वावासः** — सबके वास स्थान।
336. **चतुष्पथः** — चारों पुरुषार्थों की सिद्धि के एकमात्र मार्ग।
337. **कालयोगीः** — प्रलय के समय सबको काल से संयुक्त करनेवाले।
338. **महानादः** — गंभीर शब्द करनेवाले अथवा अनाहत नाद रूप।
339. **महोत्साहो महाबलः** — महान् उत्साह और बल से संपन्न।

महाबुद्धिमहावीर्यो भूतचारी पुरन्दरः।
निशाचरः प्रेतचारी महाशक्तिर्महाद्युतिः ॥43॥

340. **महाबुद्धिः** — श्रेष्ठ बुद्धिवाले।
341. **महावीर्यः** — अनंत पराक्रमी।
342. **भूतचारीः** — भूतगणों के साथ विचरनेवाले।
343. **पुरन्दरः** — त्रिपुर संहारक।
344. **निशाचरः** — रात्रि में विचरण करनेवाले।
345. **प्रेतचारीः** — प्रेतों के साथ भ्रमण करनेवाले।
346. **महाशक्तिर्महाद्युति** — अनंत शक्ति एवं श्रेष्ठ कांति से संपन्न।

अर्निदेश्यवपुः श्रीमान् सर्वाचार्यमनोगतिः।
बहुश्रतोऽमहामायो नियतात्मा ध्रवोऽध्रुवः ॥44॥

347. **अर्निदेश्यवपुः** — अनिर्वचनीय स्वरूप वाले।

348. श्रीमान् — ऐश्वर्यवान।
349. सर्वाचार्यमनोगतिः — सबके लिए अविचार्य मनोगतिवाले।
350. बहुश्रुतः — बहुज्ञ अथवा सर्वज्ञ।
351. अमहामायः — बड़ी-से-बड़ी माया भी जिन पर प्रभाव नहीं डाल सकती।
352. नियतात्माः — मन को वश में रखनेवाले।
353. ध्रुवाऽध्रुवः — ध्रुव (नित्यकारण) और अध्रुव (अनित्य कार्य) रूप।

ओजस्तेजोद्युतिधरो जनकः सर्वशासनः।
नृत्योप्रियो नित्यनृयः प्रकाशात्मा प्रकाशकः ॥45॥

354. ओजस्तेजोद्युतिधर — ओज (प्राण और बल) तेज (शौर्य आदि गुण) तथा ज्ञान की दीप्ति धारण करनेवाले!
355. जनकः — सबके उत्पादक।
356. सर्वशासनः — सबके शासक।
357. नृत्यप्रियः — नृत्य के प्रेमी।
358. नित्यनृत्यः — प्रतिदिन तांडव नृत्य करनेवाले।
259. प्रकाशात्मा — प्रकाश स्वरूप।
360. प्रकाशकः — सूर्य आदि को भी प्रकाश देनेवाले।

स्पष्टाक्षरो बुधोमन्त्रः समानः सारसम्पल्वः।
युगादिकृद्युगावर्तो गम्भीरो वृषवाहनः ॥46॥

361. स्पष्टाक्षरः — ओंकार रूप स्पष्ट अक्षरवाले।
362. बुधः — ज्ञानवान।
363. मन्त्रः — ऋक, साम और यजुर्वेद के मंत्र स्वरूप।
364. समानः — सबके प्रति समान भाव रखनेवाले।
365. सार सम्पल्वः — संसार सागर से पार होने के लिए नौका स्वरूप।

366. **युगादिकृद्युगावर्तः** — युगादि का आरंभ करनेवाले तथा चारों युगों को चक्र की तरह घुमानेवाले।

367. **गम्भीरः** — गांभीर्य से युक्त।

368. **वृषवाहनः** — नंदी नामक वृषभ पर सवार होने वाले।

इष्टोऽविशिष्टः शिष्टेष्टः सुलभः सार शोधनः।
तीर्थरुपस्तीर्थनामा तीर्थवृश्यस्तु तीर्थदः ॥47॥

369. **इष्टः** — परमानंद स्वरूप होने से सर्वप्रिय।

370. **अविशिष्टः** — संपूर्ण विशेषणों से रहित।

371. **शिष्टेष्टः** — शिष्ट पुरुषों के इष्टदेव।

372. **सुलभः** — अनन्य चित्त से निरंतर स्मरण करनेवाले भक्तों के लिए सुगमता से प्राप्त होने योग्य।

373. **सार शोधनः** — सार तत्त्व की खोज करनेवाले।

374. **तीर्थरूपः** — तीर्थ स्वरूप।

375. **तीर्थनामा** — तीर्थ नामधारी अथवा जिनका नाम भवसागर से पार लगाने वाला है।

376. **तीर्थदृश्य** — तीर्थ सेवन से अपने स्वरूप का दर्शन करानेवाले अथवा गुरु कृपा से प्रत्यक्ष होनेवाले।

377. **तीर्थदः** — चरणोदक स्वरूप तीर्थ देनेवाले।

अपान्निधिरधिष्ठानन्दुर्जयो जयकालवित्।
प्रतिष्ठितः प्रमाणज्ञो हिरणकबचो हरिः ॥48॥

378. **अपान्निधिः** — जल के निधान समुद्र रूप।

379. **अधिष्ठानम्** — उत्पादन कारण रूप से सब भूतों के आश्रय अथवा जगत् रूप प्रपंच के अधिष्ठान।

380. **दुर्जयः** — जिनको जीतना कठिन है।

381. **जयकालवितः** — विजय के अवसर समझनेवाले।

382. **प्रतिष्ठितः** — अपनी महिमा में स्थित।
383. **प्रमाणज्ञः** — प्रमाणों के ज्ञाता।
384. **हिरण्यकवचः** — सुवर्णमय कवच धारण करनेवाले।
385. **हरिः** — श्रीहरि स्वरूप।

विमोचनः सुरगणो विद्येशो विन्दुसंश्रयः।
बालरूपोऽबलोन्मतोऽविकर्त्ता गहनो गुहः ॥49॥

386. **विमोचनः** — संसार बंधन से सदा के लिए छुड़ा देनेवाले।
387. **सुरगणः** — देवसमुदाय रूप।
388. **विद्येशः** — संपूर्ण विद्याओं के स्वामी।
389. **विन्दुसंश्रयः** — बिंदुरूप प्रणव के आश्रय।
390. **बालरूपः** — बालक का रूप धारण करनेवाले।
391. **अबलोन्मत्तः** — विकार रहित।
392. **गहनः** — दुर्बोध स्वरूप या अगम्य।
393. **गुहः** — माया से अपने यथार्थ रूप को छिपाए रखनेवाले।

करणं कारणं कर्तासर्वबन्धविमोचनः।
व्यवसायो व्यवस्थानः स्थानदो जगदादिजः ॥50॥

394. **करणम्** — संसार की उत्पत्ति के सबसे बड़े साधन।
395. **कारणम्** — जगत् के उपादान और निमित्त कारण।
396. **कर्ता** — सबके रचियता।
397. **सर्वबन्ध विमोचनः** — संपूर्ण बंधनों से छुड़ानेवाले।
398. **व्यवसायः** — निश्चयात्मक ज्ञान स्वरूप।
399. **व्यवस्थानः** — संपूर्ण जगत् की व्यवस्था करनेवाले।
400. **स्थानदः** — ध्रुव आदि भक्तों को अविचल स्थिति प्रदान कर देनेवाले।
401. **जगदादिजः** — हिरण्य गर्भ रूप से जगत् के आदि में प्रकट होने वाले।

गुरु दो ललितोऽभेदो भावात्मा ऽऽत्मानि संस्थितः।
वीरेश्वरो वीरभद्रो वीरासनविधिर्विराट्॥51॥

402. **गुरुदः** — श्रेष्ठ वस्तु प्रदान करनेवाला अथवा जिज्ञासुओं को गुरु की प्राप्ति करानेवाला।
403. **ललितः** — सुंदर रूपवाले।
404. **अभेदः** — भेद रहित।
405. **भावात्माऽऽमनि संस्थितः** — सत्यस्वरूप आत्मा में प्रतिष्ठित।
406. **वीरेश्वरः** — वीर शिरोमणि।
407. **वीरभद्रः** — वीरभद्र नामक गणाध्यक्ष।
408. **वीरासनविधिः** — वीरासन में बैठनेवाले।
409. **विराट्** — अखिल ब्रह्मांड स्वरूप।

वीरचूडामनिवेत्ता चिदानन्दो नदीधरः।
आज्ञाधारस्त्रिशूली च शिपिविष्टः शिवालयः॥52॥

410. **वीरचूडामणिः** — वीरों में श्रेष्ठ।
411. **वेत्ताः** — विद्वान्।
412. **चिदानन्दः** — विज्ञानानंद स्वरूप।
413. **नदीधरः** — मस्तक पर गंगाजी को धारण करनेवाले।
414. **आज्ञाधारः** — आज्ञा का पालन करनेवाले।
415. **त्रिशूलीः** — त्रिशूलधारी।
416. **शिपिविष्टः** — तेजोमयी किरणों से व्याप्त।
417. **शिवालयः** — भगवती शिवा के आश्रय।

बालखिल्यो महाचापस्तिग्मान्शुर्वधिरः खगः।
अभिरामः सुशरणः सुब्रह्मण्य सुधापतिः॥53॥

418. **बालखिल्यः** — बालखिल्य ऋषि रूप।
419. **महाचापः** — महाधनुर्धर।

420. तिग्मान्शुः — सूर्य रूप।
421. बधिरः — लौकिक विषयों की चर्चा न सुननेवाले।
422. खगः — आकाशचारी।
423. अभिरामः — परम सुंदर।
424. सुशरणः — सबके लिए सुंदर आश्रय रूप।
425. सुब्रह्मण्यः — ब्राह्मणों के परम हितैषी।
426. सुधापतिः — अमृत कलश के रक्षक।

अघवान्कौशिको गोमान्विरामः सर्वसाधनः।
ललाटाक्षो विश्वदेहः सारः संसारचक्रभृत्॥54॥

427. अघवान् कौशिक— कुशिक वंशीय इंद्र स्वरूप।
428. गोमान — प्रकाश किरणों से युक्त।
429. विरामः — समस्त प्राणियों के लय के स्थान।
430. सर्वसाधनः — समस्त कामनाओं को सिद्ध करनेवाले।
431. ललाटाक्षः — ललाट में तीसरा नेत्र धारण करनेवाले।
432. विश्वदेहः — जगत् स्वरूप।
433. सारः — सारतत्त्व रूप।
434. संसार चक्रभृत् — संसार चक्र को धारण करनेवाले

अमोघदण्डो मध्यस्थो हिरण्यो ब्रह्मवर्चसी।
परमार्थः परोमायी शम्बरो व्याघ्रलोचनः॥55॥

435. अमोघदण्डः — जिनका दंड कभी व्यर्थ नहीं जाता।
436. मध्यस्थः — उदासीन।
437. हिरण्यः — सुवर्ण अथवा तेज स्वरूप।
438. ब्रह्मवर्चसी — ब्रह्म तेज से संपन्न।
439. परमार्थः — मोक्षरूप उत्कृष्ट अर्थ की प्राप्ति करानेवाले।
440. परोमायीः — महामायावी

441. शम्बरः — कल्याणप्रद

442. व्याघ्रलोचनः — व्याघ्र के समान भयानक नेत्रवाले

रुचिर्विराञ्चिः स्वर्बन्धुर्वाचस्पतिरहर्पतिः।
रवि र्विरोचनः स्कदः शास्ता वैवस्वतोयमः ॥56॥

443. रुचिः — दीप्ति रूप।

444. विरञ्चिः — ब्रह्म स्वरूप।

445. स्वर्बन्धुः — स्वलोक में बंधु के समान सुखद।

446. वाचस्पतिः — वाणी के अधिपति।

447. अहर्पतिः — दिन के स्वामी, सूर्य रूप।

448. रविः — समस्त रसों का शोषण करनेवाले।

449. विरोचनः — विविध प्रकार से प्रकाश फैलानेवाले।

450. स्कन्दः — स्वामी कार्तिकेय रूप।

451. शास्ह्म वैवस्वतोयमः — सब पर शासन करनेवाले सूर्य कुमार यम

युक्तिरुन्तकीतिश्च सानुरागः परञ्जयः।
कैलासाधिपतिः कान्तः सविता रविलोचनः ॥57॥

452. युक्तिरुन्नतकीर्तिः — अष्टांग योग स्वरूप तथा ऊर्ध्वलोक में फैली हुई कीर्ति से युक्त।

453. सानुरागः — भक्तजनों पर प्रेम रखनेवाले।

454. परञ्जयः — दूसरों पर विजय पानेवाले।

455. कैलासाधिपतिः — कैलास के स्वामी।

456. कान्तः — कमनीय अथवा कांतिमान।

457. सविता — समस्त जगत् को उत्पन्न करनेवाले।

458. रविलोचनः — सूर्य रूप नेत्रवाले

विद्वतमो वीतभयो विश्वभर्त्ताऽनिवारितः।
नित्यो नियतकल्याणः पुण्यश्रवण कीर्तनः ॥ 58 ॥

459. विद्वतमः — विद्वानों में परम श्रेष्ठ, परम विद्वान्।
460. वीतभयः — सब प्रकार के भय से रहित।
461. विश्वभर्त्ताः — जगत् का भरण-पोषण करनेवाले।
462. अनिवारितः — जिन्हें कोई रोक नहीं सकता।
463. नित्यः — सत्य स्वरूप।
464. नियत कल्याणः — सुनिश्चित रूप से कल्याणकारी।
465. पुण्यश्रवण कीर्तनः — जिन के नाम, गुण, महिमा और स्वरूप के श्रवण तथा कीर्तन परम पावन हैं,

दूरश्रवा विश्वसहो ध्येयो दुःस्वप्रन्नाशनः।
उत्तारणो दुष्कृतिहा विज्ञेयो दुस्सहोऽभवः ॥59॥

466. दूरश्रवाः — सर्वव्यापी होने के कारण दूर की बात भी सुन लेनेवाले।
467. विश्वसहः — भक्तजनों के सब अपराधों को कृपापूर्वक सह लेने वाले।
468. ध्येयः — ध्यान करने योग्य।
469. दुःस्वप्रन्नाशनः — चिंतन करने मात्र से बुरे स्वप्नों का नाश करनेवाले।
470. उत्तारणः — संसार सागर से पार उतारनेवाले।
471. दुष्कृतिहाः — पापों का नाश करनेवाले।
472. विज्ञेयः — जानने योग्य।
473. दुस्सहः — जिनके वेग को सहन करना दूसरों के लिए अत्यंत कठिन है,
474. अभवः — संसार बंधन से रहित अथवा अजन्मा

अनादिभुर्भवो लक्ष्मीः किरीटी त्रिदशाधिपः।
विश्वगोप्ता विश्वकर्ता सुवीरो रुचिराङ्गदः ॥60॥

475. **अनादिः** — जिनका कोई आदी नहीं है, ऐसे सबके कारण स्वरूप।
476. **भुर्भवो लक्ष्मी** — भूलोक और भुवलोक की शोभा।
477. **किरीटी** — मुकुटधारी।
478. **त्रिदशाधिपः** — देवताओं के स्वामी।
479. **विश्वगोप्ताः** — जगत् के रक्षक।
480. **विश्वकर्ता** — संसार की सृष्टि करनेवाले।
481. **सुवीर** — श्रेष्ठवीर।
482. **रुचिराङ्गद** — सुंदर बाजूबंद धारण करनेवाले

जननो जनजन्मादिः प्रीतिमान्नीतिमान्धवः।
वसिष्ठः कश्यपो भानुभीमो भीमपराक्रम ॥61॥

483. **जननः** — प्राणिमात्र को जन्म देनेवाले।
484. **जनजन्मादिः** — जन्म लेनेवाले के जन्म के मूल कारण।
485. **प्रीतिमानः** — प्रसन्न।
486. **नीतिमानः** — सदा नीति परायण।
487. **धवः** — सबके स्वामी।
488. **वसिष्ठः** — मन और इंद्रियों को अत्यंत वश में रखनेवाले अथवा वसिष्ठ ऋषि रूप।
489. **कश्यपः** — दृष्टा अथवा कश्यप मुनि रूप।
490. **भानुः** — प्रकाशवान अथवा सूर्य रूप।
491. **भीमः** — दुष्टों को भय देनेवाले।
492. **भीम पराक्रमः** — अतिशय भयदायक पराक्रम से युक्त।

प्रणवः सत्पथाचारो महाकोशो महाधनः।
जन्माधिपो महादेवः सकलागमपारगः ॥62॥

493. **प्रणवः** — ओंकार स्वरूप।
494. **सत्पथाचारः** — सत्पुरुषों के मार्ग पर चलनेवाले।
495. **महाकोशः** — अन्नमयादि पाँचों कोशों को अपने भीतर धारण करने के कारण महाकोश रूप।
496. **महाधनः** — अपरिमित ऐश्वर्यवाले अथवा कुबेर को भी धन देने के कारण महाधनवान।
497. **जन्माधिपो:** — जन्म (उत्पादन) रूपी कार्य के अध्यक्ष ब्रह्मा।
498. **महादेवः** — सर्वोत्कृष्ट देवता।
499. **सकलागमपारगः** — समस्त शास्त्रों के पारंगत (विद्वान्)।

तत्त्वं तत्त्वविदेकात्मा विभुर्विश्वविभूषणः।
ऋषिब्राह्मण ऐश्वर्य जन्ममृत्युजरातिगः ॥63॥

500. **तत्त्वम्** — यथार्थ तत्त्वरूप।
501. **तत्त्ववित्** — यथार्थ तत्त्व को पूर्णतया जाननेवाले।
502. **एकात्मा** — अद्वितीय आत्म रूप।
503. **विभुः** — सर्वत्र व्यापक।
504. **विश्वभूषणः** — संपूर्ण जगत् को उत्तम गुणों से विभूषित करनेवाले।
505. **ऋषिः** — मंत्र दृष्टा
506. **ब्राह्मणः** — ब्रह्मवेत्ता
507. **ऐश्वर्य जन्ममृत्युजरातिगः**— ऐश्वर्य, जन्म, मृत्यु और जरा से अतीत।

पञ्चयज्ञसमुत्पत्तिर्विश्रेशो विमलोदयः।
आत्मयोनिरनाद्यन्तो वत्सलो भक्तलोकधृक ॥64॥

508. **पञ्चयज्ञसमुत्पत्ति** — पंच महायज्ञों की उत्पत्ति के हेतु।
509. **विश्रेशः** — विश्वनाथ।

510. **विमलोदयः** — निर्मल अभ्युदय की प्राप्ति करानेवाले धर्म रूप।
511. **आत्मयोनिः** — स्वयंभु।
512. **अनाद्यन्तः** — आदि×अंत से रहित।
513. **वत्सलः** — भक्तों के प्रति वात्सल्य स्नेह से युक्त।
514. **भक्तलोकधृक** — भक्तजनों के आश्रय

गायत्रीवल्लभः प्रांशुर्विश्वावासः प्रभाकरः।
शिशु र्गिरिरतः सम्राट् सुषेणः सुरशत्रुहाः॥65॥

515. **गायत्रीवल्लभ** — गायत्री मंत्र के प्रेमी।
516. **प्रांशुः** — ऊँचे शरीरवाले।
517. **विश्वावासः** — संपूर्ण जगत् के आवास स्थान।
518. **प्रभाकरः** — सूर्य रूप।
519. **शिशुः** — बालक रूप।
520. **गिरिरतः** — कैलास पर्वत पर रमण करनेवाले।
521. **सम्राटः** — देवेश्वरों के भी ईश्वर।
522. **सुषेण सुरशत्रुहा** — प्रथम गणों की सुंदर सेना से युक्त तथा देवशत्रुओं का संहार करनेवाले

अमोधोऽरिष्टनेमिश्च कुमुदो विगतज्वरः।
स्वयं ज्योतिस्तनु ज्योतिरात्मज्योतिरचञ्चलः॥66॥

523. **अमोधोऽरिष्टनेमिश्चः** — अमोध संकल्पवाले महर्षि कश्यप रूप।
524. **कुमुदः** — भूतल को आह्लाद प्रदान करनेवाले चंद्रमा रूप।
525. **विगतज्वरः** — चिंता रहित।
526. **स्वयंज्योतिस्तनुज्योतिः** — अपने ही प्रकाश से प्रकाशित होनेवाले सूक्ष्म ज्योति स्वरूप।
527. **आत्म ज्योतिः** — अपने स्वरूप ज्ञान की प्रभा से प्रकाशित।
528. **अचञ्चलः** — चंचलता से रहित

पिङ्गलः कपिलाश्मश्रुर्भाल नेत्रस्त्रयीतनुः ।
ज्ञानस्कन्दो महानीतिर्विश्वोत्पत्तिरुपपल्वः ॥67॥

529. **पिङ्गलः** — पिंगल वर्णवाले।
530. **कपिलश्यश्रुः** — कपिल वर्ण की दाढ़ी-मूँछ रखनेवाले दुर्वासा मुनि के रूप में अवतीर्ण।
531. **भालनेत्रः** — ललाट में तृतीय नेत्र धारण करनेवाले।
532. **त्रयीतनुः** — तीनों लोक या तीनों वेद जिनके स्वरूप हैं, ऐसे।
533. **ज्ञानस्कन्दो महानीतिः** — ज्ञानप्रद और श्रेष्ठ नीतिवाले।
534. **विश्वोत्पत्तिः** — जगत् के उत्पादक।
535. **उपपल्वः** — संहारकारी

भगो विवस्वानादित्यो योगपारो दिवस्पतिः ।
कल्याणगुणनामा च पापहा पुण्यदर्शनः ॥68॥

536. **भगोविवस्वानादित्यः** — आदितिनंदन भग एवं विवस्वान्।
537. **योगपारः** — योग विद्या में पारंगत।
538. **दिवस्पतिः** — स्वर्ग लोक के स्वामी।
539. **कल्याणगुणनामाः** — कल्याणकारी गुण और नामवाले।
540. **पापहाः** — पाप नाशक।
541. **पुण्यदर्शनः** — पुण्यजनक दर्शनवाले अथवा पुण्य से ही, जिनका दर्शन होता है

उदारकीर्तिरुद्योगी सद्योगी सदसन्मयः ।
नक्षत्रमाली नाकेशः स्वधिष्ठानपदाश्रयः ॥69॥

542. **उदारकीर्तिः** — उत्तम कीर्तिवाले।
543. **उद्योगीः** — उद्योगशाली।
544. **सद्योगीः** — श्रेष्ठ योगी।

545. सद्सन्मयः — सद्सत्स्वरूप।
546. नक्षत्रमालीः — नक्षत्रों की माला से अलंकृत आकाश रूप।
547. नाकेशः — स्वर्ग के स्वामी।
548. स्वाधिष्ठान पदाश्रयः — स्वाधिष्ठान चक्र के आश्रय

पवित्रः पापहारी च मणिपूरो नभोगतिः।
हत्पुण्डरीकमासीनः शक्रः शान्तो वृषाकपिः ॥70॥

549. पवित्रपापहारी — नित्य शुद्ध एवं पापनाशक।
550. मणिपूरः — मणिपूर नामक चक्र स्वरूप।
551. नभोगतिः — आकाशचारी।
552. हत्पुण्डरीकमासीनः — हृदय कमल में स्थित।
553. शक्रः — इंद्ररूप।
554. शान्तः — शांत स्वरूप।
555. वृषाकपिः — हरिहर

उष्णो गृहपतिः कृष्णः समर्थोऽनर्थनाशः।
अधर्मशत्रुरज्ञेयः पुरुहुतः पुरुश्रुतः ॥71॥

556. उष्णः — हलाहल विष की गरमी से उष्णता युक्त।
557. गृहपतिः — समस्त ब्रह्मांड रूपी गृह के स्वामी।
558. कृष्णः — सच्चिदानंद स्वरूप।
559. समर्थः — सामर्थ्यशाली।
560. अनर्थनाशनः — अनर्थ का नाश करनेवाले।
561. अधर्मशत्रुः — अधर्म नाशक।
562. अज्ञेयः — बुद्धि की पहुँच से परे अथवा जानने में न आनेवाले।
563. पुरुहुतः पुरुश्रुतः — बहुत से नामो द्वारा पुकारे और सुने जानेवाले।

ब्रह्मगर्भो वृहद्गर्भो धर्मधेनुर्धनागमः।
जगद्धितैषी सुगतः कुमारः कुशलागमः॥72॥

564. **ब्रह्मगर्भः** — ब्रह्मा जिनके गर्भस्थ शिशु के समान हैं।
565. **वृहदगर्भः** — विश्वब्रह्मांड प्रलयकाल में जिनके गर्भ में रहता है।
566. **धर्मधेनुः** — धर्मरूपी वृषभ को उत्पन्न करने के लिए धेनु स्वरूप।
567. **धनागमः** — धन की प्राप्ति करानेवाले।
568. **जगद्धितैषीः** — समस्त संसार का हित चाहनेवाले।
569. **सुगतः** — उत्तम ज्ञान से संपन्न अथवा बुद्ध स्वरूप।
570. **कुमारः** — कार्तिकेय रूप।
571. **कुशलागमः** — कल्याणदाता

हिरण्योवर्णो ज्योतिष्मान्नानाभूतरतो ध्वनिः।
अरागो नयनाध्यक्षो विश्वमित्रो धनेश्वरः॥73॥

572. **हिरण्यवर्णो ज्योतिष्मान्** — सुवर्ण के समान गौर वर्णवाले तथा तेजस्वी।
573. **नानाभूतरतः** — नाना प्रकार के भूतों के साथ क्रीड़ा करनेवाले।
574. **ध्वनिः** — नाद स्वरूप।
575. **अरागः** — आसक्ति शून्य।
576. **नयानाध्यक्षः** — नेत्रों में दृष्टारूप से विद्यमान।
577. **विश्वामित्रः** — संपूर्ण जगत् के प्रति मैत्री भावना रखनेवाले मुनि स्वरूप।
578. **धनेश्वरः** — धन के स्वामी कुबेर

ब्रह्मज्योतिर्वसुधामा महाज्योतिरनुत्तमः।
मातामहो मारिश्वा नभस्वान्नागहारधृक् ॥74॥

579. **ब्रह्मज्योतिः** — ज्योति स्वरूप ब्रह्म।
580. **वसुधामा** — सुवर्ण और रत्नों के तेज से प्रकाशित अथवा वसुधा स्वरूप।
581. **महाज्योतिरनुत्तमः** — सूर्य आदि ज्योतियों के प्रकाशक सर्वोत्तम महाज्योति स्वरूप।
582. **मातामहः** — मातृकाओं के जन्मदाता होने के कारण मातामह।
583. **मातरिश्वा नभस्वानः** — आकाश में विचरनेवाले वायुदेव।
584. **नागहारधृकः** — सर्पमय हार धारण करनेवाले।

पुलस्त्यः पुलहोऽगस्त्यो जातूकर्ण्य पराशरः।
निवारणनिर्वारो वैरज्ज्यो विष्टरश्रवाः ॥75॥

585. **पुलस्त्यः** — पुलस्त्य नामक मुनि।
586. **पुलहः** — पुलह नामक ऋषि।
587. **अगस्त्यः** — कुंभ जनमा अगस्त्य ऋषि।
588. **जातकर्ण्यः** — इसी नाम से प्रसिद्ध मुनि।
589. **पराशरः** — शक्ति के पुत्र तथा व्यासजी के पिता मुनिवर पराशर।
590. **निरावरण निर्वारः** — आवरण शून्य तथा अवरोध रहित।
591. **वैरज्जयः** — ब्रह्माजी के पुत्र नीललोहित रुद्र।
592. **विष्टरश्रवाः** — विस्तृत यशवाले विष्णु स्वरूप।

आत्मभूरनिरुद्धोडत्रिर्ज्ञानमूर्तिमहायशाः।
लोकवीराग्रणीवीरश्चण्डः सत्यपराक्रमः ॥76॥

593. **आत्मभूः** — स्वयंभू ब्रह्मा।

594. **अनिरुद्धः** — अकुंठित गतिवाले।
595. **अत्रिः** — अत्रि नामक ऋषि अथवा त्रिगुणातीत।
596. **ज्ञानमूर्तिः** — ज्ञान स्वरूप।
597. **महायशाः** — महायशस्वी।
598. **लोकवीराग्रणीः** — विश्वविख्यात वीरों में अग्रगण्य।
599. **वीर** — शूरवीर।
600. **चण्ड** — प्रलय के समय अत्यंत क्रोध करनेवाले।
601. **सत्य पराक्रमः** — सच्चे पराक्रमी।

व्यालाकल्पो महाकल्पः कल्पवृक्षः कलाधरः।
अलङ्करिष्णुरचलो रोचिष्णुर्विक्रमोन्नतः ॥77॥

602. **व्यालाकल्पः** — सर्पों के आभूषण से शृंगार करनेवाले।
603. **महाकल्पः** — महाकल्पसंज्ञक काल स्वरूपवाले।
604. **कल्पवृक्षः** — शरणागतो की इच्छापूर्ण करने के लिए कल्पवृक्ष के समान उदार।
605. **कलाधरः** — चंद्रकलाधारी।
606. **अलङ्करिष्णुः** — अलंकार धारण करने या करानेवाले।
607. **अचल** — विचलित न होनेवाले।
608. **रोचिष्णुः** — प्रकाशमान।
609. **विक्रमोन्नतः** — पराक्रम में बढ़े-चढ़े।

आयुः शब्दपतिर्वेगी पल्वनः शिखिसारथिः।
असन्सृष्टोतिथिः शक्रप्रमाथी पादपासनः ॥78॥

610. **आयुः शब्दपतिः** — आयु तथा वाणी के स्वामी।
611. **वेगीपल्वनः** — वेगशाली तथा कूदने या तैरनेवाले।
612. **शिखिसारथिः** — अग्निरूप सहायकवाले।
613. **असन्तृष्टः** — निर्लेप।

614. **अतिथिः** — प्रेमी भक्तों के घर पर अतिथि की भाँति उपस्थित हो उनका सत्कार ग्रहण करनेवाले।

615. **शक्रप्रमाथी** — इंद्र का मान-मर्दन करनेवाले।

616. **पादपासनः** — वृक्षों पर या वृक्षों के नीचे आसन लगानेवाले।

वसुश्रवा हव्यवाहः प्रतप्तो विश्वभोजनः।
जप्यो जरादिशमनो लोहितात्या तनुनपात् ॥79॥

617. **वसुश्रवाः** — यशरूपी धन से संपन्न।

618. **हव्यवाहः** — अग्नि स्वरूप।

619. **प्रतप्तः** — सूर्य रूप से प्रचंड ताप देनेवाले।

620. **विश्व भोजनः** — प्रलयकाल में विश्व-ब्रह्मांड को अपना ग्रास बना लेने वाले।

621. **जप्यः** — जपने योग्य नामवाले।

622. **जरादिशमनः** — बुढ़ापा आदि दोषों का निवारण करनेवाले।

623. **लोहितात्मा तनूनपात** — लोहित वर्णवाले अग्नि रूप।

वृहदश्वो नभोयोनिः सुप्रतीकस्तमिस्रहा।
निदाघस्तपनो मेघः स्वक्षः परपुरपुप्तयः ॥80॥

624. **वृहदश्वः** — विशाल अश्ववाले।

625. **नभोयोनिः** — आकाश की उत्पत्ति के स्थान।

626. **सुप्रतीकः** — सुंदर शरीरवाले।

627. **तमिस्रहाः** — अज्ञानांधकार नाशक।

628. **निदाघस्तपनः** — तपने वाले ग्रीष्म रूप।

629. **मेघः** — बादलों से उपलक्षित वर्षा रूप।

630. **स्वक्षः** — सुंदर नेत्रोंवाले।

631. **परपुरप्तयः** — त्रिपुर रूप शत्रुनगरी पर विजय पानेवाले।

सुखानिलः सुनिष्पन्नः सुरभिः शिशिरात्मकः।
वसन्तो माधवो ग्रीष्मो नभस्यो बीजवाहनः ॥81॥

632. **सुखानिलः** — सुखदायक वायु को प्रकट करनेवाले शरत्काल रूप।

633. **सुनिष्पन्नः** — जिसमें अन्न का सुंदर रूप से परिपाक होता है, वह हेमंतकाल रूप।

634. **सुरभिशिशिरात्मकः** — सुगंधित मलयानिल से युक्त शिशिर ऋतु रूप।

635. **वसन्तोमाधवः** — चैत्र-बैसाख इन दो मासों से युक्त वसंत रूप।

636. **ग्रीष्मः** — ग्रीष्म ऋतु रूप।

637. **नभस्यः** — भाद्रपद मास रूप।

638. **बीज वाहनः** — धान आदि के बीजों की प्राप्ति करानेवाला शरत्काल।

अङ्गिरा गुरुरात्रेयो विमलो विश्ववाहनः।
पावनः सुमतिर्विद्धास्त्रैविद्यो वरवाहनः ॥82॥

639. **अङ्गिरा** — अंगिरा नामक ऋषि तथा उनके पुत्र देवगुरु वृहस्पति।

640. **आत्रेयः** — अत्रिकुमार दुर्वासा।

641. **विमलः** — निर्मल।

642. **विश्ववाहनः** — संपूर्ण जगत् का निर्वाह करानेवाले।

643. **पावनः** — पवित्र करनेवाले।

644. **सुमतिर्विद्वानः** — उत्तम बुद्धिवाले विद्वान्।

645. **त्रैविद्यः** — तीनों वेदों के विद्वान् अथवा तीनों वेदों के द्वारा प्रतिपादित।

646. **वर वाहनः** — वृषभ रूप श्रेष्ठ वाहनवाले

मनोबुद्धिरहङ्कार क्षेत्रज्ञः क्षेत्र पालकः।
जमदग्निर्बलनिधिर्विगालो विश्वगालवः ॥83॥

647. मनोबुद्धिरहङ्कारः — मन, बुद्धि और अहंकार स्वरूप।
648. क्षेत्रज्ञः — आत्मा।
649. क्षेत्रपालकः — शरीर रूपी क्षेत्र का पालन करनेवाले परमात्मा।
650. जमदग्निः — जमदग्नि नामक ऋषि रूप।
651. बलनिधिः — अनंत बल के सागर।
652. विगालः — अपनी जटा से गंगाजी के जल को टपकानेवाले।
653. विश्वगालवः — विश्वविख्यात गालव मुनि अथवा प्रलयकाल में कालाग्नि स्वरूप से जगत् को निगल जानेवाले।

अघोरोऽनुत्तरो यज्ञः श्रेष्ठो निःश्रेयसप्रदः।
शैलो गगनकुन्दाभो दानवारिररिदमः ॥84॥

654. अघोरः — सौम्य रूपवाले।
655. अनुत्तरः — सर्वश्रेष्ठ।
656. यज्ञःश्रेष्ठः — श्रेष्ठ यज्ञ रूप।
657. निःश्रेयसप्रदः — कल्याणदाता।
658. शैलः — शिलामय लिंग रूप।
659. गगनकुन्दाभः — आकाश कुंद-चंद्रमा के समान गौर कांतिवाले।
660. दानवारिः — दानव-शत्रु।
661. अरिदमः — शत्रुओं का दमन करनेवाले।

रजनीजनकश्चरुनिःशल्यो लोकशल्यधृक।
चतुर्वेदश्चतुर्भाव श्चतुरश्चतरप्रियः ॥85॥

662. रजनीजनकश्चरुः — सुंदर निशाकर रूप।
663. निःशल्यः — निष्कंटक।
664. लोकशल्यधृकः — शरणागत जनों के शोककंटक को निकालकर

स्वयं धारण करनेवाले।

665. **चतुर्वेदः** — चारों वेदों द्वारा जानने योग्य।

666. **चतुर्भावः** — चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति करानेवाले।

667. **चतुरश्चतरप्रिय** — चतुर एवं चतुर पुरुषों के प्रिय।

आमान्योऽथ समामान्यस्तीर्थ देवशिवालयः।
बहुरूपो महारूपः सर्वरूपश्चराचरः ॥86॥

668. **आमान्यः** — वेद स्वरूप।

669. **समामान्यः** — अक्षर समामान्य—शिवसूत्र रूप।

670. **तीर्थदेवशिवालयः** — तीर्थों के देवता और शिवालय रूप।

671. **बहुरूपः** — अनेक रूपवाले।

672. **महारूपः** — विराट् रूपधारी।

673. **सर्वरूपश्चराचरः** — चर और चर संपूर्ण रूपवाले।

न्यायनिर्मायको न्यायी न्यायगम्योनिरप्तनः।
सहस्रमूर्द्धा देवेन्द्रः सर्वशस्त्रप्रभप्तनः ॥87॥

674. **न्यायनिर्मायकोन्यायी** — न्यायकर्ता तथा न्यायशील।

675. **न्यायगम्यः** — न्याययुक्त आचरण से प्राप्त होने योग्य।

676. **निरप्तनः** — निर्मल।

677. **सहस्त्रमूर्द्धा** — सहस्रों शिरवाले।

678. **देवेन्द्रः** — देवताओं के स्वामी।

679. **सर्वशस्त्र प्रभप्तनः** — विपक्षी योद्धाओं के संपूर्ण शस्त्रों को नष्ट कर देने वाले।

मुण्डो विरूपो विक्रान्तो दण्डी दान्तो गुणोत्तमः।
पिङ्गलाक्षो जनाध्यक्षो निलग्रीवो निरामयः ॥88॥

680. **मुण्डः** — मुँड़े हुए शिरवाले संन्यासी।

681. **विरूपः** — विविध रूपवाले।
682. **विक्रान्तः** — विक्रमशील।
683. **दण्डीः** — दंडधारी।
684. **दान्तः** — मन और इंद्रियों का दमन करनेवाले।
685. **गुणोत्तमः** — गुणों में सबसे श्रेष्ठ।
686. **पिङ्गलाक्षः** — पिंगल नेत्रवाले।
687. **जनाध्यक्षः** — जीवमात्र के साक्षी।
688. **नीलग्रीवः** — नीलकंठ।
689. **निरामय** — निरोग।

सहस्रबाहुः सर्वेशः शरण्यः सर्वलोकधृकः।
पद्मासनः परं ज्योतिः पारम्पर्य्यदफलप्रदः ॥ 89 ॥

690. **सहस्रबाहुः** — सहस्रों भुजाओं से युक्त।
691. **सर्वेशः** — सबके स्वामी।
692. **शरण्यः** — शरणागत, हितैषी।
693. **सर्वलोकधृकः** — संपूर्ण लोकों को धारण करनेवाले।
694. **पद्मासनः** — कमल के आसन पर विराजमान।
695. **परंज्योतिः** — परम प्रकाश स्वरूप।
696. **पारम्पर्य्य फलप्रदः** — परंपरागत फल की प्राप्ति करानेवाले।

पद्मगर्भो महागर्भो विश्वगर्भो विचक्षणः।
परावरज्ञो वरदो वरेणश्च महास्वनः॥ 90॥

697. **पद्मगर्भोः** — अपनी नाभि से कमल को कट करनेवाले विष्णु रूप।
698. **महागर्भः** — विराट् ब्रह्मांड को गर्भ में धारण करनेवाले महान् गर्भवाले।
699. **विश्वगर्भः** — संपूर्ण जगत् को अपने उदर में धारण करनेवाले।

700. **विचक्षणः** — चतुर।
701. **परावरज्ञः** — कारण और कार्य के ज्ञाता।
702. **वरदः** — अभीष्ट वर देनेवाले।
703. **वरेण्श्चः** — वरणीय अथवा श्रेष्ठ।
704. **महास्वनः** — डमरू का गंभीर नाद करनेवाले।

दुवासुरगुरुदेवो देवासुरनभस्कृतः।
देवासुरमहामित्रो देवासुर महेश्वरः॥ 91॥

705. **देवासुरगुरुर्देवः** — देवताओं तथा असुरों के गुरुदेव एवं आराध्य।
706. **देवासुरनमस्कृतः** — देवताओं तथा असुरों से वंदित।
707. **देवासुरमहामित्रः** — देवता तथा असुर दोनों के बड़े मित्र।
708. **देवासुरमहेश्वरः** — देवताओं और असुरों के महान् ईश्वर।

देवासुरेश्वरो दिव्यो देवासुरमहाश्रयः।
देवदेवमयोऽचिन्त्यो देवदेवात्मसम्भवः॥ 92॥

709. **देवासुरेश्वरः** — देवताओं और असुरों के शासक।
710. **दिव्यः** — अलौकिक स्वरूपवाले।
711. **देवासुर महाश्रयः** — देवताओं और असुरों के महान् आश्रय।
712. **देवदेवमयः** — देवताओं के लिए भी देवता रूप।
713. **अचिन्त्यः** — चित्त की सीमा से परे विद्यमान।
714. **देवदेवात्म सम्भवः** — देवाधिदेव ब्रह्माजी से रुद्र रूप में उत्पन्न।

सद्योनिरसुरव्याघ्रो देव सिंहो दिवाकरः।
विवुधाग्रचरश्रेष्ठः सर्वदेवोत्तमोत्तमः॥ 93॥

715. **सद्योनिः** — सत्पदार्थों की उत्पत्ति के हेतु।
716. **असुरव्याघ्रः** — असुरों का विनाश करने के लिए व्याघ्र रूप।
717. **देवसिंहः** — देवताओं में श्रेष्ठ।

718. **दिवाकरः** — सूर्य रूप।
719. **विबुधाग्रचर श्रेष्ठः** — देवताओं के भी शिरोमणि।
720. **सर्वदेवोत्तमोत्तमः** — संपूर्ण श्रेष्ठ देवताओं के भी शिरोमणि।

शिवज्ञानरतः श्रीमद्शिखि श्रीपर्वतप्रियः।
बज्रहस्तः सिद्धखड्गो नरसिंहनिपातमः॥ 94॥

721. **शिवज्ञानरतः** — कल्याणमय शिवतत्त्व के विचार में तत्पर।
722. **श्रीमान्** — अणिमां आदि विभूतियों से संपन्न।
723. **शिखि श्री पर्वतप्रियः** — कुमार कार्तिकेय के निवास भूत श्रीशैल नामक पर्वत से प्रेम करनेवाले।
724. **बज्रहस्तः** — वज्रधारी इंद्र रूप।
725. **सिद्धखड्गः** — शत्रुओं को मार गिराने में जिनकी तलवार कभी असफल नहीं होती।
726. **नरसिंहनिपातमः** — शरभ रूप से नृसिंह को धराशायी करनेवाले।

ब्रह्मचारी लोकचारी धर्मचारी धनाधिपः।
नन्दी नन्दीश्वरोऽनन्तो नग्रव्रतधरः शुचिः॥ 95॥

727. **ब्रह्मचारी** — भगवती उमा के प्रेम की परीक्षा लेने के लिए ब्रह्मचारी रूप से प्रकट।
728. **लोकचारी** — समस्त लोकों में विचरनेवाले।
729. **धर्मचारी** — धर्म का आचरण करनेवाले।
730. **धनाधिपः** — धन के अधिपति कुबेर।
731. **नन्दी** — नंदी नामक गण।
732. **नन्दीश्वरः** — इसी नाम से प्रसिद्ध वृषभ।
733. **अनन्तः** — अंतरहित।
734. **नग्रवतधरः** — दिगंबर रहने का व्रत धारण करनेवाले।
735. **शुचिः** — नित्य शुद्ध।

लिङ्गाध्यक्षः सुराध्यक्षो योगाध्यक्षो युगावहः।
स्वधर्मा स्वगर्तः स्वर्गस्वरः स्वरमयस्वनः ॥ 96 ॥

736. **लिङ्गाध्यक्षः** — लिंग देह में दृष्टा।
737. **सुराध्यक्षः** — देवताओं के अधिपति।
738. **योगाध्यक्षः** — योगेश्वर।
739. **युवावहः** — युग के निर्वाहक।
740. **स्वधर्मा:** — आत्मविचार रूप धर्म में स्थित अथवा स्वधर्मपरायण।
741. **स्वर्गतः** — स्वर्गलोक में स्थित।
742. **स्वर्गस्वरः** — स्वर्ग लोक में जिनके यश का गान किया जाता है।
743. **स्वरमयस्वनः** — सात प्रकार के स्वरों से युक्त ध्वनिवाले।

बाणाध्यक्षो बीजकर्त्ता धर्मकृद्धर्मसम्भवः।
दम्भोऽलोभोऽर्थ विच्छम्भुः सर्वभूतमहेश्वरः ॥ 97 ॥

744. **बाणाध्यक्षः** — बाणासुर के स्वामी अथवा बाणलिंग नर्मदेश्वर में अधि देवता रूप से स्थित।
745. **बीजकर्त्ताः** — बीज के उत्पादक।
746. **धर्मकृद्धर्मसम्भवः** — धर्म के पालक और उत्पादक।
747. **दम्भः** — मायामय रूपधारी।
748. **अलोभः** — लोभ रहित।
749. **अर्थविच्छुम्भुः** — सबके प्रयोजन को जाननेवाले कल्याण निकेतन शिव।
750. **सर्वभूतमहेश्वरः** — संपूर्ण प्राणियों के परमेश्वर।

श्मशान निलयस्त्रयक्षः सेतुरप्रतिमाकृति।
लोकोत्तरस्फुटालोकस्त्र्यम्बको नागभूषणः ॥ 98 ॥

751. **श्मशाननिलयः** — श्मशानवासी।

752. **त्र्यक्षः** — त्रिनेत्रधारी।
753. **सेतुः** — धर्म मर्यादा के पालक।
754. **अप्रतिमाकृतिः** — अनुपम रूपवाले।
755. **लोकोत्तर स्फुटालोकः** — अलौकिक एवं सुस्पष्ट प्रकाश से युक्त।
756. **त्र्यम्बकः** — त्रिनेत्रधारी अथवा त्र्यंबक नामक ज्योतिर्लिंग।
757. **नागभूषणः** — नागहार से विभूषित।

अन्धकारिर्मखद्वेषी विष्णुकन्धरपातनः।
हीनदोषोऽक्षयगुणो दक्षारिः पूषदन्तभित्॥ 99॥

758. **अन्धकारिः** — अंधकासुर का वध करनेवाले।
759. **मखद्वेषीः** — दक्ष के यज्ञ का विध्वंस करनेवाले।
760. **विष्णुकन्धरपातनः** — यज्ञमय विष्णु का गला काटनेवाले।
761. **हीनदोषः** — दोष रहित।
762. **अक्षय गुणः** — अविनाशी गुणों से संपन्न।
763. **दक्षारिः** — दक्ष के शत्रु।
764. **पूषदन्तभित्** — पूषा देवता के दाँत तोड़नेवाले।

धूर्जटिः खण्डपरशुः सकलो निष्कलोऽनघः।
अकालः सकलाधारः पाण्डुराभो मृडोनटः॥ 100॥

765. **धूर्जटिः** — जटा के भार से विभूषित।
766. **खण्डपरशुः** — खंडित परशुवाले।
767. **सकलोनिष्कलः** — साकार एवं निराकार परमात्मा।
768. **अनघः** — पाप के स्पर्श से शून्य।
769. **अकालः** — काल के प्रभाव से रहित।
770. **सकलाधारः** — सबके आधार।
771. **पाण्डुराभः** — श्वेत कांतिवाले।
772. **मृडोनटः** — सुखदायक एवं तांडव-नृत्यकारी।

पूर्णः पूरायिता पुण्यः सुकुमारः सुलोचनः।
सामगेयप्रियोऽक्रूरः पुण्यकीर्तिरनामयः ॥101॥

773. पूर्णः — सर्वव्यापी परब्रह्म परमात्मा।
774. पूरयिता — भक्तों की अभिलाषा पूर्ण करनेवाले।
775. पुण्यः — परम पवित्र।
776. सुकुमारः — सुंदर कुमार हैं जिनके।
777. सुलोचनः — सुंदर नेत्रवाले।
778. समागेयप्रियः — सामगान के प्रेमी।
779. अक्रूरः — क्रूरता रहित।
780. पुण्यकीर्तिः — पवित्र कीर्तिवाले।
781. अनामयः — रोग-शोक से रहित।

मनोजवस्तीर्थकरो, जटिलो जीवतेश्वरः।
जीवितान्तकरो, नित्यो वसुरेता वसुप्रदः ॥ 102॥

782. मनोजवः — मन के समान वेगशाली।
783. तीर्थकरः — तीर्थों के निर्माता।
784. जटिलः — जटाधारी।
785. जीवितेश्वरः — सबके प्राणेश्वर।
786. जीवितान्तकरः — प्रलयकाल में सबके जीवन का अंत करनेवाले।
787. नित्यः — सनातन।
788. वसुरेताः — सुवर्णमय वीर्यवाले।
789. वसुप्रदः — धनदाता।

सद्गतिः सत्कृतिः सिद्धिः सज्जातिः खलकण्टकः।
कलाधरो महाकालभूतः सत्यपरायणः ॥103॥

790. सद्गति — सत्पुरुषों के आश्रय।
791. सत्कृतिः — शुभ कर्म करनेवाले।

792. **सिद्धि** — सिद्धि स्वरूप।
793. **सज्जातिः** — सत्पुरुषों के जन्मदाता।
794. **खलकण्टकः** — दुष्टों के लिए कंटक रूप।
795. **कलाधरः** — कलाधारी।
796. **महाकालभूतः** — महाकाल नामक ज्योतिर्लिंग स्वरूप अथवा काल के भी काल होने से महाकाल।
797. **सत्यपरायणः** — सत्यनिष्ठ।

लोकलावण्यकर्ता च लोकोत्तरेसुखालयः।
चन्द्र सञ्जीवनीः शास्ता लोकगूढो महाधिपः ॥104॥

798. **लोकवाण्यकर्ताः** — सब लोगों को सौंदर्य प्रदान करनेवाले।
799. **लोकोत्तरे सुखालयः** — लोकोत्तर सुख के आश्रय।
800. **चन्द्र सञ्जीवन शास्ताः** — सोमनाथ रूप से चंद्रमा को जीवन प्रदान करनेवाले सर्वशासक शिव।
801. **लोकगूढः** — समस्त संसार में अव्यक्त रूप से व्यापक।
802. **महाधिपः** — महेश्वर।

लोकबन्धु लोकनाथः कृतज्ञः कीर्तिभूषणः।
अनापयोऽक्षरः कान्तः सर्वशस्त्रभृतावरः ॥105॥

803. **लोकबन्धुलोकनाथः** — संपूर्ण लोकों के बंधु एवं रक्षक।
804. **कृतज्ञः** — उपकार को माननेवाले।
805. **कीर्तिभूषणः** — उत्तम यश से विभूषित।
806. **अनपयोऽक्षरः** — विनाश रहित—अविनाशी।
807. **कान्तः** — प्रजापति दक्ष का अंत करनेवाले।
808. **सर्वस्त्रभृतावरः** — संपूर्ण शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ।

तेजोमय द्युतिधरो लोकनामग्रणीरणुः।
शुचिस्मितः प्रसन्नामा दुर्जेयो दुरतिक्रमः ॥106॥

809. तेजोमय द्युतिधरः — तेजस्वी और कांतिमान।
810. लोकानामग्रणीः — संपूर्ण जगत् के लिए अग्रगण्य देवता अथवा जगत् को आगे बढ़ानेवाले।
811. अणुः — अत्यंत सूक्ष्म।
812. शुचिस्मितः — पवित्र मुसकानवाले।
813. प्रसन्नात्माः — हर्ष भरे हृदयवाले।
814. दुर्जेयः — जिन पर विजय पाना अत्यंत कठिन है।
815. दुरतिक्रमः — दुर्लंघ्य।

ज्योतिर्मयो जगन्नाथो निराकारो जलेश्वरः।
तुम्बवीणो महाकोपो विशोकः शोकनाशनः ॥107॥

816. ज्योतिर्मयः — तेजोमय।
817. जगन्नाथः — विश्वनाथ।
818. निराकारः — आकार रहित परमात्मा।
819. जलेश्वरः — जल के स्वामी।
820. तुम्बवीणः — तुंबी की वीणा बजानेवाले।
821. महाकोपः — संहार के समय महान् कोप करनेवाले।
822. विशोकः — शोक रहित।
823. शोकनाशनः — शोक का नाश करनेवाले।

त्रिलोकपस्त्रिलोकेशः सर्वशुद्धिरधोक्षजः।
अन्यक्त लक्षणो देवो व्यक्ताव्यक्तो विशाम्पतिः ॥108॥

824. त्रिलोकपः — तीनों लोकों का पालन करनेवाले।
825. त्रिलोकेशः — त्रिभुवन के स्वामी।
826. सर्वशुद्धिः — सबकी शुद्धि करनेवाले।

827. अद्योक्षजः — इंद्रियों और उनके विषयों से अतीत।

828. अव्यक्तलक्षणो देवः — अव्यक्त लक्षणवाले देवता।

829. व्यक्ताव्यक्तः — स्थूल सूक्ष्म रूप।

830. विशाम्पतिः — प्रजाओं के पालक।

वरशीलो वरगुणः सारो मानधनोमयः।
ब्रह्मा विष्णुः प्रजापालो हसो हंसगतिर्वयः ॥109॥

831. वरशीलः — श्रेष्ठ स्वभाववाले।

832. वरगुणः — उत्तम गुणवाले।

833. सारः — सारतत्त्व।

834. मानधनः — स्वाभिमान के धनी।

835. मयः — सुख स्वरूप।

836. ब्रह्माः — सृष्टिकर्ता ब्रह्मा।

837. विष्णुप्रजापालः — प्रजापालक विष्णु।

838. हंसः — सूर्य स्वरूप।

839. हंसगतिः — हंस के समान चालवाले।

840. वयः — गरुड़ पक्षी।

वेधा विधाता धाता च स्त्रष्टाहर्ता चतुर्मुखः।
कैलास शिखरवासी सर्वावासी सदागतिः ॥110॥

841. वेधा विधाता धाता — ब्रह्मा, धाता और विधाता नामक देवता स्वरूप।

842. स्त्रष्टा — सृष्टिकर्ता।

843. हर्ता — संहारकारी।

844. चतुर्मुख — चार मुखवाले ब्रह्मा।

845. कैलाश शिखरवासी — कैलास के शिखर पर निवास करनेवाले।

846. सर्वावासी — सर्वव्यापी।

847. सदागतिः — निरंतर गतिशील वायुदेवता।

हिरण्यागर्भो द्रुहिणो भूतपालोऽथ भूपतिः।
सद्योगी योगविद्योगी वरदो ब्राह्मणप्रियः ॥111॥

848. हिरण्यगर्भः — ब्रह्मा।
849. द्रुहिणः — ब्रह्मा।
850. भूतपालः — प्राणियों का पालन करनेवाले।
851. भूपति — पृथ्वी के स्वामी।
852. सद्योगीः — श्रेष्ठ योगी।
853. योग विद्योगीः — योग विद्या के दाता योगी।
854. वरदः — वर देनेवाले।
855. ब्राह्मण प्रियः — ब्राह्मणों के प्रेमी।

देवप्रियो देवनाथो देवज्ञो देवचिन्तकः।
विषमाक्षो विशालाक्षो वृषदो वृषवर्धनः ॥112॥

856. देवप्रियो देवनाथः — देवताओं के प्रिय तथा रक्षक।
857. देवज्ञः — देव तत्त्व के ज्ञाता।
858. देवचिन्तकः — देवताओं का विचार करनेवाले।
859. विषमाक्षः — विषम नेत्रवाले।
860. विशालाक्षः — बड़े-बड़े नेत्रवाले।
861. वृषदो वृषवर्धनः — धर्म का दान और वृद्धि करनेवाले।

निर्ममो निरङ्कारो निर्मोहो निरुपद्रवः।
दर्पहा दर्पदो दृप्तः सर्वर्तुपरिवर्तकः ॥113॥

862. निर्ममः — ममता रहित।
863. निरहंकारः — अहंकार शून्य।
864. निर्मोहः — मोह शून्य।
865. निरुपद्रवः — उपद्रव या उत्पात से दूर।
866. दर्पहा दर्पदः — दर्प का हनन और खंडन करनेवाले।

867. **दृप्तः** — स्वाभिमानी।

868. **सर्वर्तुपरिवर्तकः** — समस्त ऋतुओं को बदलते रहनेवाले।

सहस्रजित् सहस्रार्चिः स्निग्ध प्रकृति दक्षिणः।
भूतभव्य भवन्नाथः प्रभवो भूतिनाशनः ॥114॥

869. **सहस्रजित्** — सहस्रों पर विजय पानेवाले।

870. **सहस्रार्चिः** — सहस्रों किरणों से प्रकाशमान सूर्य रूप।

871. **स्निग्ध प्रकृति दक्षिणः** — स्नेहयुक्त स्वभाववाले तथा उदार।

872. **भूतभव्य भवन्नाथः** — भूत, भविष्य और वर्तमान के स्वामी।

873. **प्रभवः** — सबकी उत्पत्ति के कारण।

874. **भूतिनाशनः** — दुष्टों के ऐश्वर्य का नाश करनेवाले।

अर्थऽनर्थो महाकोशः परकार्येकपण्डितः।
निष्कण्टकः कृतानन्दो निर्व्याजो व्याजमर्दनः ॥115॥

875. **अर्थः** — परम पुरुषार्थ रूप।

876. **अनर्थः** — प्रयोजन रहित।

877. **महाकोशः** — अनंत धनराशि के स्वामी।

878. **परकार्येक पण्डितः** — पराए कार्य को सिद्ध करने की कला में एकमात्र विद्वान्।

879. **निष्कण्टकः** — कंटक रहित।

880. **कृतानन्दः** — नित्य सिद्ध आनंद स्वरूप।

881. **निर्व्याजोव्याजमर्दनः** — स्वयं कपट रहित होकर दूसरे के कपट को नष्ट करनेवाले।

सत्त्ववान्सात्त्विकः सत्यकीर्तिः स्नेहकृतागमः।
अकम्पितो गुणग्राही नेकात्मा नैककर्मकृत् ॥116॥

882. **सत्त्ववान्** — सत्त्वगुण से युक्त।

883. **सात्त्विकः** — सत्त्वनिष्ठ।
884. **सत्यकीर्तिः** — सत्य कीर्तिवाले।
885. **स्नेहकृतागमः** — जीवों के प्रति स्नेह के कारण विभिन्न आगमों को प्रकाश दिलानेवाले।
886. **अकम्पितः** — सुस्थिर।
887. **गुणग्राही:** — गुणों का आदर करनेवाले।
888. **नेकात्मा नैककर्मकृतः** — अनेक रूप होकर अनेक प्रकार के कर्म करनेवाले।

सुप्रीतः सुमुखः सूक्ष्मः सुकरो दक्षिणानिलः।
नन्दिस्कन्धधरो धूर्यः प्रकटः प्रीतिवर्धनः ॥117॥

889. **सुप्रीतः** — अत्यंत प्रसन्न।
890. **सुमुखः** — सुंदर मुखवाले।
891. **सूक्ष्मः** — स्थूल भाव से रहित।
892. **सुकरः** — सुंदर हाथवाले।
893. **दक्षिणानिलः** — मलयानिल के समान सुखद।
894. **नन्दिस्कन्धधरः** — नंदी की पीठ पर सवार होनेवाले।
895. **धूर्यः** — उत्तरदायित्व का भार वहन करने में समर्थ।
896. **प्रकटः** — भक्तों के सामने प्रकट होनेवाले अथवा ज्ञानियों के सामने नित्य प्रकट।
897. **प्रीतिवर्धनः** — प्रेम बढ़ानेवाले।

अपराजितः सर्वसत्तो गोविन्दः सत्त्ववाहनः।
अधृतः स्वधृतः सिद्धः पूतमूर्ति शोधनः ॥118॥

898. **अपराजितः** — किसी से परास्त न होनेवाले।
899. **सर्वसत्त्वः** — संपूर्ण सत्त्वगुण के आश्रय अथवा समस्त प्राणियों की उत्पत्ति के हेतु।

900. गोविन्दः — गोलोक की प्राप्ति करानेवाले।
901. सत्त्ववाहनः — सत्त्व स्वरूप धर्ममय वृषभ से वाहन का काम लेनेवाले।
902. अधृतः — आधार रहित।
903. स्वधृतः — अपने आप में स्थित।
904. सिद्धः — नित्य सिद्ध।
905. पूतमूर्तिः — पवित्र शरीरवाले।
906. यशोधनः — सुयश के धनी।

वाराहशृङ्गधृक्छृङ्गी बलवानेकनायकः।
श्रुतिप्रकाशः श्रुतिमानेकबन्धुरनेककृतः ॥119॥

907. वाराहशृङ्गधृक्छृङ्गी — वाराह को मारकर उसके दाढ़रूपी शृंगों को धारण करने के कारण शृंगी नाम से प्रसिद्ध।
908. बलवान् — शक्तिशाली।
909. एकनायकः — अद्वितीय नेता।
910. श्रुतिप्रकाशः — वेदों को प्रकाशित करनेवाले।
911. श्रुतिमानः — वेद ज्ञान से संपन्न।
912. एकबन्धुः — सबके एक मात्र सहायक।
913. अनेककृतः — अनेक प्रकार के पदार्थों की सृष्टि करनेवाले।

श्रीवत्सलशिवारम्भः शान्तभद्रः समो यशः।
भूशयो भूषणो भूतिभूर्तकद् भूतभावनः ॥120॥

914. श्रीवत्सलशिवारम्भः — श्रीवत्सधारी विष्णु के लिए मंगलकारी।
915. शान्तभद्रः — शांत एवं मंगलरूप।
916. समः — सर्वत्र समभाव रखनेवाले।
917. यशः — यश स्वरूप।
918. भूशयः — पृथ्वी पर शयन करनेवाले।

919. भूषणः — सबको विभूषित करनेवाले।
920. भूतिः — कल्याण स्वरूप।
921. भूर्तकृतः — प्राणियों की सृष्टि करनेवाले।
922. भूतभावनः — भूतों के उत्पादक।

अकम्पो भक्तिकायस्तु कालहा नीललोहितः।
सत्यव्रत महात्यागी नित्यशान्तिपरायणः॥121॥

923. अकम्पः — कंपित न होनेवाले।
924. भक्तिकायः — भक्ति स्वरूप।
925. कालहा — काल नाशक।
926. नील लोहितः — नील और लोहित वर्ण वाले।
927. सत्यव्रत महात्यागी — सत्य-व्रतधारी एवं महान् त्यागी;
928. नित्यशान्तिपरायण — निरंतर शांत।

परार्थवृत्तिवरदो विरक्तस्तु विशारदः।
शुभदः शुभकर्ता च शुभनामा शुभः स्वयम्॥122॥

929. परार्थवृत्तिवरदः — परोपकारव्रती एवं अभीष्ट वरदाता।
930. विरक्तः — वैराग्यवान।
931. विशारदः — विज्ञानवान।
932. शुभदः शुभकर्ता — शुभ देने और करनेवाले।
933. शुभनामा शुभ स्वयम् — स्वयं शुभ स्वरूप होने के कारण शुभ नामधारी।

अनर्थितोऽगुणः साक्षी ह्यकर्ता कनकप्रभः।
स्वभावभद्रो मध्यस्थः शत्रुघ्नो विघ्ननाशनः॥123॥

934. अनर्थितः — याचना रहित।
935. अगुणः — निर्गुण।

936. **साक्षीअकर्ता** — द्रष्टा एवं कर्तत्वरहित।
937. **कनक प्रभः** — सुवर्ण के समान कांतिमान्।
938. **स्वभाव प्रदः** — स्वभावतः कल्याणकारी।
939. **मध्यस्थः** — उदासीन।
940. **शत्रुघ्नः** — शत्रु नाशक।
941. **विघ्ननाशनः** — विघ्नों का निवारण करनेवाले।

शिखण्डी कवची शूली जटीमुण्डी च कुण्डली।
अमृत्युः सर्वदृक्सिंहस्तेजोराशिर्महामणिः ॥ 124 ॥

942. **शिखण्डी कवची शूली** — मोर पंख, कवच और त्रिशूल धारण करनेवाले।
943. **जटीमुण्डी च कुण्डली** — जटा, मुंडमाला और कवच धारण करनेवाले।
944. **अमृत्युः** — मृत्यु रहित।
945. **सर्वदृक्सिंह** — सर्वज्ञों में श्रेष्ठ।
946. **तेजोराशिर्महामाणि** — तेजःपुंज महामणि कौस्तुभादि रूप।

असंख्येयोऽप्रमेयात्मा वीर्यवान् वीर्यकोविदः।
वेद्यश्चैव वियोगात्मा परावर मुनीश्वरः ॥ 125 ॥

947. **असंख्येयोऽप्रमेयात्मा** — असंख्य नाम, रूप और गुणों से युक्त होने के कारण किसी के द्वारा मापे न जा सकने वाले।
948. **वीर्यवान् वीर्यकोविदः** — पराक्रमी एवं पराक्रम के ज्ञाता।
949. **वेद्यः** — जानने योग्य।
950. **वियोगात्मा** — दीर्घकाल तक सती के वियोग में अथवा विशिष्ट योग की साधना में संलग्न हुए मनवाले।
951. **परावर मुनीश्वरः** — भूत और भविष्य के ज्ञाता मुनीश्वर रूप।

अनुत्तमो दुराधर्षो मधुर प्रिय दर्शनः।
सुरेशः शरणं सर्वः शब्द ब्रह्मसताङ्गतिः ॥126॥

952. अनुत्तमो दुराधर्षः — सर्वोत्तम एवं दुर्जय।
953. मधुर प्रिय दर्शनः — जिनका दर्शन मनोहर एवं प्रिय लगता है, ऐसे।
954. सुरेशः — देवताओं के ईश्वर।
955. शरणम् — आश्रयदाता।
956. सर्वः — सर्व स्वरूप।
957. शब्दब्रह्म सताङ्गतिः — प्रणव रूप तथा सत्पुरुषों के आश्रय।

कालपक्षः कालकालः कङ्गणीकृतवासुकिः।
महेष्वासो महीभर्ता निष्कलङ्गो विश्वङ्खलः ॥127॥

958. कालपक्षः — काल जिनका सहायक है।
959. कालकालः — काल के भी काल।
960. कङ्गणीकृतवासुकिः — वासुकि नाग को अपने हाथ में कंगन के समान धारण करनेवाले।
961. महेष्वासः — महाधनुर्धर।
962. महीभर्ता — पृथ्वी पालक।
963. निष्कलङ्ग — कलंकशून्य।
964. विश्वङ्खलः — बंधन रहित।

द्युमणिस्तरणिर्धन्य सिद्धिदः सिद्धिसाधनः।
विश्वतः संवृतः स्तुत्यो व्यूढोरस्को महाभुजः ॥128॥

965. द्युमणिस्तराणि — आकाश में मणि के समान प्रकाशमान तथा भक्तों को भवसागर से पार तारने के लिए नौकारूप सूर्य।
966. धन्यः — कृतकृत्य।

967. **सिद्धिदः सिद्धिसाधन**— सिद्धिदाता और सिद्धि के साधक।
968. **विश्वतः संवृतः** — सब ओर से माया द्वारा आवृत्त।
969. **स्तुत्यः** — स्तुति के योग्य।
970. **व्यूढोरस्कः** — चौड़ी छातीवाले।
971. **महाभुजः** — विशाल भुजाओंवाले॥ 128॥

सर्वयोनिर्निरातङ्को नरनारायण प्रियः।
निर्लेपो निस्प्रपञ्चात्मा निर्व्यङ्गो व्यङ्गनाशनः॥129॥

972. **सर्वयोनिः** — सबकी उत्पत्ति के स्थान।
973. **निरात** — निर्भय।
974. **नरनारायणप्रियः** — नर-नारायण के प्रेमी अथवा प्रियतम।
975. **निर्लेपो निष्प्रपञ्चात्मा**: — दोष संपर्क से रहित तथा जगन्प्रपंच से अतीत स्वरूप वाले।
976. **निर्व्यङ्ग** — विशिष्ट अंगवाले प्राणियों के प्राकट्य के हेतु।
977. **व्यङ्गनाशनः** — यज्ञादि कर्मों में होनेवाले अंगवैगुण्य का नाश करनेवाले।

स्तव्यः स्तवप्रियः स्तोता व्यासमूर्ति निरङ्कुशः।
निरवद्यमयोपायो विद्याराशी रसप्रियः॥130॥

978. **स्तव्यः** — स्तुति के योग्य।
979. **स्तवप्रियः** — स्तुति के प्रेमी।
980. **स्तोता** — स्तुति करनेवाले।
981. **व्यासमूर्तिः** — व्यास स्वरूप।
982. **निरङ्कुशः** — अंकुश रहित, स्वतंत्र।
983. **निरवद्यमयोपायः** — मोक्ष प्राप्ति के निर्दोष उपाय रूप।
984. **विद्याराशिः** — विद्याओं के सागर।
985. **रसप्रियः** — ब्रह्मानंद रस के प्रेमी।

प्रशान्त बुद्धिरक्षुण्णः संग्रही नित्यसुन्दरः।
वैयाघ्रधुर्यो धात्रीशः शाकल्यः शर्वरीपतिः ॥131॥

986. **प्रशान्तबुद्धिः** — शांत बुद्धिवाले।
987. **अक्षुण्णः** — क्षोभ या नाश से रहित।
988. **संग्रहीः** — भक्तों का संग्रह करनेवाले।
989. **नित्य सुन्दरः** — सतत मनोहर।
990. **वैयाघ्रधुर्यः** — व्याघ्र चर्मधारी।
991. **धात्रीशः** — ब्रह्माजी के स्वामी।
992. **शाकल्यः** — शाकल्य ऋषिके।
993. **शर्बरीपतिः** — रात्रि के स्वामी चंद्रमा रूप।

परमार्थगुरुर्दत्तः सूरिराश्रित वत्सलः।
सोमोरसज्ञो रसदः सर्वसत्वावलम्बनः ॥132॥

994. **परमार्थगुरुर्दत्त सूरिः** — परमार्थ तत्त्व का उपदेश देनेवाले ज्ञानी गुरु दत्तात्रेय रूप।
995. **आश्रित वत्सलः** — शरणागतों पर दया करनेवाले।
996. **सोमः** — उमा सहित।
997. **रसज्ञः** — भक्ति रस के ज्ञाता।
998. **रसदः** — प्रेम रस प्रदान करनेवाले।
999. **सर्वसत्वावलम्बनः** — समस्त प्राणियों को सहारा देनेवाले।

इस प्रकार यह भगवान् शिव के सहस्र नाम कहलाए। श्रीहरि प्रतिदिन सहस्र (एक हजार) नामों द्वारा भगवान् शिव की स्तुति सहस्र (एक हजार) कमलों द्वारा उनका पूजन एवं प्रार्थना किया करते थे।

एक दिन भगवान् शिव की लीला से एक कमल कम हो जाने पर भगवान् विष्णु ने अपना कमलोपान नेत्र (इन्हें कमलनयन भी कहा जाता है) ही चढ़ा दिया। इस तरह उनसे पूजित एवं प्रसन्न हो शिव ने उन्हें चक्र दिया और इस प्रकार

कहा, 'हरे! सब प्रकार के अनर्थों की शांति के लिए तुम्हें मेरे स्वरूप का ध्यान करना चाहिए। अनेकानेक दुःखों का नाश करने के लिए इस सहस्र नाम का पाठ करते रहना चाहिए तथा समस्त मनोरथों की सिद्धि के लिए सदा मेरे इस चक्र को प्रयत्नपूर्वक धारण करना चाहिए, यह सभी चक्रों में उत्तम है।'

संसार में जो लोग भी प्रतिदिन इस सहस्र नाम का पाठ करेंगे या कराएँगे, उन्हें स्वप्न में भी कोई दुःख प्राप्त नहीं होगा। शासक की ओर से संकट प्राप्त होने पर यदि मनुष्य सांगोपांग विधिपूर्वक इस सहस्र नाम स्तोत्र का सौ बार पाठ करे तो निश्चय ही वह कल्याण का भागी होता है। यह उत्तम स्तोत्र रोग का नाशक, विद्या और धन देनेवाला, संपूर्ण अभीष्ट की प्राप्ति करानेवाला, पुण्यजनक तथा सदा ही शिव भक्ति देनेवाला है। जिस फल के उद्देश्य से मनुष्य इस श्रेष्ठ स्तोत्र का पाठ करेंगे, उसे निस्संदेह प्राप्त कर लेंगे। जो प्रतिदिन सवेरे उठकर मेरी पूजा के पश्चात् मेरे सामने इसका पाठ करता है, सिद्धि उससे दूर नहीं रहती। अंत में वह सायुज्य मोक्ष का भागी होता है।

□

शिव को प्रसन्न करने की वंदना

भगवान् शिव को दुष्टता, कपटता और कुटिलता के साथ अहंकार बिल्कुल भी स्वीकार नहीं है। कथा है कि एक व्यक्ति शिव की भक्ति करता था, लेकिन वह दुष्टता से भरा था, उसके हृदय में कुटिलता, कपट भरा था। अपने गुरु, जो सहज ब्राह्मण और शिवभक्त थे, उनकी बातों पर भी वह ध्यान नहीं देता था। एक दिन वह शिवजी के मंदिर में शिवनाम का जाप कर रहा था, उसी समय उसके गुरु आए, पर अभिमान के कारण उसने उनका सम्मान नहीं किया और अपने स्थान से उठा तक नहीं, न ही प्रणाम किया। गुरु को न तो क्रोध आया, न ही उन्होंने कुछ कहा, लेकिन भगवान् उसकी कुटिलता, दुष्टता तथा हृदय की कपटता को जानकर उसके इस अपराध को सह नहीं सके। मंदिर में आकाशवाणी हुई कि अरे हतभाग्य! मूर्ख! अभिमानी, यद्यपि तेरे गुरु को क्रोध नहीं है, वे अत्यंत कृपालु चित्तवाले हैं, और उन्हें (पूर्ण तथा) यथार्थ ज्ञान है, तो भी हे मूर्ख! तुझको मैं श्राप दूँगा! अरे पापी! तू गुरु के सामने अजगर की भाँति बैठा रहा! रे दुष्ट! तेरी बुद्धि पाप से ढक गई है, अत: तू सर्प हो जा। और अधम से भी अधम! उस अधोगति (सर्प की नीची योनि) को पाकर बड़े भारी पेड़ के खोखले में जाकर रह। तब शिवजी का श्राप सुनकर गुरुजी ने हाहाकार किया, उसे डर के मारे काँपता हुआ देखकर ही गुरु के हृदय में बड़ा संताप हुआ। यही उत्तम पुरुषों की पहचान है। प्रेम हित दंडवत् करके वे गुरु ब्राह्मण श्री शिवजी के सामने हाथ जोड़कर अपने शिष्य की भयंकर गति अर्थात् दंड का विचार कर गद्‌गद वाणी से भगवान् शिव से विनती करने लगे। उन्होंने इस प्रकार शिवजी की वंदना की—

शिव वंदना

नमामीशमीशान निर्वाण रूपं, विभं व्यापकं ब्रह्म वेद स्वरूपं।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं, चिदाकाशवाकास वासं भजेऽहं॥1॥

हे मोक्ष स्वरूप, विभु, व्यापक ब्रह्म और वेद स्वरूप, ईशान दिशा के ईश्वर तथा सबके स्वामी श्रीशिवजी, मैं आपको नमस्कार करता हूँ। निज स्वरूप में स्थित (अर्थात् मायादिरहित) मायिक गुणों रहित (जिस पर माया के गुण नहीं हैं) भेद रहित, इच्छा रहित, चेतन आकाश स्वरूप एवं आकाश को ही वस्त्र में धारण करनेवाले दिगंबर (अथवा आकाश को ही आच्छादित करनेवाले) आपको मैं भजता हूँ।

निराकार ओंकार मूलं तुरीयं, गिराग्यान गोतीतमीशं गिरीशं।
करालं महाकाल कालं कृपालं, गुणाकार संसारपारं नतोऽहं ॥ 2 ॥

निराकार, ओंकार के मूल तुरीय (तीनों गुणों से अतीत) वाणी, ज्ञान और इंद्रियों से परे कैलासपति, विकराल, महाकाल के भी काल, कृपालु, गुणों के धाम, संसार से परे आप परमेश्वर को मैं नमस्कार करता हूँ।

तुषारादि संकाश गौरं गभीरं, मनोभूत कोटि प्रभाश्री शरीरं।
स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारू गङ्गा, लसद्भालबालेन्दु कण्ठे भुजङ्गा ॥3 ॥

जो हिमालय के समान गौरवर्ण तथा गंभीर हैं, जिनके शरीर में करोड़ों कामदेवों की ज्योति एवं शोभा है, जिनके सिर पर सुंदर नदी गंगाजी विराजमान हैं, जिनके ललाट पर द्वितीया का चंद्रमा और गले में सर्प सुशोभित है।

चलत्कुण्डलं भ्रू सुनेत्रं विशालं, प्रसन्नाननं नीलकण्ठं दयालं।
मृगाधीश चर्माम्बरं मुण्डमालं, प्रियं शंकरं सर्वनाथं भजामि ॥4 ॥

जिनके कानों में कुंडल हिल रहे हैं, सुंदर भृकुटि और विशाल नेत्र हैं, जो प्रसन्न मुख नीलकंठ और दयालु हैं, सिंहचर्म वस्त्र धारण किए और मुंडमाला पहने हैं, उन सबके प्यारे और सबके नाथ (कल्याण करनेवाले) श्री शंकरजी को मैं भजता हूँ।

प्रचण्डं प्रकृष्टं प्रगल्भं परेशं, अखण्डं अजं भानुकोटि प्रकाशं।
त्रयः शूल निर्मूल नं शूल पाणि, भजेऽहं भवानीपतिं भावगम्यं ॥5 ॥

प्रचंड (रुद्ररूप) श्रेष्ठ, तेजस्वी परमेश्वर, अखंड, अजन्मा, करोड़ों सूर्यों के समान प्रकाश वाले, तीनों प्रकार के शूलों (दुःखों) को निर्मूल करनेवाले, हाथ में त्रिशूल धारण किए भाव (प्रेम) के द्वारा प्राप्त होनेवाले भवानी के पति श्रीशंकरजी को मैं भजता हूँ।

कलातीत कल्याण कल्पान्तकारी, सदा सज्जानन्ददाता पुरारी।
चिदानन्द संदोह मोहापहारी, प्रसीद-प्रसीद प्रभो मन्मथारी॥6॥

कलाओं से परे, कल्याणस्वरूप, कल्पका अंत (प्रलय) करनेवाले, सज्जनों को सदा आनंद देनेवाले, त्रिपुर के शत्रु, सच्चिदानंदन, मोह को हरनेवाले, मन को मथ डालनेवाले, कामदेव के शत्रु, हे प्रभो! प्रसन्न होइए, होइए।

न यावद् उमानाथ पादार विन्दं, भजंतीह लोके परे वा नाराणां।
तावत्सुखं शान्ति सन्ताप नाशं, प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासं॥7॥

जब तक पार्वती के पति आपके चरण कमलों को मनुष्य नहीं भजते, तब तक उन्हें न तो इस लोक और न ही परलोक में सुख-शांति मिलती है और न उनके तापों का नाश होता है। अतः हे! समस्त जीवों के अंदर (हृदय में) निवास करनेवाले प्रभो! प्रसन्न होइए।

न जानामि योगं जपं नैव पूजां नतोऽहं सदा सर्वदा शंभु तुम्यं।
जरा जन्म दुःखौद्य तातप्यमानं, प्रभोपाहि आपन्नमामीश शंभो॥8॥

मैं न तो योग जानता हूँ, न जप, न पूजा ही। हे शंभो! मैं तो सदा-सर्वदा आपको ही नमस्कार करता हूँ। हे प्रभो! बुढ़ापा तथा जन्म-मृत्यु के दुःख समूहों से जलते हुए मुझ दुःखी की दुःख से रक्षा कीजिए। हे ईश्वर! हे शंभो! मैं आपको नमस्कार करता हूँ।

रुद्राष्टक मिदंप्रोक्तं विप्रेण हरतोषये।
ये पठन्ति नरा भक्तत्या तेषां शम्भुः प्रसीदति॥9॥

भगवान् रुद्र की स्तुति का यह अष्टक उन शंकरजी की तुष्टि (प्रसन्नता) के लिए ब्राह्मण द्वारा कहा गया, जो मनुष्य इसे भक्तिपूर्वक पढ़ते हैं, उन पर भगवान् शंभु (शिव) प्रसन्न होते हैं।

इस प्रकार भगवान् शिव की स्तुति उनको प्रसन्न करने के लिए ब्राह्मण द्वारा की गई, जिससे शिव प्रसन्न हो गए और वरदान माँगने को कहा—उस ब्राह्मण ने ऐसा वरदान माँगा कि अपने शिष्य की श्राप से मुक्ति हो जाए, जिसको भगवान् शिव ने 'एवमस्तु' (ऐसा ही होगा) कहकर दिया।

अतः भगवान् शिव को प्रसन्न करने की यह स्तुति है। इसको भक्तिपूर्वक पढ़ने से शिव प्रसन्न हो जाते हैं और जीवन में वांछित जो भी हो, उसको पूरा करते हैं, मन में कुटिलता, अभिमान, दुष्टता, कपटता छोड़कर भगवान् शिव की स्तुति करने से ही सफलता मिलती है। □

शिव तांडव स्तोत्र

शिव तांडव स्तोत्र रावणकृत शिव आराधना है। कहा जाता है कि रावण को शिव की कृपा से ही अपरिमित शक्तियाँ प्राप्त हुई थीं, इन्हीं की कृपा के कारण वह महान् शक्तिशाली हुआ और इंद्र समेत सभी पर विजय प्राप्त की थी; लेकिन जब उसने अत्याचार प्रारंभ किया और इसकी पराकाष्ठा हो गई तो उसको जो अभिमान था कि मुझे वरदान के कारण कोई मार नहीं सकता, मेरी मृत्यु नहीं हो सकती है, श्रीराम ने रामेश्वरम् में भगवान् शिव की आराधना की तथा उनका आशीर्वाद पाकर रावण पर विजय प्राप्त की तथा संपूर्ण राक्षसों का संहार करते हुए रावण को भी मार दिया; लेकिन रावणकृत शिव तांडव स्तोत्र अद्वितीय है। रावण द्वारा इसके दैनिक पाठ से असीमित संपदा, सुख, शांति को प्राप्त करने की शक्ति शिव कृपा से मिली थी। सायंकाल पूजा की समाप्ति के बाद जो इसका पाठ करता है, जीवन में वांछित सभी चीजों की उसको प्राप्ति होती है, वह इस प्रकार है—

रावणकृत शिव ताण्डव स्तोत्रम्

जटाटवीगलज्जल प्रवाह पावित स्थले,
गलेऽवलम्ब्य लाम्बितां भुजङ्गतुङ्गमालिकाम्।
डमड्डमड्डमड्डमन्निनादवड्डमर्वयं,
चकार चण्डताण्डवं तनोतु नः शिवःशिवम्॥1॥

जिन्होंने जटारूपी अटवी (वन) से निकलती हुई गंगाजी के गिरते हुए प्रवाह से पवित्र किए गए, गले में सर्पों की लटकती हुई विशाल माला को धारण कर,

डमरू के डम-डम शब्दों से मंडित प्रचंड तांडव (नृत्य) किया, वे शिवजी हमारे कल्याण का विस्तार करें।

जटाकराट्टसम्मन्नमभ्रमन्नि लिम्पनिर्झरी-विलोलवीचिवल्लरी विराजमानमूर्द्धिनि।
धगद्धगद्धगज्जवलल्लाटपट्रपावके किशोरचंद्रशेखरे रतिः प्रतिक्षणं मम्॥2॥

जिनका मस्तक जटारूपी कड़ाह में वेग से घूमती हुई गंगा की चंचल तरंग-लताओं से सुशोभित हो रहा है, ललाटाग्नि धक्-धक् जल रही है, सिर पर बाल चंद्रमा विराजमान है, उन (भगवान् शिव) में मेरा निरंतर अनुराग हो।

धराधरेन्दुनन्दिनी विलासबन्धुर स्फुरद्दिगन्तसन्तति प्रमोदमान मानसे।
कृपाकटाक्षधोरणी निरूद्धदुर्धरापदि क्वचिद्दिगम्बरे मनोविनोद मेतुवस्तुनि॥3॥

गिरिराज किशोरी पार्वती के विलास कालोपयोगी शिरोभूषण से समस्त दिशाओं को प्रकाशित होते देख जिनका मन आनंदित हो रहा है, जिनकी निरंतर कृपा दृष्टि से कठिन आपत्ति का भी निराकरण हो जाता है, ऐसे किसी दिगंबर तत्त्व में मेरा मन विनोद करे।

जटाभुजङ्गपिङ्गलस्फुरत्फणामणिप्रभा, कदम्वकुङ्कमद्रवप्रलिप्त दिग्वधूमुखे।
मदान्धसिन्धुरस्फुरत्व गुत्तरीयमेदुरे मनो विनोदमदभुतं विमर्तुभूतभर्तरि॥4॥

जिनके जटाजूटवर्ती भुजंगों के फणों की मणियों का फैला हुआ, पिंगल प्रभापुंज दिशारूपिणी अंगनाओं के मुख पर कुंकुम राग का अनुलेप कर रहा है, मतवाले हाथी के हिलते हुए चमड़े का उत्तरीय वस्त्र (चादर) धारण करने से स्निग्ध वर्ण हुए, उन भूतनाथ में मेरा चित्त अद्भुत विनोद करे।

सहस्रलोचनप्रभृत्यशेषलेखशेखर, प्रसूनधूलिधोरणी विधूसराङ्घ्रिपीठ भूः।
भुजङ्गरामालया निबद्धजाटजूटकः, श्रियैचिराय जायतां चकोरबन्धु शेखरः॥5॥

जिनकी चरण पादुकाएँ इंद्र आदि समस्त देवताओं के प्रणाम करते समय मस्तकवर्ती कुसुमों की धूलि से धूसरित हो रही हैं, नागराज (शेष) के हार से बँधी

हुई जटावाले वे भगवान् चंद्रशेखर मेरे लिए चिरस्थायिनी संपत्ति के साधक हों।

ललाटचत्वर ज्वलद्धनञ्जमस्फुरलिङ्गभा, निपीतपञ्चसायकं नमान्नि लिम्पनायकम्।
सुधायमूखलेखया विराजमानशेखरं, महाकपालिसम्पदेशिरो, जटालमस्तु नः ॥6॥

जिसने ललाट-वेदी पर प्रज्वलित हुई अग्नि के स्फुलिंगों के तेज से कामदेव को नष्ट कर डाला था, जिसे इंद्र नमस्कार किया करते हैं, सुधाकर की कला से सुशोभित मुकुटवाला वह (श्रीमहादेव का) उन्नत विशाल ललाटवाला जटिल मस्तक हमारी संपत्ति का साधक हो।

करालभाल पट्टिकाधगद्धगद्धगज्जवल, द्धनञ्जयाहुतीकृत प्रचण्डपञ्चसायके।
धराधरेन्द्रनन्दिनी कुचाग्रचित्रपत्रक, प्रकल्पनैकशिल्पिनि त्रिलोचने रतिर्मम ॥7॥

जिन्होंने अपने विकराल भालपट्ट पर धक्-धक् जलती हुई अग्नि में प्रचंड कामदेव को हवन कर दिया था, गिरिराज किशोरी के स्तनों पर पत्र-भंग रचना करने के एक मात्र कारीगर उन भगवान् त्रिलोचन में मेरा ध्यान लगा रहे।

नवीनमेघमण्डली निरुद्धदुर्धरस्फुरत्कुहू, निशीथिनीतमः प्रबन्धबद्धकन्धरः।
निलिम्पनिर्झरीधरस्ननोतु कृत्तिसिन्धुरः, कलानिधानबन्धुरः श्रियं जगद्धुरन्धरः ॥8॥

जिनके कंठ में नवीन मेघमाला से घिरी हुई अमावस्या की आधी रात के समय फैलते हुए दुरूह अंधकार के समान श्यामता अंकित है, जो गजचर्म लपेटे हुए हैं, वे संसार भार को धारण करनेवाले चंद्रमा (के संपर्क) में मनोहर कांतिवाले भगवान् गंगाधर मेरी संपत्ति का विस्तार करें।

प्रफुल्लनीलपङ्कज प्रपञ्चकालिमप्रभा,
वलम्बिकण्ठकन्दली रुचिप्रबद्धकन्धरम्।
स्मराच्छिदं पुराच्छिदं भवच्छिदं,
मखच्छिदं गजाच्छिदान्धकच्छिदंत मन्तकच्छिदं भजे ॥9॥

जिनका कंठदेश खिले हुए नील कमल समूह की श्याम प्रभा का अनुकरण करनेवाले हिरणी की सी छवि वाले चिह्न से सुशोभित है तथा जो कामदेव, त्रिपुर

भव (संसार) दक्ष-यज्ञ, हाथी, अंधकासुर और यमराज को भी उच्छेदन करनेवाले हैं, उन्हें मैं भजता हूँ।

अखर्वसर्वमङ्गलाकलाकदम्बमञ्जरी, रसप्रवाहमाधुरीविजृम्भणामधुव्रतम्।
स्मरान्तकंपुरान्तकं भवान्तकं मखान्तकं, गजान्तकान्धकान्तक तमन्तकान्तकं भजे॥10॥

जो अभिमान रहित पार्वती की कलारूप कदंब मंजरी के मकरंद स्तोत्र की बढ़ती हुई माधुरी के पान करनेवाले मधुप हैं तथा कामदेव, त्रिपुर, भव, दक्ष-यज्ञ, हाथी, अंधकासुर और यमराज का भी अंत करनेवाले हैं, उन्हें में भजता हूँ॥10॥

जयत्वदभ्रविभ्रमभ्रमदभुजङ्गमश्वस, द्विनिर्गमत्क्रमस्फुरत्कारालभालहव्यवाट्।
धिमिद्धिमिद्धवनन्मृदङ्गतुङ्गमङ्गल, ध्वनिक्रप्रवर्तितप्रचण्डताण्डवः शिवः॥11॥

जिनके मस्तक पर बड़े वेग के साथ घूमते हुए भुजंग के फुफकारने से ललाट की भयंकर अग्नि क्रमशः धधकती हुई फैल रही है, धिमि-धिमि बजते हुए मृदंग के गंभीर मंगल घोष के क्रमानुसार प्रचंड तांडव हो रहा है, उन भगवान् शिव की जय हो।

दृषद्विचित्रतल्पयो र्भुजङ्गमौम्तिकस्त्रजो र्गरिष्ठरत्नलोष्ठयोः सुद्धद्विपक्षपक्षयोः।
तृणारविन्दचक्षुषोः प्रजामहीमहेन्द्रयोः, समप्रवृत्तिकः कदा सदाशिवं भजाम्यहम्॥12॥

पत्थर और सुंदर बिछौनों में साँप और मुक्ता की माला में बहुमूल्य रत्न तथा मिट्टी के ढेले में, मित्र या शत्रु पक्ष में, तृण अथवा कमललोचना तरुणी में प्रजा और पृथ्वी के महाराज में, समान भाव रखता हुआ, मैं कब सदाशिव को भजूँगा।

कदानिलिम्पनिर्झरीनिकुञ्जकोटरे वसन्,
विमुक्तदुर्मतिः सदा शिरःस्थमञ्जलिंवहन्।
विलोललोललोचनो ललामभाललग्नकः,
शिवेति मन्त्रमुच्चरन् कदा सुखी भवाम्यहम्॥13॥

सुंदर ललाटवाले भगवान् चंद्रशेखर में दत्तचित्त हो अपने कुविचारों को

त्यागकर गंगाजी के तटवर्ती निकुंज के भीतर रहता हुआ शिर पर हाथ जोड़ डबडबाई हुई विकल आँखों से शिव 'मंत्र' का उच्चारण करता हुआ मैं कब सुखी होऊँगा।

इमं हि नित्यमेवमुम्तमुत्तमोत्तमं स्तवं,
पठन्स्मरन्बुवन्नरो विशुद्धिमेति सन्ततम्।
हरे गुरौ सुभमम्तिमाशु याति नान्यथा गतिं,
विमोहनं हि देहिनांसुशङ्करस्य चिन्तनम्॥14॥

जो मनुष्य इस प्रकार से उक्त, इस उत्तमोत्तम स्तोत्र का नित्य पाठ कर स्मरण और वर्णन करता रहता है, वह सदा शुद्ध रहता है और शीघ्र ही सुर गुरु श्री शंकरजी की अच्छी भक्ति प्राप्त कर लेता है, वह विरुद्ध गति को नहीं प्राप्त होता, क्योंकि श्री शिवजी का अच्छी प्रकार आचिंतन प्राणी वर्ग के मोह का नाश करनेवाला है।

पूजावसानसमये दशवक्त्रगीतं यः शम्भुपूजनपरं पठति प्रदोषे।
तस्य स्थिरांरथगजेन्द्रतुरङ्गयुक्तां,
लक्ष्मी सदैव सुमुखी प्रददाति शम्भुः॥15॥

सायंकाल में पूजा समाप्त होने पर रावण के गाए हुए इस शंभु पूजन संबंधी स्तोत्र का जो पाठ करता है, भगवान् शिव उस मनुष्य को रथ, हाथी, घोड़ों से युक्त सदा स्थिर रहनेवाली अनुकूल संपत्ति देते हैं।

रावण द्वारा गाए गए इस 'शिव तांडव स्तोत्रम्' का बहुत अधिक महत्त्व है। रावण बहुत ही बलशाली और प्रकांड विद्वान् था। शिव भक्ति के द्वारा ही उसको जीवन में असीम शक्तियाँ प्राप्त हुई थीं। उसी के कारण उसने सभी जगह विजय प्राप्त की थी। लेकिन शक्तियों का दुरुपयोग ही उसके पतन और नष्ट होने का कारण बना। शक्ति पाने के बाद जिस शिव की कृपा से उसे शक्ति मिली है, उनके बताए मार्ग पर जो नहीं चलता, तो ये शक्तियाँ ही उसके पतन का कारण बनती हैं।

———★———

'शिवाष्टकम्'

श्री शंकराचार्य विरचित 'शिवाष्टकम्' भगवान् शिव से की गई शिव महिमा के स्तोत्र के साथ ही शिव वंदना भी है, जिसमें उनके स्वरूप वर्णन के साथ ही इस वंदना से जीवन शिव सान्निध्य प्राप्त होगा, यह मान्यता है।

तस्मै नमः परमकारणकारणाय, दीप्तोज्जवलज्ज्वलितपिङ्गललोचनाय।
नागेन्द्रहारकृतकुण्डल भूषणाय, ब्रह्मेन्द्रविष्णुवरदाय नमः शिवाय॥1॥

जो कारण के भी कारण हैं (अग्निशिखा के समान) अति देदीप्यमान उज्ज्वल और पिंगल नेत्रोंवाले हैं, सर्प राजाओं के हार-कुंडलादि से भूषित हैं तथा ब्रह्मा, विष्णु और इंद्रादि को भी वर देनेवाले हैं, उन श्री शिव को नमस्कार करता हूँ।

श्रीमत्प्रसन्नशशिपन्नग भूषणाय, शैलेन्द्रजावदनचुम्बित लोचनाय।
कैलासमन्दर महेन्द्र निकेतनाय, लोकत्रयातिहरणाय नमः शिवाय॥2॥

शोभामय एवं निर्मल चंद्रकला तथा सर्प ही जिनके भूषण हैं, गिरिराज कुमारी अपने मुख से जिनके लोचनों का चुंबन करती हैं, कैलास और महेंद्रगिरि जिनके निवास स्थान हैं तथा जो त्रिलोकी के दुःख को दूर करनेवाले हैं, उन शिव को नमस्कार करता हूँ।

पद्मावदातमणिकुण्डलगोवृषाय, कृष्णागरुप्रचुरचन्दनचर्चिताय।
भस्मानुषक्तविकचोत्पलमाल्लिकाय, नीलांब्जकण्ठ सदृशाय नमः शिवाय॥3॥

जो स्वच्छ पद्मरागमणि के कुंडलों से किरणों की वर्षा करनेवाले, अगुरु और बहुत से चंदन से चर्चित तथा भस्म, प्रफुल्लित कमल और जूही से सुशोभित हैं, ऐसे नीलकमल सदृश कंठवाले शिव को नमस्कार है।

लम्बत्सपिङ्गलजटामुकुटोत्कटाय, दंस्ट्राकरालविकटोत्कट भैरवाय।
व्याघ्राजिनाम्बरधराय मनोहराय, त्रैलोक्यनाथनमिताय नमः शिवाय॥4॥

लटकती हुई पिंगल वर्ण जटाओं के सहित, मुकुट धारण करने से जो उत्कट जान पड़ते हैं, तीक्ष्ण दाढ़ों के कारण जो अति विकट और भयानक प्रतीत होते हैं,

व्याघ्रचर्म धारण किए हुए हैं, अति मनोहर हैं तथा तीनों लोकों के अधीश्वर भी जिनके चरणों में झुकते हैं, उन शिव को प्रणाम है।

दक्ष प्रजापति महामख नाशनाय क्षिप्रं महात्रिपुरदानवघातनाय।
ब्रह्मोर्जितोर्ध्वर्गकरोटिनिकृन्तनाय, योगाय योगनमिताय नमः शिवाय ॥5॥

दक्ष प्रजापति के महायज्ञ को ध्वंस करनेवाले, महान् त्रिपुरासुर को शीघ्र मार डालनेवाले, दर्पयुक्त ब्रह्मा के ऊर्ध्व मुख पंचम शिर का छेदन करनेवाले, योग स्वरूप योग से नमस्कृत शिव को मैं नमस्कार करता हूँ।

संसारसृष्टिघटनापरिवर्तनाय, रक्षः पिशाचगणसिद्धसमाकुलाय।
सिद्धोरग गृहगणेन्द्रनिशेविताय, शार्दूलचर्मवसनाय नमः शिवाय ॥6॥

जो कल्प-कल्प में संसार-रचना का परिवर्तन करनेवाले हैं, राक्षस, पिशाच और सिद्धगणों से घिरे रहते हैं, सिद्ध सर्प ग्रहण तथा इंद्रादि से सेवित हैं तथा जो व्याघ्रचर्म धारण किए हुए हैं, उन श्रीशिव को नमस्कार करता हूँ।

भस्माङ्गरागकृतरूपमनोहराय, सौम्यावदातवनमाश्रितमाश्रिताय।
गौरीकटाक्षनयनार्धनिरीक्षणाय, गोक्षीरधारधवलाय नमः शिवाय ॥7॥

भस्म रूपी अंग राग से जिन्होंने अपने रूप को अत्यंत मनोहर बनाया है, जो अति शांत और सुंदर वन का आश्रय करनेवालों के आश्रित हैं, पार्वतीजी के कटाक्ष की ओर जो बाकी चितवन से निहार रहे हैं और गो-दुग्ध की धारा के समान जिनका श्वेतवर्ण है, उन श्रीशिव को मैं नमस्कार करता हूँ।

आदित्यसोमवरूणानिलसेविताय, यज्ञाग्निहोत्रवर धूमनिकेतनाय।
ऋक्सामवेदमुनिभिः स्तुति संयुताय, गोपाय गोपनमिताय नमः शिवाय ॥8॥

सूर्य, चंद्र, वरुण और पवन से जो सेवित है, यज्ञ और अग्निहोत्र के धूम में जिनका निवास है, ऋक्समादि वेद और मुनिजन जिनकी स्तुति करते हैं, उन नंदीश्वर पूजित गौओं का पालन करनेवाले शिव को नमस्कार करता हूँ।

शिवाष्टकमिदं पुण्यं यः, पठेच्छिवसन्निधौ
शिवलोकमवाप्नोति, शिवेन सह मोदते॥9॥

जो इस पवित्र शिवाष्टक को श्रीशिव के समीप पढ़ता है, वह शिवलोक को प्राप्त होता है और शिव के साथ आनंद प्राप्त करता है।

———★———

शंकराचार्य विरचित शिव पञ्चाक्षर स्तोत्रम्

नागेन्द्रहाराय त्रिलोचनाय, भस्माङ्गरागाय महेश्वराय।
नित्याय शुद्धाय दिगम्बराय, तस्मै 'न' काराय नमः शिवाय॥1॥

जिनके कंठ में साँपों का हार है, जिनके तीन नेत्र हैं, भस्म ही जिनका अंगराग (अनुलेपन) है, दिशाएँ ही जिनका वस्त्र है (अर्थात् जो नग्न हैं), उन शुद्ध अविनाशी महेश्वर 'न' कार स्वरूप शिव को नमस्कार है।

मन्दाकिनीसलिल चन्दनचर्चिताय, नन्दीश्वरप्रमथनाथ महेश्वराय।
मन्दारपुष्प बहुपुष्पसुपूजिताय, तस्मै 'म' काराय नमः शिवाय॥2॥

गंगाजल और चंदन से जिनकी अर्चा हुई है, मंदार पुष्प तथा अन्य कुसुमों से जिनकी सुंदर पूजा हुई है, उन नंदी के अधिपति प्रमथ गणों के स्वामी महेश्वर 'म' कारस्वरूप शिव को नमस्कार है।

शिवाय गौरीवदनाब्जवृन्द, सूर्याय दक्षाध्वरनाशकाय।
श्री नीलकण्ठाय वृषभध्वजाय, तस्मै 'शि' काराय नमः शिवाय॥3॥

जो कल्याण स्वरूप हैं, पार्वतीजी के मुख कमल को विकसित (प्रसन्न) करने के लिए जो सूर्य स्वरूप हैं, जो दक्ष के यज्ञ का नाश करनेवाले हैं, जिनकी ध्वजा में बैल का चिह्न है, उन शोभाशाली नीलकंठ 'शि' कार स्वरूप शिव को नमस्कार करता हूँ।

वसिष्ठकुम्भोद्भगौतमार्च, मुनीन्द्र देवार्चित शेखराय।
चन्द्रार्कवनीश्वानरलोचनाय, तस्मै 'व' काराय नमः शिवाय॥4॥

वसिष्ठ, अगस्त और गौतम आदि श्रेष्ठ मुनियों ने तथा इंद्र आदि देवताओं ने जिनके मस्तक की पूजा की है; चंद्रमा, सूर्य और अग्नि जिनके नेत्र हैं, उन 'व' कार स्वरूप शिव को नमस्कार है।

यक्षस्वरूपाय जटाधराय, पिनाकहस्ताय सनातनाय।
दिव्याय, देवाय, दिगम्बराय, तस्मै 'य' काराय नमः शिवाय ॥5॥

जिन्होंने यक्ष रूप धारण किया है, जो जटाधारी हैं, जिनके हाथ में पिनाक है, जो दिव्य सनातन पुरुष हैं, उन दिगंबर देव 'य' कार स्वरूप शिव को नमस्कार है।

पञ्चाक्षरमिदं पुण्यं यः, पठेच्छिवसन्निधौ।
शिव लोक मवाप्नोति, शिवेन सह मोदते ॥6॥

जो शिव के समीप इस पवित्र पंचाक्षर का पाठ करता है, वह शिवलोक को प्राप्त करता है और वहाँ शिवजी के साथ आनंदित होता है।

□

‘शिव’ के वाहन नंदी का महत्त्व

शिव के गणों में ‘नंदी’ का विशिष्ट स्थान है। यह ही शिव का वाहन है, इसी कारण से जहाँ शिव होते हैं, वहाँ नंदी अवश्य होता है। पुराणों की मान्यता है कि शिव की अपार श्रद्धाभक्ति तथा असीम शांति को धारण करनेवाले नंदी शिव को बहुत प्रिय हैं। इसी कारण ‘नंदी’ को शिव को निहारते रहनेवाली दिशा में सदा स्थापित किया जाता है। यह भी कहा गया है कि जिस प्रकार शिव के वाहन ‘नंदी’ हैं, उसी प्रकार आत्मा का वाहन शरीर है। जिस प्रकार ‘नंदी’ की नजर सदा महादेव पर टिकी रहती है, उसी प्रकार मनुष्य की नजरों को भी अपनी आत्मा पर होना चाहिए। इसका परिणाम यह होगा कि हम बुरे कर्मों से बचेंगे और अच्छे कर्म करेंगे, दोषों से हमेशा दूर रहेंगे।

यह भी कहा जाता है कि भगवान् शिव तक प्रार्थनाएँ और याचनाएँ लोग नंदी के माध्यम से ही पहुँचाते हैं। इसी कारण मंदिरों में शिव के दर्शन के बाद लोग नंदी, जो शिव के सामने स्थापित होते हैं, प्रणाम करके उनके (नंदी के) कान में धीरे से अपनी प्रार्थना और मनोकामना कहते हैं, जिससे वह शिवजी तक पहुँचकर उनसे पूर्ण कराएँ। इससे शिव की कृपा से लोगों की मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं। इस कारण नंदी महत्त्वपूर्ण हैं। □

शिव-पूजन में वर्जित चीजें

भगवान् शिव की पूजन-सामग्री बहुत सहजता से वन से लेकर नगरों तक बिना किसी मूल्य के गाँवों में तथा बहुत कम मूल्य में नगरों में सहजता से मिल जाती है। धतूरा, कनेर, आक, आम, बेर, बाली, (गेहूँ, जौ की) चंदन, मदार, धतूरे के फूल शिव को सबसे अधिक प्रिय हैं। इन्हीं से अधिकतर जल अभिषेक करके इनकी पूजा की जाती है। शिव के पूजन में सिंदूर, कुमकुम, हल्दी और लालपुष्प से इनकी पूजा नहीं की जाती है, क्योंकि ये सौभाग्य के प्रतीक माने जाते हैं, शिवलिंग महाकाल का प्रतीक है, काल पर इन सौभाग्य द्रव्यों को अर्पित नहीं किया जाता है, क्योंकि दोनों का भाव विरुद्ध है, अतः इनका निषेध है। कथा है कि शिव पर केतकी का फूल भी नहीं चढ़ता है, क्योंकि ब्रह्मा ने उसे झूठे साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया था।

शिव के पूजन में शंखनाद भी नहीं किया जाता है। शंख की ध्वनि भूत, प्रेत, पिशाच जैसी नकारात्मक शक्तियों को दूर करती है, चूँकि ये सभी शिव के सेवक हैं। शिव ही नकारात्मक शक्तियों के स्वामी माने गए हैं, ये शिव से दूर न हो जाएँ, इस कारण पूजन के दौरान शंख की ध्वनि उत्पन्न करना वर्जित है। शिव को अपने सेवक और भक्त सबसे अधिक प्रिय हैं। उनकी दूरी शिव को नहीं भाती है, इस कारण पूजन में इसका विशेष ध्यान रखना चाहिए। शिव की पूजन विधि सहज है, सामग्री भी सहजता से उपलब्ध हो जाती है। इसी कारण शिव निर्धन तथा अभावग्रस्त लोगों में सर्वाधिक प्रिय और पूज्य भी हैं। थोड़े में ही प्रसन्न हो जाते हैं, इसीलिए अमीर-गरीब सभी को ये पूज्य और परम प्रिय हैं।

□

शिव से प्रार्थना

दुनिया दुःख से भरी हुई है, तुम बिन कौन उबारे!
दूर करो शिव प्रभु दुःख सबके, आए तेरे द्वारे।

लगे हैं सब अपने स्वारथ में, किसको किसकी चिंता।
अपने को काबिल बतलाने, करें और की निंदा॥
सबसे आशा टूट चुकी है, कोई नहीं हमारे।
दूर करो शिव प्रभु दुःख सबके, आए तेरे द्वारे॥

कोई साधन नहीं हमारे, कैसे करते पूजा।
बिनु साधन मिले, कृपा तुम्हारी और न कोई दूजा॥
सब आशाएँ जुड़ी तुम्हीं से, तुम्हीं हो एक सहारे।
दूर करो शिव प्रभु दुःख सबके, आए तेरे द्वारे॥

लगी दौड़ सुख संपत्ति के हित, नहीं किसी को किसी की चिंता।
निज हित के कारण तो प्रभु अब बन रहे देखो, लोग हैं हंता॥
अंधे हो गए सब स्वारथ में, इनको कौन सुधारे।
दूर करो शिव प्रभु दुःख सबके, आए तेरे द्वारे॥

मात-पिता हो गए बोझ अब, नहीं कोई सेवा करता।
इनसे पिंड छुड़ाने आतुर, जो कल तक थे इनके भरता॥

माता-पिता बेगाने हो गए, केवल पूत पियारे।
दूर करो शिव प्रभु दुःख सबके, आए तेरे द्वारे॥

राह बताने जो आए थे, वे सब भटक रहे हैं।
निज हित में होकर ये अंधे, अपना घर भरते हैं॥
नेत्र तीसरे से है आशा, जो दुष्टों को मारे।
दूर करो शिव प्रभु दुःख सबके, आए तेरे द्वारे॥

दुनिया दुःख से भरी हुई है, तुम बिन कौन उबारे।
दूर करो शिव प्रभु दुःख सबके, आए तेरे द्वारे॥

□

शिव भक्त हम

नागों की हम पूजा करते, करते हैं इनका सम्मान।
हैं तो जहर से भरे हुए यह, यद्यपि है हमको यह ज्ञान॥

हम उस शिव के सेवक हैं, जो विष पीकर जीवन देते।
नाग हैं चारों ओर हमारे, सब कमियों को हम सह लेते॥

हमीं उठाएँ इस पृथ्वी को, हैं नागों को इसका अभिमान।
इसीलिए ये जहर उगलते, इसे समझते अपनी शान॥

पालक विष्णु हमीं से पाते, हैं इस सागर में आराम।
इसीलिए लक्ष्मी भी अपनी, होते हैं जिससे सब काम॥

हम सब भोले बने हुए हैं, इसीलिए लिपटे हैं नाग।
गले माथ पर लिये हैं इनको, नहीं किया फिर भी विष त्याग॥

लेकिन हम तांडव कर सकते, इसका भी रखना सब ज्ञान।
उलट-पुलट सत्ता सब कर दे, नहीं करते फिर भी अभिमान॥

जीवन मूल्य हमें प्यारे हैं, इसीलिए हम दुःख भी सहते।
चाहे जितनी बाधाएँ हों, सीधी राह पर हम हैं चलते॥

कामदेव के वश में नहीं हम, नहीं लक्ष्मी के दास हैं।
वस्त्र विहीन भले ही हम सब, लेकिन मन में उजास है॥

हम अभाव में जीते आए, कुटिया में भी हम रह लेते।
सुख, दुःख, गरमी, सर्दी सबमें, हम तो अपना जीवन सेते॥

कभी न लेना धैर्य परीक्षा, वरना तुम पछताओगे।
कहीं खुला यदि नेत्र तीसरा, कभी न तुम बच पाओगे॥

हम हैं, शिव के भक्त, जान ले यह संसारी, इसीलिए ही
नागों की हम पूजा करते। करते हैं इनका सम्मान।
हैं तो जहर से भरे हुए यह यद्यपि है, हमको यह ज्ञान॥

□

शिव वर दो

जग में हो कल्याण सभी का, यह वर दो त्रिपुरारी।
सुख-शांति चहुँ दिशि में फैले, जो हो कृपा तुम्हारी॥

दीनहीन सब तुम्हें पियारे, तुम ही सबके राज दुलारे।
बेलपत्र, कनेर, मदार, धतूरा, मिले सहज जो तुम्हें हैं प्यारे॥

निर्धन भी कर ले तेरी पूजा, सदा सादगी तुमको प्यारी॥
सुख-शांति चहुँ दिशि में फैले जो हो कृपा तुम्हारी॥

नित जो शिव का ध्यान लगाता, उसका जीवन सफल हो जाता।
करते पूर्ण सभी आशाएँ, बनके सदा पिता और माता॥
सभी दुःखों को दूर करो प्रभु, दुःख से लेव उबारी।
सुख-शांति चहुँ दिशि में फैले जो हो कृपा तुम्हारी॥

विधि ने जो कुछ लिखा भाग्य में, पड़े भोगना उसे सभी को।
तुममें ही केवल ये शक्ति है, बदले जो इस विधि लेख को॥
आशाएँ सब पूर्ण करो अब, हे भोले भंडारी!
सुख-शांति चहुँ दिशि में फैले जो हो कृपा तुम्हारी॥

जो चाहो वर दे डालो तुम, तुम हो सभी शांति के दाता।
बिना लिये सबकुछ दे देते, तुम्हीं हो सबके सुख के दाता॥
इतनी कृपा करो प्रभु अब तो, दे दो जो चाहे संसारी।
सुख-शांति चहुँ दिशि में फैले जो हो कृपा तुम्हारी॥

नाथ ये वर दो हर जन-जन को, प्रेम बढ़े जन-जन के मन में।
जात-पात सब भेद छोड़कर, मिल-जुलकर सब रहे जगत् में॥
तुमसे ही यह विनय हमारी, सुन लो जगत् के पालनहारी।
सुख-शांति चहुँ दिशि में फैले जो हो कृपा तुम्हारी॥

जग में हो कल्याण सभी का, यह वर दो त्रिपुरारी।
सुख-शांति चहुँ दिश में फैले, जो हो कृपा तुम्हारी॥

□

कृपा करो शिव

पार्वती-शिव कृपा करो अब, दे दो यह वरदान।
सुखी रहें यहाँ सब संसारी, सब बन जाएँ महान॥

छोड़े निज स्वारथ के धंधे, बने आज सब जिस हित अंधे।
खोलो आँख बंद जो इनकी, उठें झुके जो उनके कंधे॥
अच्छे काम करें, सब मिलकर, बन के फिर इनसान।
पार्वती शिव कृपा करो अब, दे दो यह वरदान॥
सुखी रहें यहाँ सब संसारी, सब बन जाएँ महान।

भेजा था, इन्हें क्या करने को, क्या करने लग गए यहाँ।
जाने को कहाँ भेजा था तूने, पहुँच गए ये देखो कहाँ॥
स्वारथ में सब अंधे हो गए, भूले मानवता, ज्ञान, सम्मान।
पार्वती शिव कृपा करो अब, दे दो यह वरदान॥
सुखी रहें यहाँ सब संसारी, सब बन जाएँ महान।

समझ रहे निज को सब ज्ञानी, भटक रहे हैं बन के अज्ञानी।
नैतिकता की बात न कीजै, इतना गिरे नहीं कोई सानी॥
मार रहे सब एक दूजे को, भटका सारा जहान।
पार्वती शिव कृपा करो अब, दे दो यह वरदान॥
सुखी रहें यहाँ सब संसारी, सब बन जाएँ महान।

दीन–हीन बनकर देखो यह, लालच लोभ में सदा हैं भटके।
कभी न पूरी होती मंशा, रोज दिखाते खेल ये नट के॥
सच्ची बात बोला जो कोई, कभी न इन्हें सुहान।
पार्वती शिव कृपा करो अब, दे दो, यह वरदान॥
सुखी रहें यहाँ सब संसारी, सब बन जाएँ महान॥

दुःख में डूबा यह संसार, पड़ी है सबपे दुःख की मार।
अंधे होके मार रहे हैं, अपनों को अपने ही यार॥
कृपा करो प्रभु बंद हो यह सब, सुखी हो सारा जहान।
पार्वती शिव कृपा करो अब, दे दो यह वरदान॥
सुखी रहें यहाँ सब संसारी, सब बन जाएँ महान।

□

शिव का तीसरा नेत्र

शिव भोले भंडारी बाबा, शिव भोले भंडारी।
सभी दुःखों के तारनहारी, शिव भोले भंडारी॥

कैसे तेरी करें हम पूजा, नहीं कोई साधन पास।
चहुँ दिश घिरे हुए दुःखों से, रहते हैं सदा उदास॥
केवल तुमसे ही आशा है, अब तुम लेव उबारी।
शिव भोले भंडारी बाबा, शिव भोले भंडारी॥

मानव पशु बन गया आज है, एक दूजे को नोचे।
स्वारथ में होकर ये अंधे, नहीं औरों की सोचें॥
इनकी बुद्धि सुधारो बाबा, कृपा करो त्रिपुरारी।
शिव भोले भंडारी बाबा, शिव भोले भंडारी॥

जो ऊँचे सिंहासन बैठे, उन्हें नहीं कुछ भाए।
जिनसे मिलता लाभ इन्हें है, वह अपने, बाकी पराए॥
देकर इनको दंड प्रभु अब, इनको देव सुधारी।
शिव भोले भंडारी बाबा, शिव भोले भंडारी॥

मानव दानव आज बन गया, धन पद हित लड़ते हैं।
नैतिकता, चरित्र सब खोकर, अपना ही घर भरते हैं॥

क्या मरकर संग ले जाएँगे, लूटी जो संपत्ति सारी।
शिव भोले भंडारी बाबा, शिव भोले भंडारी॥

जीवन मूल्य जो धन थे अपने, खो गए आज सुबह ज्यों सपने।
नहीं किसी की कोई सुनता, लगे लूटकर सब घर भरने॥
नेत्र तीसरा खोल दो बाबा, मारो दुष्ट पचारी।
शिव भोले भंडारी बाबा, शिव भोले भंडारी॥
सभी दुःखों के तारनहारी, शिव भोले भंडारी॥

□

शिव का जाप

शिव, शिव, शिव, शिव, शिव, शिव ही नाम जपो जनहितकारी।
जीवन में बाधा न आएगी नाम ये है मंगलकारी॥

(1)

उठो प्रातः जागो सब कोई, नित्य कर्म कर ध्यान लगाओ।
आलस्य को त्यागो, जीवन से बाधाओं को दूर भगाओ॥
मिल-जुलकर सभी लगो काम में, जीवन में खुशियाँ लो सारी।
शिव, शिव, शिव, शिव, शिव, शिव ही नाम जपो जन हितकारी।

(2)

है सारा संसार तुम्हारा, इसे बनाओ सबका प्यारा।
अपना ही परिवार सभी हैं, इनसे मत करना तुम किनारा॥
सुख बाँटों जन-जन में जाकर, बँटेगा दुःख जब आए बारी।
शिव, शिव, शिव, शिव, शिव, शिव ही नाम जपो जन हितकारी।

(3)

क्या लाए क्या ले जाओगे, करो विचार सदा तुम मन में।
अच्छे कर्म जीवन आधार हैं, यही जाएँगे तेरे संग में॥
करके मदद देव सुख सबको, याद रखेंगे सदा तुम्हारी।
शिव, शिव, शिव, शिव, शिव, शिव ही नाम जपो जन हितकारी॥

(4)

ऊँच-नीच नहीं बड़े-छोटे हैं, सब समान हैं संसारी।
जाना इस संसार से सबको, आज मेरी कल तेरी बारी॥
मत भूलो तुम शिव के रूप हो, तुममें उनकी ताकत सारी।
शिव, शिव, शिव, शिव, शिव, शिव ही नाम जपो जन हितकारी॥

(5)

शिव का ईश जो देता छोड़, बन जाता वह 'शव' तत्काल।
मरे हुए से नहीं हो सकता, किसी का भला किसी भी काल॥
'शव' को छोड़ सब शिव ही बनना, तभी सुखी होंगे सब संसारी।
शिव, शिव, शिव, शिव, शिव, शिव ही नाम जपो जन हितकारी॥

नाम जपो जन हितकारी, जीवन में बाधा न आएगी।
नाम है ये मंगलकारी।

□

शिव का ध्यान

जीवन में कुछ पाना चाहो, कर लो शिव का ध्यान।
सबकुछ मिलेगा जो चाहोगे, होगा जग में नाम॥

(1)

सबका जीवन यही सँवारें, दुःख कष्टों से सदा उबारें।
यदि हो जाए कृपा इस शिव की, खुशियाँ खड़ी हों तेरे द्वारे॥
कोई रोक सके न, तेरी प्रगति हो सुबहो-शाम।
जीवन में कुछ पाना चाहो, कर लो 'शिव' का ध्यान॥

(2)

भोले, शंकर, शिव कुछ भज लो, जाकर इनकी पूजा कर लो।
विनय करो तुम हाथ जोड़कर, खुशियों से झोली तुम भर लो॥
आशीर्वाद मिले जो उनका, बनेंगे बिगड़े काम।
जीवन में कुछ पाना चाहो, कर लो 'शिव' का ध्यान॥

(3)

शिव का भक्त जो है संसारी, बाधाएँ डरतीं उससे भारी।
काल भैरव सेनापति उनके, रक्षा करती फौज सारी॥
शिव भक्तों के कष्टों का ये सब, मिलकर करते काम तमाम।
जीवन में कुछ पाना चाहो, कर लो 'शिव' का ध्यान॥

(4)

चलना सदा राह जो सच्ची, कठिन डगर यह जीवन पथ की।
कष्ट भले मिले तुम्हें राह में, नहीं छोड़ना राह ईमान की॥
धन वैभव आएगा द्वारे, बिना लिये कुछ दाम।
जीवन में कुछ पाना चाहो, कर लो 'शिव' का ध्यान॥

(5)

नहीं आभूषण, नहीं कोई सेवा, बिन लागत मिलता है मेवा।
जो इस शिव का ध्यान है करता, सबकुछ दे देता ये देवा॥
कर लो, कर लो भक्ति कर लो, मन के चारो धाम।
जीवन में कुछ पाना चाहो, कर लो 'शिव' का ध्यान।
सबकुछ मिलेगा जो चाहोगे, होगा जग में नाम॥

□

शिव का सहारा

आए शिव हम तेरे द्वारे, अब केवल तुम ही हो सहारे।
जीवन नाव फँसी है भँवर में, तुम बिन कौन उबारे॥

(1)

टूट गई सारी आशाएँ, किसको अपना कष्ट बताएँ।
आसपास नहीं कोई अपने, दुःख अपना यह किसे सुनाएँ॥
इतनी उलझ गई जिंदगानी तुम बिन कौन सुधारे।
आए शिव हम तेरे द्वारे, अब केवल तुम ही हो सहारे॥

(2)

दुनिया यह सब ही स्वारथ की, नहीं कोई कीमत है नाते की।
भटक रहे सब इस दुनिया में, बची नहीं कोई रीति-प्रीत की॥
मिलता आज नहीं है कोई, जो स्वारथ को बढ़कर मारे।
आए शिव हम तेरे द्वारे, अब केवल तुम ही हो सहारे॥

(3)

कपट चाल चल रहे लोग सब, करें भरोसा किस पर बोलो अब।
धन के लिए हैं सबकुछ करते, दूजे हित की बात करें कब॥
घिरा अँधेरा है चहुँदिश में, इससे कौन उबारे।
आए शिव हम तेरे द्वारे, अब केवल तुम ही हो सहारे॥

(4)

तेरे द्वारे जो कोई आता, खाली हाथ न वापस जाता।
भेदभाव नहीं तुम कोई करते, सबसे तेरा एक सा नाता॥
देवा! तुम तो समदृष्टि हो, जन-जन सभी तुम्हारे।
आए शिव हम तेरे द्वारे, अब केवल तुम ही हो सहारे॥

(5)

खुशियाँ भर दो हर आँगन में, रहे न कोई किसी अभाव में।
सबकी सुन लो अर्जी इतनी, करो देर ना, अब देने में॥
बिन तेरी कृपा दुःखों में रहेंगे, तुझको भक्त जो प्यारें।
आए शिव हम तेरे द्वारे, अब केवल तुम ही हो सहारे॥

(6)

अब केवल तुम ही हो सहारे, जीवन नाव फँसी है भँवर में।
तुम बिन इसको कौन उबारे, आए शिव हम तेरे द्वारे॥
आए शिव हम तेरे द्वारे, अब केवल तुम ही हो सहारे॥

□

शिव से विनय

भोले शंकर हे त्रिपुरारी, महिमा तेरी सबसे न्यारी।
दूर करो प्रभु जन-जन के दुःख, सुन लो 'शिव' अब विनय हमारी ॥1॥

जो भी तेरा ध्यान है धरता, नहीं किसी से वह है डरता।
मात-पिता प्रभु तुम ही सबकुछ, नहीं किसी का ध्यान करता॥
सबकुछ मिल जाता है उसको जो आता है शरण तुम्हारी।
सुन लो 'शिव' अब विनय हमारी ॥2॥ भोले···

औघड़दानी तुम हो दाता, सबके तुम ही भाग्य विधाता।
जो सब के हित कार्य है करता, तेरी कृपा सदा वो पाता॥
कमी न आएगी उसके घर, जिस पर कृपा दृष्टि हो जारी।
सुन लो 'शिव' अब विनय हमारी ॥3॥ भोले···

हो गरीब के तुम्हीं सहारे, जो है साधनहीन बेचारे।
उनके सब दुःख दूर हो करते, नहीं है जिनके कोई सहारे॥
सब पर कृपा बराबर करते, धनी हो, चाहे हो कोई भिखारी।
सुन लो शिव अब विनय हमारी ॥4॥ भोले···

'रावण' ने तुमसे शक्ति थी पाई, 'राम' ने कृपा तुम्हारी पाई।
मार दिया रावण को जाकर, सत्य न्याय को विजय दिलाई॥

नैतिक मूल्य तुम्हें प्यारे हैं, दुष्टों को देते हो मारी।
सुन लो शिव अब विनय हमारी ॥5॥ भोले···

हो प्रसन्न तुम सब दे देते, तुम्हें कष्ट आए नहि चेते।
पा वरदान भस्मासुर बनते, स्वारथ हित अनुचित कर लेते॥
मत वरदान दो इन दुष्टों को, जिन पापियों में कर्म है कारी।
सुन लो शिव अब विनय हमारी ॥6॥ भोले···

भोले शंकर, हे! त्रिपुरारी महिमा तेरी सबसे न्यारी।
दूर करो प्रभु जन-जन के दुःख, सुन लो शिव अब विनय हमारी॥

□

शिव रूप नर

जन-जन में शिव तुम्ही समाए, सब संसार में तेरे साए।
जिससे तुम हो अलग हो जाते, वह तो 'शिव' से 'शव' बन जाए।।
जन-जन में शिव तुम्हीं समाए॥1॥ सब संसार···

है कल्याण की तेरी मूरत, सब में दिखती तेरी सूरत।
मानव देव स्वरूप सभी हैं, होती सब में तेरी सीरत॥
जो जन-जन से प्रेम करेगा, उसके भाग्य सदा खुल जाएँ।
जन-जन में शिव तुम्हीं समाए॥1॥ सब संसार···

करुणा, दया है साथी तेरे, सुख रहता है तुम्हीं को घेरे।
तुम ही हो सबके भाग्य विधाता, तोड़ देते ब्रह्मा के घेरे॥
जीवन सफल हो जाए उसका जिस पर दृष्टि तेरी हो जाए।
जन-जन में शिव तुम्हीं समाए॥1॥ सब संसार···

वस्त्र आभूषण नहीं तुम्हें प्यारे, दीनहीन सब तेरे दुलारे।
जिनका नहीं है संबल कोई, वे सब तुझे प्राण से प्यारे॥
ऐसी कृपा हो जाती तेरी, भाग गरीबी पास न आए।
जन-जन में शिव तुम्हीं समाए॥1॥ सब संसार···

कैसे रहे तुम्हीं सिखलाते, दुःख में रहो सदा मुसकराते।
स्थायी नहीं कुछ जीवन में, दुःख-सुख तो हैं आते-जाते॥
कोई पुकारे जब भी तुमको, आ जाते हो बनकर साये।
जन-जन में शिव तुम्हीं समाए॥1॥ सब संसार···

प्रभु तेरी बात निराली ऐसी, नहीं देखी कोई सूरत वैसी।
नाग, मोर, अरु नंदी, सिंह संग खुशियाँ संग लिये रहो जैसी॥
दे जाते हो सीख सभी को, सब संग जीवन कैसे चलाए।
जन-जन में शिव तुम्हीं समाए॥1॥ सब संसार···

□

भज लो शिव को

भज लो, भज लो शिव को भज लो, चंद दिनों का मेला है।
धन, पद, संगी, साथ न जाएँ, जाना संग न धेला है॥

आए थे, मुट्ठी में सँभाल के, ईश्वर के सब गुणों के साथ।
छोड़ दिए सारे गुण आकर, भूल गए जीवन का पाथ॥
जीवन को नहीं समझ सके हैं, जाना हमें अकेला है।
भज लो, भज लो शिव को भज लो, चंद दिनों का मेला है।

पास थे सारे गुण बचपन में, करते थे तुम सबसे प्रेम।
आई जवानी बने चतुर तुम, भूल गए 'शिव' के नेम॥
स्वारथ में तुम इतना डूबे, धन के बन गए चेला है।
भज लो, भज लो शिव को भज लो, चंद दिनों का मेला है।

माया के पीछे जो दौड़ा, सदा दुःखों से नाता जोड़ा।
कभी शांति नहीं मिलती उसको, जीवन में बन जाता घोड़ा॥
पद, धन की अब दौड़ को छोड़ो, यह तो दुःख का खेला है।
भज लो, भज लो, शिव को भज लो, चंद दिनों का मेला है।

अपने शिव कैसे हैं रहते, कभी किसी से कुछ नहीं कहते।
सबको सुख देने की खातिर कितनी तरह के कष्ट हैं सहते॥
जीवन लक्ष्य बना लो इसको, छूटे सभी झमेला है।
भज लो, भज लो, शिव को भज लो, चंद दिनों का मेला है।

रखती याद उसे है दुनिया, जो औरों के लिए जिया हो।
इस शरीर को एक दिन जाना, अमर वही, जो सब हित किया हो॥
उसको मार न सकता कोई, जिसने पर हित दुःख झेला है।
भज लो, भज लो शिव को भज लो, चंद दिनों का मेला है।
धन, पद, संगी, साधन न जाएँ, जाना संग न धेला है॥

□

शिव आरती

शिव कल्याणकारी, जय 'शिव' मंगलकारी।
करें आरती हम सब तेरी, कष्ट हरनकारी॥

मात, पार्वती संग विराजे, नीलकंठ में नाग हैं साजे।
जटे से बहती गंगा शिर से, सदा हाथ में डमरू बाजे॥
सब बाधाएँ दूर करो प्रभु, जगपालनहारी।
करें आरती हम सब तेरी, कष्ट हरनकारी॥

पुत्र कार्तिकेय, गणेश हैं प्यारे, हैं सबके ये सदा दुलारे।
हमको राह बतानेवाले, दुःख-सुख के हैं यही सहारे॥
सबको कृपा मिले इन सबकी, यह वर दो त्रिपुरारी।
करें आरती हम सब तेरी, कष्ट हरनकारी॥

'नंदी' वृंदी संग तुम्हारे, काल भैरव संग रक्षक सारे।
जीवन में मिलता उसे सबकुछ, जो आएगा तेरे द्वारे॥
तुम्हीं आश हो और नहीं कोई, सुन लो विनय हमारी।
करें आरती हम सब तेरी, कष्ट हरनकारी॥

चारों ओर हैं दुःख बाधाएँ, किसको अपना कष्ट बताएँ।
कोई नहीं सुनता आज किसी की, किसको अपना मीत बनाएँ॥

चहुँ दिश स्वारथ का है अँधेरा, किससे कहें पुकारी।
करें आरती हम सब तेरी, कष्ट हरनकारी॥

तुम हो औघड़दानी दाता, मेट सको तुम लेख विधाता।
तुम पालक, संहारक दोनों, तुम ही पिता तुम्हीं हो माता॥
जन-जन के दुःख दूर करो प्रभु, आए सरन तिहारी।
करें आरती हम सब तेरी, कष्ट हरनकारी॥

शिव कल्याणकारी, जय शिव मंगलकारी।
करें आरती हम सब तेरी, कष्ट हरनकारी॥

---★---

शिव की कृपा से जो ये बारह गीत लिखे हैं। यह जीवन में जो आज हो रहा है, उसका प्रतिबिंब हैं। जीवन मूल्य खत्म हो रहे हैं, चारों ओर स्वार्थ तथा निज हित ही हावी हो गया है। परिणामस्वरूप चारों ओर अशांति तथा दुःख का वातावरण है। विचारणीय है—क्या कारण है कि सबसे अधिक धनी एवं पद वाला व्यक्ति भी दुःखी और अशांत है? गरीब तो अभाव के कारण कष्ट में है, लेकिन जो साधनसंपन्न हैं, वे क्यों कष्ट में हैं? यह मनुष्य के पतन की ओर जाने की परछाईं है, उससे बचने की आवश्यकता है, शव से 'शिव' बनने की आवश्यकता है, जिससे समाज में सुख-शांति आए और सभी का जीवन सुखमय बने, यह सब अच्छे विचारों, आपस में प्रेम तथा भाईचारे की भावना से ही हो सकता है।

इस दिशा में इन गीतों के द्वारा मेरा यह एक छोटा सा प्रयास है, आशा है, आप सब को यह उचित लगेगा। □

विदेशों में स्थित शिव मंदिरों की जानकारी

भारतवर्ष के बाहर शिवलिंग तथा पार्वती के मंदिर निम्नलिखित स्थानों में स्थापित हैं—

(1) मक्का में दो शिवलिंग हैं।

(2) ग्लासगो (स्कॉटलैंड) में स्वर्णाच्छादित (सोने से) शिवलिंग है।

(3) तुर्किस्तान के बावलिन शहर में बारह सौ फीट ऊँचा शिवलिंग है।

(4) हेड्रोपोलिस शहर में तीन सौ फीट ऊँचा शिवलिंग है।

(5) दक्षिणी अमेरिका के ब्राजील देश में अनेक शिवलिंग हैं।

(6) कारिथ (यूरोप) में पार्वतीजी का मंदिर है।

(7) मेक्सिको में अनेक शिवलिंग हैं।

(8) कंबोडिया में प्राचीनकाल में राजा राजेंदु वर्मा द्वारा स्थापित शिवलिंग है।

(9) जावा और सुमात्रा देशों में अनेक शिवलिंग हैं।

(10) इंडोचाइना में अनेक भव्य देवालय एवं प्राचीन शिलालेख हैं।

इन शिलालेखों में शिव-विषयक लेख ही अधिक हैं, जिनके आरंभ में लिखा रहता है—'ॐ नमः शिवाय!'

सर विलियम जोन्स ने कहा है कि "मिस्र का सुप्रसिद्ध स्थल और आयरलैंड का धर्मस्थल शंकर का स्मारक लिंग ही है।"

(प्रे.डा.ता.र. उपासनी) (शिवोपासना अंक (क), पृ. 355)

□□□
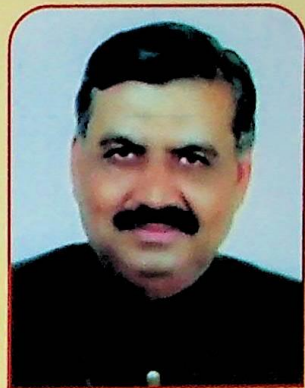
आनंद पयासी

शिक्षा : एम.ए. (हिंदी, अर्थशास्त्र), पी-एच.डी. (हिंदी, अर्थशास्त्र), एल-एल.बी.।

रचना-संसार : 'कबीर, देखो जग बौराना', 'नानक, हउमैं रोग बुरे', 'शेख फरीद, इहतन होसी खाक', 'गहरे पानी पैठ', 'गुरु गोविंद सिंह, जिन प्रेम कियो तिनहीं प्रभु पायो', 'रविदास, इह जनम तुम्हारे लेखे', 'अनगढ़, सुनो भाई साधो', 'शहीद की बेटी', 'विधानमंडल गठन और प्रक्रिया'।

सम्मान-पुरस्कार : छत्तीसगढ़ राज्य में 'गंधमुनिनाम साहिब' पर कबीर सम्मान; मध्य प्रदेश शासन द्वारा साहित्य के लिए शिखर सम्मान। मध्य प्रदेश विधानसभा के प्रमुख सचिव के पद से सेवानिवृत्त।